卐 ॐगंगणपतये नमः 卐

!! श्रीराम !!

श्रीराम जय राम जय जय राम

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुख मूल।।

सम्पादक मण्डल

पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा
डॉ0 भगवान दास पटैरया
श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'
श्री राजेश बैरागी, 'पत्रकार'

स्मारिका

विक्रमी संवत् 2083 सन् 2026–2027

वार्षिक अंक – 33

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

पंजीकृत कार्यालय : 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली –110061
स्थानीय कार्यालय : ए–447, सैक्टर –47, नोएडा –201 303
वेबसाइट –www.shriramcharit.com ई–मेल -contactus@shriramcharit.com
दूरभाष – 0120–3274619
चल– 9811056467

मुद्रक : SHREE JI PAPER SALES
D-380, सैक्टर 10, नोएडा–201301
फोन :9350042633 | 9205573061
ईमेल : shreejipapersalesnoida@gmail.com

पाठकों से निवेदन

स्मारिका का यह वार्षिक अंक–33 आपके हाथ में है। हमारा प्रयास रहा है कि इसमें भगवान श्रीरामजी के आदर्शों को प्रतिपादित करते हुए ऐसे लेख प्रकाशित किए जाएँ, जिनसे समाज में नैतिक मूल्यों का उत्थान हो। इस दिशा में हम कहाँ तक सफल हुए, यह आप ही बता सकते हैं। आशा करते हैं कि आप पत्रिका पढ़कर हमें अपना लेख/अपनी प्रतिक्रिया अवश्य भेजेंगे, ताकि हम अगले अंक में उसे समाहित कर सकें। लेख के संदर्भ में निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय हैं–

1. **लेख श्रीरामचरितमानस में वर्णित प्रसंगों पर तथा उसका शीर्षक यथासंभव चौपाई, दोहा आदि पर आधारित हो।**
2. लेख में उद्धरित दोहा–चौपाई आदि गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'श्रीरामचरितमानस' के अनुसार हों। कृपया संदर्भ निम्नांकित प्रकार से अंकित करें।
   जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।। (5/1/1)
   (5/1/1) का आशय है, पाँचवें काण्ड (सुंदरकाण्ड) के पहले दोहे की पहली चौपाई। सातों काण्डों को क्रमशः इस प्रकार से इंगित करें:–1. बालकाण्ड, 2. अयोध्याकाण्ड, 3. अरण्यकाण्ड, 4. किष्किंधाकाण्ड, 5. सुंदरकाण्ड, 6. लंकाकाण्ड एवं 7. उत्तरकाण्ड।
3. लेख bpateria@gmail.com पर अथवा 9899004263 पर whatsapp या A 447, सैक्टर–47, नोएडा–201303 पर डाक से भी भेज सकते हैं।

स्मारिका के प्रकाशन में विज्ञापन से प्राप्त धन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। अनुरोध है कि आप भी अपने संस्थान का विज्ञापन भेजकर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

विज्ञापन दरें इस प्रकार से हैं–

क्रमांक	विवरण	राशि (रुपयों में)
1.	प्रथम पृष्ठ के पीछे (दूसरा कवर पेज)	35,000
2.	अंतिम पृष्ठ (चौथा कवर पेज)	30,000
3.	अंतिम पृष्ठ के पीछे (तीसरा कवर पेज)	25,000
4.	पत्रिका के अन्दर पूर्ण पृष्ठ	15,000
5.	पत्रिका के अन्दर आधा पृष्ठ	10,000

पाठकों से प्राप्त सहयोग राशि का योगदान भी इसके प्रकाशन में सराहनीय है। इसे भेजने हेतु विवरण निम्नांकित है। ''श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति'' के नाम 'भारतीय स्टेट बैंक, सैक्टर 31, नोएडा की शाखा में चालू खाता सं0 35299035590, ब्रांच कोड : 15971, IFS Code : SBIN0015971 विज्ञापन–प्रकाशन राशि भी इसी खाते में जमा करा सकते हैं। समिति के पेटीएम का आईकॉन (क्यूआरकोड) पृष्ठ सं0 10 पर दिया गया है। इसको स्कैन करके भी यूपीआई के माध्यम से समिति के खाते में राशि जमा की जा सकती है।

कृपया सहयोग राशि अथवा विज्ञापन–प्रकाशन राशि भेजकर हमें उपर्युक्त ईमेल या 09899004263 पर फोन या SMS करके सूचित करने का अनुग्रह करें, ताकि तदनुसार प्राप्ति रसीद जारी की जा सके।

अध्यक्ष की ओर से

प्रिय श्रीरामचरितमानस प्रेमियो!

आजकल हमारे देश में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में पाश्चात्य संस्कृति का तेजी से प्रभाव बढ़ रहा है। हम अपनी शिक्षा, व्यवहार, समाज के प्रति कर्तव्य, धर्म तथा सेवा भावना से विमुख होकर मानव–जाति का अहित कर रहे हैं। आज प्रेम और भाईचारे का स्थान हिंसा एवं वैमनस्य ने ले लिया है, जिसका प्रमुख कारण यह है कि अत्यधिक सांसारिक वैभवों को प्राप्त करने की होड़ लगी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में भी आपसी सद्भाव बढ़े, जन–जन में ईश्वरीय आस्था तथा भावी पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत हों, इसी उद्देश्य से 'श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति, नोएडा' की सन् 1990 में स्थापना हुई, जिसका अगस्त 2015 को श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति में विलय हो गया है। हमारा उद्देश्य श्रीरामचरितमानस पाठ, भगवन्नाम संकीर्तन एवं प्रवचनों के माध्यम से मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीरामचन्द्रजी के पावन चरित्रों का प्रचार–प्रसार कर समाज एवं धर्म की सेवा करना है। इसके द्वारा हम सभी का कल्याण होगा।

यहाँ पाठकों के मन में यह शंका उठनी स्वाभाविक है कि भगवान श्रीकृष्ण का अवतार भी तो धर्मोत्थान के लिए हुआ था, फिर धर्म की सेवा करने के लिए भगवान श्रीराम के चरित्रों का प्रचार–प्रसार ही क्यों? भगवान श्रीकृष्ण की लीलायें अलौकिक हैं और रास लीला आदि कुछ लीलायें तो इतनी गूढ़ हैं कि आम आदमी की समझ से परे होने के कारण अनुकरण करने योग्य नहीं हैं, परन्तु भगवान श्रीराम की लीलायें अलौकिक होते हुए भी लौकिक हैं। साथ ही बहुत ही सहज, सरल और अनुकरणीय हैं, इसलिए वे सर्व साधारण के लिए ग्राह्य हैं। इस भाव को ध्यान में रखकर हम श्रीराम के चरित्रों का प्रचार–प्रसार करते आ रहे हैं।

यह समिति प्रतिवर्ष श्रीराम जन्ममहोत्सव एक बृहद् आयोजन के रूप में आयोजित करती है। इस कड़ी में 34वाँ कार्यक्रम महाराजा अग्रसेन भवन, सैक्टर–33, नोएडा में विक्रम संवत् 2083, चैत्र शुक्ल नवमी गुरुवार तदनुसार, 26 मार्च 2026 को आयोजित हो रहा है, जिसमें कथा व्यास श्री किशोरी शरण 'बैजूजी महाराज' श्रीरामकथामृत पान कराएँगे। यह समिति अपने स्थापना काल सन् 1990 से 2025 तक 578 मानस पाठ, प्रवचनों, संकीर्तन आदि के कार्यक्रम आयोजित करा चुकी है। ऐसे पुनीत कार्य करने के लिए जगन्नियंता जगदीश्वर भगवान श्रीराम हमें शक्ति एवं प्रेरणा प्रदान करें, जिससे ऐसे ही कार्यक्रम भविष्य में भी होते रहें, ऐसी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है।

श्रद्धालुओं से निवेदन है कि समय–समय पर होने वाले धार्मिक समारोह में उपस्थित होकर धर्म–लाभ प्राप्त करें।

समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ एवं प्रवचन

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत) द्वारा समय–समय पर श्रीरामचरितमानस अखण्ड पाठ/ सुन्दरकाण्ड पाठ, प्रवचन (सत्संग) संकीर्तन आदि का आयोजन किया जाता रहा है। इस क्रम में सन् 1990 से 2025 तक 578 कार्यक्रम आयोजित किये गये, इनका विवरण समिति की विगत वर्षों की स्मारिका में प्रकाशित किया गया है। पिछले वर्ष सन् 2025 में 17 कार्यक्रम आयोजित हुए, जिनका विवरण निम्नांकित है–

क्र.सं.	दिनांक	नाम व पता जहाँ पर कार्यक्रम आयोजित हुए
1.	05–01–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
2.	19–01–2025	श्रीमती सीमा चौबे, एफ–13, सैक्टर–20, नोएडा
3.	19–01–2025	श्रीमती ममता गुप्ता, एल0आई0सी0, नोएडा
4.	02–02–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
5.	02–03–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
6.	06–04–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
7.	04–05–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
8.	17–06–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
09.	06–07–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
10.	03–08–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
11.	03–09–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
12.	05–10–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
13.	02–11–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
14	07–12–2025	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
15.	25–12–2025	श्री बिपिन कौल, फ्लैट सं–412, Aralias सैक्टर–42, गुरुग्राम।

श्रीरामकथा ज्ञान–यज्ञ कार्यक्रम

क्र.सं.	दिनांक	कार्यक्रम	स्थान	कथा व्यास
1.	06.04.2025	श्रीराम जन्ममहोत्सव	अग्रसेन भवन, सै0–33, नोएडा	मानस कोविद पं. देवेन्द्र दुबे
2.	31.07.2025	तुलसी जयंती समारोह	श्रीराम मंदिर सी ब्लॉक सैक्टर–36, नोएडा	पं. श्याम स्वरूपजी मनावत

इस अंक में

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
01.	अध्यक्ष की ओर से		003
02.	समिति द्वारा आयोजित कार्यक्रम		004
03.	समिति के सदस्यों की सूची		007
04.	समिति के PayTm का ऑइकॉन (Qr Code)		010
05.	पाठकों के विचार		011
06.	श्रीराम जन्ममहोत्सव की झलकियाँ	कथा व्यास : मानस कोविद पं. देवेन्द्र दुबे	015
07.	तुलसी जयंती समारोह	कथा व्यास : मानस मर्मज्ञ पं. श्यामजी मनावत	020
08.	दुःख निवृत्ति में सहायक 'मानस' के प्रसंग	पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	025
09.	ज्ञान–भक्ति और शरणागति	पं. दिनेश्वर मिश्र	032
10.	तुलसी–मानस के श्रीराम	राष्ट्रपति सम्मानित डॉ0 हरिओम तत्सत् ब्रह्म शुक्ल	037
11.	करुणासागर श्रीराम हरे (कविता)	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	045
12.	अनुकरणीय है सीताजी की सेवापरायणता	श्री अवध किशोर दूबे	048
13.	मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा	श्री कैलाश त्रिपाठी	051
14.	अनन्य भक्ति विवेचना	डॉ. सह्रदय नारायण उपाध्याय	059
15.	श्रीराम हमारे साथ रहें (कविता)	श्री राम किंकर सिंह	063
16.	राजाराम का समाजवाद	आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त	064
17.	गएँ सरन प्रभु राखिहैं	श्री देवेन्द्र शर्मा	070
18.	श्रीराम–जन्मभूमि मंदिर अयोध्या	श्रीमती राजवती शर्मा	079
19.	चित्रकूट की आध्यात्मिक भूमिका	श्री श्रवण कुमार पाण्डे	084
20.	जगत–मोहिनी माया	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	088
21.	श्रीराम की लोकप्रियता	पं. दिनेश चन्द्र शर्मा	096
22.	जनक–नंदिनी जानकी (कविता)	पं. राजेश तिवारी 'मक्खन'	100
23.	मानस में अलंकारों की छटा	श्री सचिन शर्मा	101
24.	मानस में राजनीति, युद्धनीति एवं प्रबंधन	श्री सुरेश तिवारी	112

25.	बैर न बिग्रह आस न त्रासा	डॉ. भगवान दास पटैरया	118
26.	राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी	राधा माधव शरण–निम्बार्क वैष्णव	125
27.	बालमीकि आश्रम प्रभु आए	श्री प्रमोद कुमार शर्मा	128
28.	बंदउँ नाम राम रघुबर को	पं. राम नरेश तिवारी 'पिण्डीवासा'	135
29.	मानस में नारी–धर्म	श्रीमती कुसुम पटैरया	139
30.	आदिदेव सूर्य–शिष्य श्रीहनुमानजी	श्रीमती ज्योत्सना प्रसाद	145
31.	भगवान मैंने तुम्हें भुलाया (कविता)	डॉ. भगवान दास पटैरया	148
32.	भगवन्लीला में लक्ष्मणजी की भूमिका	श्रीराम जन्म सिंह	149
33.	अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता	पं. राजेश तिवारी 'मक्खन'	155
34.	बताओ तब क्या होगा? (कविता)	पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	161
35.	श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति का वर्ष 2024–25 का आय–व्यय विवरण		162
36.	श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र		163
37.	श्रीरामशलाका प्रश्नावली		171
38.	विक्रम संवत् 2083 के व्रत, पर्व, त्योहार एक दृष्टि में		174
39.	विक्रम संवत् 2083 के व्रत, पर्व, त्योहारों की सूची		175
40.	आरती एवं वंदना		189
41.	श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री		196

सूचना

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति एवं गीता रामायण समिति, नोएडा के संयुक्त तत्वावधान में श्रीराम मंदिर, सी ब्लॉक, सैक्टर–36, नोएडा में प्रत्येक माह के प्रथम रविवार को सायंकाल वेला में (ग्रीष्म ऋतु में सायं 6 से 7 बजे तथा शिशिर ऋतु में सायं 5 से 6 बजे तक) श्रीरामचरितमानस की भक्तिपूर्ण प्रेरणाप्रद चौपाइयों का गायन एवं 'श्रीराम जय राम जय जय राम' संकीर्तन होता है। निवेदन है कि सभी सुधीजन इष्ट मित्रों सहित सम्मिलित होकर धर्म लाभ प्राप्त करें।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति पंजीकृत
सदस्यों की सूची

क्र.सं.	नाम सदस्य	पता	दूरभाष	पद
1.	पं0 दिनेशचन्द्र शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा–201303	9811056467	अध्यक्ष
2.	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	216, जी0जी0 हॉस्टल वाली गली होशियारपुर, सै0–51, नोएडा	9311384212	उपाध्यक्ष
3.	डॉ0 भगवानदास पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9899004263	महासचिव
4.	डॉ0 रविन्द्रकुमार शर्मा	593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली–110061	9911307799	सचिव
5.	श्री लीलू राम वर्मा	सी–49, सै0–23, नोएडा	9312280743	संयुक्त सचिव
6.	श्री सूरजभान शर्मा	ए–141, सै0–20, नोएडा	8527132634	कोषाध्यक्ष
7.	श्री विनोद शर्मा	ए–19, सै0–22, नोएडा	9891117721	कार्यकारी सदस्य
8.	श्री भिक्कीलाल शर्मा	ए–105, सै0–20, नोएडा	9810836348	कार्यकारी सदस्य
9.	श्रीमती नीलम श्रीवास्तव	एम–126, सै0–25, नोएडा	8800439949	कार्यकारी सदस्य
10.	श्री मांगेराम भारद्वाज	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9999232019	कार्यकारी सदस्य
11.	श्री राधेश्याम शर्मा	ए–55, सै0–27, नोएडा	9999930102	कार्यकारी सदस्य
12.	श्री अजय कुमार शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा	9911220088	कार्यकारी सदस्य
13.	श्री सी0एस0 भोगल	सी–2/103, सै0–36, नोएडा	9811026745	कार्यकारी सदस्य
14.	डॉ0 अंकित अवाना	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9871775563	कार्यकारी सदस्य
15.	श्री हुकमचन्द्र शर्मा	मकान नं0 ए–136, एल्फा–1, ब्लॉक–ए, ग्रेटर नोएडा–201310	9213999744	कार्यकारी सदस्य
16.	श्री जे0के0 गुप्ता	ए–87, सै0–49, नोएडा	9810997834	आजीवन सदस्य
17.	श्री अश्विनी कुमार भारद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	आजीवन सदस्य
18.	डॉ0 मनोज कुमार पटैरया	D–59 भूमितल(G.F.), साकेत, नई दिल्ली 110077	9868114548	आजीवन सदस्य
19.	श्री राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता	सी–154, सै0–100, नोएडा	9810464009	आजीवन सदस्य
20.	श्री भीम सिंह	मोती मैमोरियल, दुर्गा पार्क, पो0–वसुन्धरा ग्राम–दल्लूपुरा, दिल्ली–110096	9810181724	आजीवन सदस्य
21.	श्री ए.के. सक्सेना	मकान नं0 329, ब्लाक–एच, सैक्टर–बीटा–2, ग्रेटर नोएडा	9540274589	आजीवन सदस्य

22.	श्री देवेन्द्र सिंह अवाना	B 5/6,सामने C-4/106, सैक्टर–31, नोएडा	9811602397	आजीवन सदस्य
23.	श्री देवीचरन शर्मा	बी–109, सै0–22, नोएडा	9350859122	आजीवन सदस्य
24.	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी	एच 129, सै0–41, नोएडा	9868943638	आजीवन सदस्य
25.	श्री वेदप्रकाश बंसल	ए 33, सै0–19, नोएडा	9350732724	आजीवन सदस्य
26.	श्री रघुनाथ प्रसाद शर्मा	जी–63, सै0–27, नोएडा	9899797090	आजीवन सदस्य
27.	श्री सुरेन्द्रकुमार ठक्कर	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891445905	आजीवन सदस्य
28.	श्री लाल मोहन चौधरी	ए–390, सै0–47, नोएडा	9868851639	आजीवन सदस्य
29.	श्री श्रीपाल अवाना	ए–286, सै0–47, नोएडा	9210638386	आजीवन सदस्य
30.	श्री यशपाल सिंह	बी–19, सै0–49, नोएडा	9810339398	आजीवन सदस्य
31.	श्रीमती मधु मालती	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891707373	आजीवन सदस्य
32.	श्री विद्याराम अवाना	एच–7, सै0–27, नोएडा	9891960087	आजीवन सदस्य
33.	श्रीमती भारती चतुर्वेदी	बी–2/721, कैलाश धाम, ब्लाक नं0–14, सै0–50, नोएडा	9650990257	आजीवन सदस्य
34.	श्री शिवकुमार शर्मा	ए–100, सै0–33, नोएडा	9871636341	आजीवन सदस्य
35.	आचार्य योगेन्द्र पाण्डे	श्रीराम मन्दिर, सै0–36, नोएडा	9810479542	आजीवन सदस्य
36.	श्रीमती अर्चना शर्मा	कैलाश धाम अपार्टमेंट, ब्लॉक नं. 14, बी–1/520, सैक्टर–50, नोएडा	9810169329	आजीवन सदस्य
37.	श्री परमात्मा शरण बंसल	ए–83, सैक्टर–49, नोएडा	9810169329	आजीवन सदस्य
38.	श्रीमती सीमा चौबे	एफ–13, सै0–20, नोएडा	9811323076	आजीवन सदस्य
39.	श्री विपन कुमार	सी–3/149, सै0–36, नोएडा	9868139393	आजीवन सदस्य
40.	श्री नरेश चौहान	एफ–18, सै0–39, नोएडा	9555955599	आजीवन सदस्य
41.	श्री मामचंद	ए–406, सै0–47, नोएडा	8368890732	आजीवन सदस्य
42.	श्रीमती बबीता भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	आजीवन सदस्य
43.	श्री वेदप्रकाश शर्मा	ए–36, सै0–47, नोएडा	9821213055	आजीवन सदस्य
44.	श्री देवेन्द्र सिंह तोमर	ए–67, सै0–48, नोएडा	9891944556	आजीवन सदस्य
45.	श्री रणवीर सिंह	ग्राम–हजरतपुर वाजिदपुर, सैक्टर–63, नोएडा	9810634772	आजीवन सदस्य
46.	श्री ओमबीर सिंह राणा	बी–28, सैक्टर 44, नोएडा	8178413463	आजीवन सदस्य
47.	श्री जगतसिंह अम्बावत	ए–279, सैक्टर–31, नोएडा	9810260171	आजीवन सदस्य

48.	श्रीमती नीलम सिंह	ए–26, सैक्टर–53, नोएडा	981113613...	आजीवन सदस्य
49.	श्री लव कुमार बंसल	299, सैक्टर–28, नोएडा	9871949140	आजीवन सदस्य
50.	श्रीमती उत्तरा गुप्ता	402, टॉवर 22, लोटस Bouluard, सै0–100, नोएडा	8826804422	आजीवन सदस्य
51.	श्री सुभाषचन्द्र रस्तोगी	ए–75, सैक्टर–20, नोएडा	9971405173	आजीवन सदस्य

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली से बाहर के सदस्य

52.	श्री नरेन्द्र कुमार चाचान	65–ए, लखीमीपाथ, गुवाहाटी–781028	9435553023	उपाध्यक्ष
53.	श्री रविशंकर चतुर्वेदी	904, D-13, AWHO Sandeep Vihar, Seegehalli Kadugodi, बंगलुरु –560067	9945169080	कार्यकारी सदस्य
54.	पं0 डॉ0 लक्ष्मी नारायण	60, मातेश्वरी वार्ड नं0 11, नौगाँव, (छतरपुर) म0प्र0	9893772149	आजीवन सदस्य
55.	श्री कृष्ण कुमार मिश्रा	12/250, कोटेश्वरनगर पो0 रविशंकर यूनिवर्सिटी, **(R.S.U.)** जिला–रायपुर–492010	9406379229	आजीवन सदस्य
56.	डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद चतुर्वेदी	1इ, लक्ष्मी रोड, डालनवाला, देहरादून	09411714660	आजीवन सदस्य
57.	श्री देवेन्द्र कुमार रावत	266, वार्ड नं0 7, स्नेहलनगर, वर्धा (महाराष्ट्र)	9423645351	आजीवन सदस्य
58.	श्री भगवान दास पाठक	फ्लैट नं0 302,तीसरी माला बी–बिल्डिंग, सुमन सूरज सोसाइटी, मोटा बराछा, सूरत (गुजरात)–394001	6352673969	आजीवन सदस्य
59.	श्री वी0जे0 चौधरी	बालीभगत रोड, बक्सीबाजार, कटक (उड़ीसा) 753001	9090438678	आजीवन सदस्य
60.	श्री सतीश कुमार त्रिपाठी	5/40, कृष्णा इन्क्लेव, नंदनपुरा झाँसी – 284001	9450311243	आजीवन सदस्य

SBI
Merchant Name : SHRI RAMCHARITMANAS RASHT
UPI ID : srmrs004263@sbi
BHIM UPI
G20
भारत 2023 INDIA
वसुधैव कुटुम्बकम्
ONE EARTH • ONE FAMILY • ONE FUTURE

पाठकों के विचार

शोभन संस्कारों की प्रदात्री है यह स्मारिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति स्मारिका प्रकाशन वर्ष 2025–2026 दृष्टिगत हुई। कवर सहित 164 (एक सौ चौसठ) पृष्ठीय यह वर्ष–32वाँ अंक मानव समाज को सजगता प्रदान में पूर्णतः तत्पर है। मानव–जीवन का लक्ष्य पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति है। यह स्मारिका धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सम्बन्धी सुचिन्तन अपने में समाहित 38 लेखों के माध्यम से किसी न किसी रूप में मानवहितार्थी है। सब प्रकार से प्रेम एवं श्रेय–प्राप्ति हेतु इन लेखों में सूक्ति, सुभाषित, सुमन्य या सदुपदेश यहाँ निहित हैं। इन शुभ सद्गुणों के आदान–प्रदान का केन्द्र मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम का सच्चरित्र पाठक के समक्ष मानो मूर्तिमान होकर मनुष्य को सन्मार्ग पर चलने के लिए अविलम्ब उत्प्रेरित करता है। सभी लेखों में भक्ति प्रधान है, जो सर्व सद्गुणों की खान है, यथोक्त है 'मानस' में कि–

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। (7/45/5)

'भक्ति' परम उपलब्धि है जो सत्संग से ही प्राप्य है। यह स्मारिका परम श्रेष्ठ सत्संग है। शोभन विचारावलियों को अपने में संजोए हुए, यह स्मारिका मानव समाज के परमहितार्थ महद्–उपयोगी, उपादेय एवं महत्त्वपूर्ण निधि है। इस पत्रिका के सम्पादक, प्रकाशन एवं सहयोगियों को हार्दिक मंगलकामनाओं एवं अनन्त साधुवाद।

डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म.प्र.), फोनः 9826249448

ज्ञान–भक्ति की संवाहिका स्मारिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की संवत् 2082 (सन् 2025–26) की वार्षिक स्मारिका 02–05–2025 को प्राप्त हुई। इसे देखते ही तन–मन प्रभु श्रीराम के चरणों में नतमस्तक हो गया। इस प्रकाशन की जितनी प्रशंसा की जाए, उतनी कम है। हमारा अनुरोध है कि स्मारिका की निरंतरता बनी रहनी चाहिए। सम्पादक मंडल का परिश्रम एवं प्रयास अत्यंत सार्थक एवं सफल है।

आचार्य रामसूरत तिवारी, जिला–रीवा (म.प्र.), फोनः 9755188672

स्मारिका प्राप्त कर धन्य हुआ

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का 32वाँ अंक प्राप्त हुआ। इसमें प्रकाशित ज्ञान–भक्ति से परिपूर्ण लेख पढ़कर मैं धन्य हुआ। स्मारिका के सम्पादक मंडल को हार्दिक साधुवाद।

श्री बालकृष्ण मिश्रा, ग्रेटर नोएडा, फोनः 9811014453

बहुत अच्छा प्रकाशन है स्मारिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका मुझे विगत कई वर्षों से प्राप्त हो रही है, अंक 32 मिला। इन सभी अंकों का प्रकाशन मानव–कल्याण हेतु बहुत अच्छा एवं प्रशंसनीय है। ऐसे प्रकाशनों के लिए हमें आर्थिक सहयोग करना चाहिए। कहावत है कि बूँद–बूँद से घड़ा भर जाता है। ऐसे ही पाठकों के थोड़े से सहयोग से स्मारिका का प्रकाशन अनवरत चलता रहेगा। इसी दृष्टिकोण से स्मारिका के पृष्ठ 09 पर प्रकाशित QR Code से कुछ सहयोग राशि भेजी है। सभी पाठकों से मेरा निवेदन है कि वे यह ज्ञान–भक्ति यज्ञ में अपनी ओर से एक आहुति अवश्य प्रदान करें। बहुत अच्छे प्रकाशन के लिए सम्पादक मंडल को साधुवाद।

श्री विजय कुमार मारू, मुम्बई, फोनः 9916217863

सभी लेख ज्ञानवर्धक एवं प्रेरणास्रोत

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का अंक 32 मुझे पहली बार प्राप्त हुआ। इसमें प्रकाशित सभी लेख ज्ञानवर्धक, जीवनोपयोगी तथा सदाचरण हेतु प्रेरणास्रोत हैं, तथापि मुझे दो लेख बहुत आकर्षक लगे। एक श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल' का लेख, 'राम–वन–गमन में निर्दोष थीं कैकेयी'। इसमें लेखक ने वह वास्तविकता दर्शायी है, जिसमें पाठकों का इस परिप्रेक्ष्य में भ्रम दूर हो जाएगा। दूसरा लेख, 'राम का अनन्य भक्त था रावण'। इसके लेखक श्री सचिन शर्मा ने वे तथ्य स्पष्ट किए हैं, जिससे पाठकों के मन में रावण के प्रति विचार ही बदल जाएगा।

मेरा सुझाव है कि प्रकाशन में उन लेखों को वरीयता दी जाए, जिनसे प्रेरित होकर जन सामान्य अपने आचरण में सुधार ला सके।

श्री राधा माधव शरणजी, औरैया (उ0प्र0), फोनः 7078292376

बहुत ही उपयोगी पत्रिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का अंक 32 प्राप्त हुआ। ज्ञान–वैराग्य–भक्तिभाव से परिपूरित लेख जीवन में एक सच्चे हितैषी मार्गदर्शक के रूप में हैं। इस प्रकार से यह पत्रिका समाज के लिए बहुत ही उपयोगी है। पत्रिका के सम्पादन से संबंधित सभी महानुभावों एवं लेखकों को हार्दिक साधुवाद।

श्री नरेश चन्द्र, गाजियाबाद (उ0प्र0), फोनः 9999045762

आनन्ददायक पत्रिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का 32वाँ अंक प्राप्त हुआ। मैंने पूरी स्मारिका पढ़ी। सभी लेख प्रेरणाप्रद हैं। इन्हें पढ़कर मुझे अत्यंत आनंद आया। स्मारिका के लिए मैं यथाशीघ्र लेख भेज रहा हूँ। स्मारिका प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ।

डॉ0 हरि ओम शुक्ला, बाँदा (उ0प्र0), फोनः 9336584200

ज्ञान–भक्ति–वैराग्य से परिपूर्ण प्रेरणाप्रद लेख

मानव के समग्र कल्याण हेतु इस समिति की वार्षिक स्मारिका विगत 32 वर्षों से आपकी सेवा में संलग्न है। इस संदर्भ में आपके विचार वांछनीय हैं, ताकि हम इसमें और अधिक निखार ला सकें। आपके विचार 'पाठकों के विचार' के अन्तर्गत प्रकाशित किए जाएँगे। आप अनुभव करते होंगे कि हर लेख किसी न किसी प्रकार की प्रेरणा प्रदान करता है, जिससे हम इहलोक और परलोक दोनों को सुधार सकते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में श्री देवेन्द्र शर्मा का लेख **'गएँ सरन प्रभु राखिहैं'** उल्लेखनीय है। यह लेख विस्तार से है, अतः इसका कुछ भाग अंक 32 में पृष्ठ 42 से 51 तक प्रकाशित हुआ है, शेष भाग इस अंक में है। इसमें भगवत्शरणागति का विशद वर्णन है। इसे आद्योपान्त हृदयंगम करने और विश्वास पूर्वक भगवत्शरण हो जाने पर निश्चित रूप से हम मानव–जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

यदि आपके पास अंक 32 की प्रति न हो तो आप समिति की Website:- www.shriramcharit.com पर इसे पढ़ सकते हैं तथा डाउनलोड करके प्रिंट कर सकते हैं।

डॉ0 भगवान दास पटैरया, सदस्य, सम्पादक मंडल, फोनः 9899004263

सहयोग राशि भेजने वालों को साधुवाद

स्मारिका प्रकाशनार्थ प्रतिवर्ष पाठकों से सहयोग राशि प्राप्त होती रही है। सन् 2025 में छत्तीसगढ़ (बिलासपुर) से श्री के.पी. गुप्ता, उत्तर प्रदेश से श्रीमती माया उपाध्याय (झाँसी), श्री द्वारका प्रसाद वैद्य (झाँसी), श्री संतोष कुमार वैद्य (गाजियाबाद) एवं श्री नरेश चंद्र (गाजियाबाद), दिल्ली से श्रीमती सुषमा पालीवाल, डॉ0 मनोज कुमार पटैरया, श्री राम बाबू शर्मा तथा श्री अशोक कुमार वर्मा, आसाम (गुवाहाटी) से श्री नरेन्द्र कुमार चाचान, गुरुग्राम से श्री अस्नी डिलसे पुत्र स्व0 श्री अशोक दत्त, मध्यप्रदेश (रीवा) से आचार्य राम सूरत तिवारी, महाराष्ट्र (मुंबई) से श्री विजय कुमार मारू एवं श्री मामचंद, कर्नाटक (बंगलूरु) से श्री रवि शंकर चतुर्वेदी तथा छत्तीसगढ़ (रायपुर) से श्री कृष्ण कुमार मिश्रा एवं कोटा (राजस्थान) से श्री ओमप्रकाश शर्मा से सहयोग राशि प्राप्त हुई है। कुछ पाठकों से सहयोग

राशि प्राप्त हुई है, किंतु उनसे सूचना प्राप्त न होने के कारण रसीद 'गुप्त दान' लिखकर जारी की गई है। हम सहयोग राशि भेजने वाले पाठकों को साधुवाद ज्ञापित करते हुए आशान्वित हैं कि भविष्य में भी वे इस पुनीत कार्य हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान करके हमारा उत्साहवर्धन करते रहेंगे।

उल्लेखनीय है कि **समिति के पेटीएम का आईकान (Or Code) स्मारिका (वर्ष 33) के पृष्ठ 10 पर प्रकाशित किया गया है।** सहयोग राशि भेजने वालों से निवेदन है कि वे इसका उपयोग करते हुए सहयोग राशि भेजकर 9899004263 पर एस.एम.एस. भेजने अथवा फोन करने का अनुग्रह करें, ताकि उनके नाम से रसीद जारी की जा सके।

बिषई साधक सिद्ध सयाने। त्रिबिध जीव जग बेद बखाने।। (2/277/3)

जगत में तीन प्रकार के जीव होते हैं–एक विषयी, एक साधक और एक सिद्ध। विषयी के दो भेद होते हैं, जो शास्त्र के अनुसार विषयों का सेवन करे उसे विषयी कहते हैं और जो शास्त्र के विरुद्ध आचरण करे उसको पामर कहते हैं। वह वासना के वश में रहता है। उसका बंधन बड़ा कठोर होता है।

विषयी जीव भी सत्संग प्राप्त कर साधना करने लगता है और फिर विषयी से साधक बन जाता है। साधना करते–करते जब आत्मतत्व का अनुभव करने लगता है, तब सिद्ध बन जाता है।

साधक भी दो तरह के होते हैं–एक आत्मा और ब्रह्म की एकता का साक्षात्कार करना चाहते हैं, सच्चे जिज्ञासु होते हैं। दूसरे होते हैं देशकाल के अनुसार वांछित पदार्थ चाहने वाले।

सिद्ध भी दो प्रकार के होते हैं–एक ज्ञानी जीवन मुक्त सिद्ध होता है और दूसरा सिद्धियों को प्राप्त करके स्वयं की ख्याति चाहने वाला।

विषयी, साधक और सिद्ध, इन सभी में सयाने (बुद्धिमान) वही हैं जिनका, मन 'राम–प्रेम' में समाया हुआ है। साधु समाज में उन्हीं का बड़ा सम्मान होता है, यथा–

राम सनेह सरस मन जासू। साधु सभाँ बड़ आदर तासू।। (2/277/4)

अयोध्या, मथुरा, काशी, अवंतिका, काँची, हरिद्वार और द्वारका–ये सात मुक्तिनगर हैं, इनके प्रतिदिन स्मरण मात्र से ही समस्त प्राणियों का उद्धार हो जाता है।

श्रीराम जन्ममहोत्सव की झलकियाँ

कथा व्यास : मानस कोविद पं. देवेन्द्र दुबे, फोनः 9131124615

इस समय भौतिक प्रगति में दिन पर दिन वृद्धि हो रही है। विलासता की सामग्री प्राप्त करने की होड़ में मानव सुख–शान्ति से दूर होता जा रहा है। इसका प्रमुख कारण है–आस्तिकता का अभाव तथा आचरण में विसंगति होना अर्थात् हम आचरण में सुधार न करके केवल आडंबर और दिखावा करते हैं। इससे नैतिक मूल्यों का दिन–प्रतिदिन ह्रास हो रहा है। इस स्थिति में भावी पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत करने के उद्देश्य से भगवान के अवतारों एवं महापुरुषों के जन्म दिन पर महोत्सव आयोजित करना तथा उनसे शिक्षा ग्रहण करके अपना आचरण सुधारना परम आवश्यक है। इसी उद्देश्य से श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति द्वारा विगत 3 दशकों से अधिक समय से प्रतिवर्ष श्रीरामजन्म महोत्सव आयोजित किया जा रहा है। इसी शृंखला में 33वाँ महोत्सव चैत्र शुक्ल नवमी संवत् 2082 तदनुसार रविवार 6 अप्रैल 2025 को महाराजा अग्रसेन भवन, सैक्टर–33, नोएडा में आयोजित हुआ। इसका शुभारंभ समिति–अध्यक्ष पं. दिनेश चंद्र शर्मा द्वारा प्रातः 9:30 बजे श्रीगणेश–पूजन से हुआ। तत्पश्चात् श्रीहनुमान चालीसा पाठ एवं 'श्रीराम जय राम जय जय राम' संकीर्तन सम्पन्न हुआ। इस पावन वेला में समिति की वार्षिक स्मारिका के 32वें अंक का विमोचन पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर त्रिपाठीजी द्वारा किया गया। इस अवसर पर कथा व्यास 'मानस कोविद' पं. देवेन्द्र दुबे ने अपनी मधुर ओजस्वी वाणी से श्रीरामकथामृत पान कराके श्रोताओं को भाव विभोर कर दिया। श्रीरामकथा के कुछ रसबिंदु पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत हैंः–

अखिल ब्रह्माण्डनायक निर्गुण–निराकार भगवान श्रीराम, जो सभी के जन्मदाता हैं, उनका जन्मदिन/प्राकट्य दिवस मना रहे हैं। हम सभी सौभाग्यशाली हैं कि इस पावन वेला में मंगलों के धाम श्रीरामजी की मंगलमय कथा का गायन/श्रवण करेंगे। भगवान का जन्म/ प्राकट्य अयोध्या धाम में हुआ, पर जहाँ रामकथा का आयोजन होता है वही स्थल अयोध्या बन जाता है। कथा के प्रारंभ में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं कि जहाँ संतों की सभा होती है वही स्थल सुमंगलों का मूल अवध है–

श्रोता त्रिबिध समाज पुर ग्राम नगर दुहुँ कूल।
संतसभा अनुपम अवध सकल सुमंगल मूल।। (1/39)

शिवजी कथा सुनाने के प्रारंभ में पार्वतीजी से कहते हैं कि जो महाराज दशरथ के आँगन में विहार करने वाले श्रीराम हैं वे मंगलों के धाम और सभी अमंगलों का हरण करने वाले हैं–

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/3)

मंगलमूर्ति भगवान की कथा प्रारंभ करने से पूर्व वंदना प्रकरण में भी गोस्वामीजी यही मंत्र लिखते हैं–

मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।। (1/10/2)

'राम नाम' की महिमा का वर्णन करते हुए शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती! तुम जो विष्णु सहस्रनाम का पाठ करती हो, केवल एक बार 'राम' कहने मात्र से वह उसके समकक्ष हो जाता है, यथा–

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने।। (रामरक्षा स्तोत्र से)

श्रीरामचरितमानस की रचना अयोध्या में गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा जिस दिन प्रारंभ हुई वह मंगलमय मंगलवार का वही दिन था तथा वही मुहूर्त था जिस दिन त्रेता में भगवान श्रीराम का प्राकट्य (जन्म) हुआ था। इसीलिए भक्तजन श्रीरामचरितमानस को भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार मानते हैं, यथा–

संबत सोरह सै एकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा।।
नौमी भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।।
जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं। तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं।। (1/34/4–6)

श्रीरामचरितमानस में सात काण्ड हैं। इनमें से किसी एक का सहारा लेकर सहज ही भवसागर पार किया जा सकता है। ये सातों काण्ड श्रीरामजी की भक्ति प्राप्त करने हेतु मानो सप्तपंथ हैं, यथा–

सप्त प्रबंध सुभग सोपाना। ग्यान नयन निरखत मन माना।। (1/37/1)
एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना। रघुपति भगति केर पंथाना।। (7/129/3)

कथा समापन से पूर्व तुलसीदासजी लिखते हैं कि अपनी रुचि के अनुसार यदि कोई श्रीरामचरितमानस की पाँच–सात चौपाइयों को अपने हृदय में धारण कर ले तो भी श्रीरामजी की कृपा से अविद्या और पंचजनित विकार दूर हो जाते हैं, यथा–

सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जो नर उर धरै।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरै।। (7/130/छंद)

भगवान अथवा उनके द्वारा इस धराधाम में भेजे गए कारक पुरुष (महापुरुषों) का जन्म पुण्यात्माओं के गृह में ही होता है। महाराज मनु एवं शतरूपा ने कठोर तप करके भगवान को प्रसन्न कर उनसे यह वर माँगा था कि हमें आपके समान पुत्र चाहिए। 'तथास्तु' कहकर श्रीरामजी ने कहा था कि जब तुम अयोध्या नरेश के रूप में जन्म लोगे, तब मैं अपने अंशन सहित तुम्हारा पुत्र बनकर आऊँगा। अयोध्यापुरी में जब भगवान के जन्म का समय हुआ, तब सर्वत्र मंगलमय वातावरण हो गया। गोस्वामीजी लिखते हैं–

नौमी तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।।
मध्यदिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोक बिश्रामा।।
सीतल मंद सुरभि बह बाऊ। हरषित सुर संतन मन चाऊ।। (1/191/1–3)

सभी देवता भगवान की स्तुति करके अपने–अपने धाम को चले गए, तब भगवान चतुर्भुज रूप में कौसल्याजी के कक्ष में प्रकट हुए। माता ने भगवान की स्तुति की। भगवान ने कहा कि आपको दिए गए वरदान के अनुसार मैं आपका पुत्र बनकर आया हूँ। माता ने कहा कि यदि पुत्र बनकर आए हो तो छोटे से शिशु बनकर रोदन कीजिए और अपनी बाल लीलाएँ दिखाकर हमें कृतार्थ कीजिए। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा।। (1/192/छंद)

भगवान ने अपने अंशों सहित अवतार लेने को कहा था, अतः वे चारों भाइयों के रूप में अवतरित हुए। कैकेयीजी से भरत और माता सुमित्रा से लक्ष्मण, शत्रुघ्न का जन्म हुआ। अवध में मंगलगीत–बधाइयाँ गाए जाने लगीं, यथा–

घर घर आनंद छायो, अयोध्या नगरी में।
कौसिल्या सुत जायो, अयोध्या नगरी में।।

गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं कि मायातीत परब्रह्म ने अपनी इच्छा से ब्राह्मण, गौ, देव एवं संतों के हित हेतु मानव शरीर धारण किया है। उन्होंने जो आचरण किए, वे समाज के लिए अनुकरणीय हैं। वे प्रातःकाल उठकर माता–पिता एवं गुरु के चरणों में प्रणाम करते। हमें भी प्रातःकाल उठकर अपने पूज्यों को प्रणाम करना चाहिए। सबसे पहले अपने हाथ (हथेली) का दर्शन करना चाहिए, इसमें लक्ष्मी, सरस्वती और गोविन्द भगवान का निवास है, यथा–

कराग्रे वसते लक्ष्मी करमध्ये सरस्वती।
करमूले तु गोविन्दः प्रभाते कर दर्शनम्।।

तत्पश्चात् पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी माता को नमन करें और फिर बड़ों का अभिवादन करें। मनु स्मृति के अनुसार अभिवादन करने से आयु, विद्या, यश एवं बल, इन चार गुणों की वृद्धि होती है।

श्रीरामजी के वनवास काल में अयोध्या के लोग उनके चित्रकूट प्रवास के समय उन्हें वापिस अयोध्या लौटाने का प्रयास करते हैं। इस हेतु एक सभा में गुरु वसिष्ठजी कहते हैं कि श्रीराम सत्यसंध हैं, वेद–शास्त्रों की मर्यादा का पालन करने वाले हैं। इनका जन्म विश्व कल्याण हेतु हुआ है, यथा–

सत्यसंध पालक श्रुति सेतू। राम जनमु जग मंगल हेतू।। (2/254/3)

यही बात विश्वामित्रजी भी श्रीरामजी से कहते हैं कि हे तात! तुम नीति–धर्म का पालन करने वाले तथा प्रेमविवश अपने सेवक को सुख देने वाले हो, यथा–

सुनि मुनीसु कह बचन सप्रीती। कस न राम तुम्ह राखहु नीती।।
धरम सेतु पालक तुम्ह ताता। प्रेम बिबस सेवक सुखदाता।। (1/218/7–8)

भगवान के दर्शनार्थ शंकरजी आते हैं। इस संदर्भ में वे कथा सुनाते हुए पार्वतीजी से कहते हैं कि हे गिरिजा! मेरी एक चोरी और सुनो। काकभुशुंडिजी के साथ हम दोनों गुरु–चेले बनकर हस्तरेखा देखने के बहाने रनिवास में प्रवेश पा गए और भगवान का बाल स्वरूप देखकर आनंदित हुए। तत्पश्चात् हम दोनों प्रेम में मतवाले अवध की गलियों में विचरण करने लगे, यथा–

औरउ एक कहउँ निज चोरी। सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी।।
काकभुसुंडि संग हम दोऊ। मनुजरूप जानइ नहिं कोऊ।।
परमानंद प्रेम सुख फूले। बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले।। 1/196/3–5)

यह सुनकर पार्वतीजी पूछती हैं कि इसके पहले भी आपने एक चोरी की है, वह भी बताइए। शिवजी कहते हैं सौ करोड़ रामचरित्र में से मैंने दो वर्ण **'रा'** और **'म'** ले लिए, यथा–

ब्रह्म राम तें नामु बड़ बर दायक बर दानि।
रामचरित सत कोटि महँ लिय महेस जियँ जानि।। (1/25)

एक बार माता कौसल्या ने शिशु रामजी को स्नान कराके वस्त्रादि पहनाकर पालने में सुला दिया और तत्पश्चात् अपने इष्टदेव (भगवान विष्णु) के पूजन हेतु पकवान बनाए और भोग लगाया। बीच–बीच में पालने में देख लिया कि रामजी सो रहे हैं, पर पूजा ग्रह में उन्हें भोग पाते देखा। दौड़कर पालने के पास गईं और देखा कि रामजी सो रहे हैं। वे अत्यंत चकित हो गईं, तब श्रीरामजी ने अपने मुख में उन्हें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के दर्शन कराए–

देखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड।। (1/201)

मनु–शतरूपा ने भगवान की आराधना और उनके दर्शनार्थ कठोर तप किया। प्रसन्न होकर श्रीरामजी ने सीताजी सहित उन्हें दर्शन दिए और वर माँगने को कहा। मनु ने उनके समान पुत्र की चाह की। भगवान ने कहा कि मैं स्वयं पुत्र बनकर आऊँगा। तत्पश्चात् शतरूपा से पूछा तो उन्होंने कहा कि आप ब्रह्मादि तथा जगत के स्वामी होकर भी आप हमारे पुत्र बनकर आएँगे, इसमें मेरे मन में कुछ संशय है। हे स्वामी! आपके भक्तों को जो सुख, जो विवेक और जो गति प्राप्त होती हो, मुझे वही दीजिए। यह सुनकर श्रीरामजी उन्हें माता कहकर संबोधित करते हैं जिससे उनका संशय दूर हो जाए और कहते हैं कि मेरे अनुग्रह से माता आपका अलौकिक विवेक कभी नहीं मिटेगा, यथा–

मातु बिबेक अलौकिक तोरें। कबहुँ न मिटिहि अनुग्रह मोरें।। (1/151/3)

इसी वरदान के कारण कौसल्याजी कभी अधीर नहीं हुईं। चित्रकूट का प्रसंग है, जब जनकराज का रनिवास मिलन हेतु अयोध्या रनिवास के पास आता है। वार्तालाप में कौसल्याजी कहती हैं कि इसमें (राम वनवास) किसी का दोष नहीं है–

कौसल्या कह दोसु न काहू। करम बिबस दुख सुख छति लाहू।। (2/282/3)

इस कार्यक्रम में अपने विचार व्यक्त करते हुए पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर त्रिपाठीजी ने कहा कि नोएडा एक छोटे से औद्योगिक नगर से आज एक महानगर के रूप विकसित हो गया है। इस संस्था के अलावा, मेरी जानकारी के अनुसार कोई भी संस्था इतने वृहद स्तर पर प्रतिवर्ष श्रीराम जन्ममहोत्सव नहीं आयोजित करती है। इस अवसर पर वार्षिक स्मारिका के अंक 32 के विमोचन हेतु संस्था के कर्मठ कार्यकर्ता और पदाधिकारी बधाई के पात्र हैं। हमारी संस्कृति राम और कृष्ण के चरित्र और उनकी अलौकिक लीलाओं से ओतप्रोत है। इस पावन वेला में हमें दृढ़ संकल्पित होकर भगवान श्रीराम के आदर्शों को अपने आचरण में उतारना चाहिए।

श्रीराम जन्ममहोत्सव के कार्यक्रम का अपनी ओजस्वी वाणी से सफल संचालन पत्रकार श्री राजेश बैरागी ने किया। इस हेतु यह समिति उन्हें साधुवाद ज्ञापित करते हुए उनका आभार व्यक्त करती है। इस कार्यक्रम के सफल आयोजन में अग्रवाल मित्र मंडल (पंजीकृत) का हमें भरपूर सहयोग मिला। हम उन्हें हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करते हैं। श्रीरामायणजी एवं भगवत् विग्रह की आरती तथा भोजन प्रसाद के पश्चात् अपराह्न 3 बजे कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

पाँच जगह हँसना करोड़ों पाप के बराबर है
श्मशान में, अर्थी के पीछे, शोक में, मंदिर में और कथा में।

तुलसी जयंती समारोह

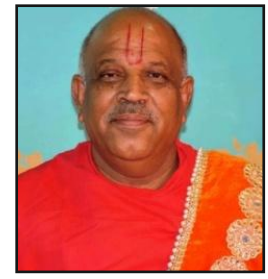

श्रीराम कथा आयोजन : मानस मर्मज्ञ पं. श्यामजी मनावत, फोनः 9826583380

मानव जीवन का परम उद्देश्य आत्मकल्याण करना है। इसे प्राप्त करने के लिए युगधर्म के अनुसार साधनों में भिन्नता है। यह कलियुग का समय है। इसमें भगवन्नाम का स्मरण–चिन्तन ही एक मात्र साधन है। ईश्वर के नाम की महिमा तथा कल्याणकारी मार्ग का दिग्दर्शन पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में जितनी सरलता से उपलब्ध है, उतनी अन्य ग्रंथों में देखने को नहीं मिलता है। ऐसे महान रचनाकार, भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदासजी की स्मृति में उनके जन्म दिन पर **'तुलसी जयंती'** समारोह आयोजित करने की परम्परा पूरे देश में है। विदेशों में भी कुछ भारतीय जन तथा संस्थाएँ यह आयोजन करती हैं। श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति एवं गीता रामायण समिति, नोएडा के संयुक्त तत्वावधान में **तुलसी जयंती समारोह**, श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, सी ब्लॉक, नोएडा में श्रावण शुक्ल सप्तमी, संवत् 2082 तदनुसार गुरुवार 31 जुलाई 2025 को 10वाँ तुलसी जयंती समारोह आयोजित हुआ। प्रातः 9.30 बजे श्रीराम मंदिर के प्रधान पुजारी आचार्य योगेन्द्र पाण्डेय द्वारा श्रीगणेश–पूजन से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। श्रीहनुमान चालीसा का पाठ एवं 'श्रीराम जय राम जय जय राम' संकीर्तन के पश्चात् मदर टेरेसा सीनियर सैकेण्ड्री स्कूल, गिझौड़, सैक्टर–53, नोएडा तथा सर्वहितकारी शिक्षा निकेतन, निठारी, सैक्टर–31, नोएडा के छात्र–छात्राओं द्वारा सस्वर 'मानस' की चौपाइयों का गायन किया गया। पं0 दिनेश चंद्र शर्मा के पौत्र आदित्य शर्मा ने भी प्रस्तुति दी।

इस पावन वेला में कथा–व्यास मानस मर्मज्ञ पं0 श्याम स्वरूप श्री मनावत ने गोस्वामी तुलसीदासजी के जीवन चरित्र पर प्रकाश डालते हुए उनके द्वारा रचित महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में वर्णित कुछ कथाओं को श्रवण कराया। उनकी ओजस्वी मधुर वाणी से श्रोताओं ने मंत्र मुग्ध होकर श्रीरामकथा श्रवण की। इस कथा के कुछ अंश पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं–

श्रीरामकथा की रचना शिवजी ने की और उसे अपने मन में रखा। उचित समय आने पर अर्थात् जब पार्वतीजी के मन में अपने कुछ संदेहों को दूर कराने के उद्देश्य से श्रद्धा विश्वास सहित इसे सुनने के लिए शिवजी से प्रार्थना की, तब शिवजी ने उन्हें पूर्व रचित मन में रखी हुई रामकथा अर्थात् रामचरितमानस सुनाया। इस कारण गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं कि इसका नाम 'रामचरितमानस' रखा है। इसे श्रवण करने पर जीव सभी दोषों से मुक्त होकर विश्राम (परम शान्ति) को प्राप्त करता है।

रचि महेस निज मानस राखा पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।।
तातें रामचरितमानस बर । धरेउ नाम हियँ हेरि हरषि हर।। (1/35/11–12)
रामचरितमानस एहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा।।
मन करि बिषय अनल बन जरई। होइ सुखी जौं एहिं सर परई।। (1/35/7–8)

यहाँ विचारणीय है कि शिवजी ने सुसमय जानकर यह कथा पार्वतीजी को सुनाई। रामकथा से अच्छी बात क्या हो सकती है, किंतु शिवजी ने इसे मन में ही रखा और जब पार्वतीजी की जिज्ञासा और श्रद्धा देखी, तब उनको यह कथा सुनाई। इसका निष्कर्ष यह है कि अच्छी से अच्छी बात को भी उचित समय में कहा जाए, तभी उसका महत्व है। श्रीरामचरितमानस में चारों वेद, अठारह पुराण, उपनिषद एवं अन्य सभी सनातन धर्म ग्रंथों में वर्णित नीति–धर्म का 'सार' है, इसीलिए रामायणजी (श्रीरामचरितमानस) की आरती में गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है–

गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की।।
आरति श्रीरामायनजी की।

स्वायंभू मनु और शतरूपा ने भगवान के दर्शनार्थ कठोर तप किया, जिसे देखकर ब्रह्मा–विष्णु–महेश कई बार उनके पास आए और वर माँगने के लिए लुभाया, किंतु वे अडिग रहे, क्योंकि वे तो उन परम प्रभु के दर्शनों के लिए इच्छुक थे, जिनसे ब्रह्मा–विष्णु–महेश उपजते हैं, यथा–

संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहिं जासु अंस तें नाना।
ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई। भगत हेतु लीलातनु गहई।। (1/144/6–7)

मनुजी की प्रेमभाव से विनयपूर्ण वाणी सुनकर भगवान उन्हें 'सीताराम' के रूप में दर्शन देते हैं और वर माँगने को कहते हैं। मनु महाराज निवेदन करते हैं कि हमें आप जैसा पुत्र चाहिए। भगवान कहते हैं कि मैं तथा मेरी आदिशक्ति यह माया (सीता) अपने अंशों **(ब्रह्मा, विष्णु और महेश)** के साथ, जब तुम अयोध्या नरेश के रूप में जन्म लोगे, तब तुम्हारे घर प्रकट होऊँगा–

इच्छामय नरबेष सँवारें। होइहउँ प्रगट निकेत तुम्हारें।।
अंसन्ह सहित देह धरि ताता। करिहउँ चरित भगत सुखदाता।। (1/152/1–2)

समय आने पर भगवान चतुर्भुज रूप में महाराज दशरथ की बड़ी रानी कौसल्या के कक्ष में प्रकट हुए। यह दृश्य देखकर माता उनकी स्तुति करने लगीं। भगवान ने कहा कि आप लोगों (मनु–शतरूपा) ने मुझे पुत्ररूप में आने के लिए वरदान माँगा था, इसीलिए मैं आ गया। माता कहती हैं, तो शिशु बनकर रोदन करिए और अपनी बाललीलाओं से हमें कृतार्थ कीजिए, यह सुनकर –

सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।। (1/192/छंद)

महाराज दशरथ की दूसरी रानी कैकेयी के एक और तीसरी रानी सुमित्रा के दो पुत्र हुए। चारों राजकुमारों का नामकरण करते हुए महाराज दशरथ के कुलगुरु मुनि वसिष्ठ कहते हैं कि आपके ज्येष्ठ पुत्र कौसल्यानंदन आनंदसिंधु, सुखधाम और अखिल लोकों को सुख प्रदान करने वाले हैं, इनका नाम 'राम' है। जो विश्व का भरण पोषण करने वाले हैं, उन कैकेयी नंदन का नाम भरत होगा। सुमित्रा नंदन के प्रथम पुत्र लक्षणों के धाम, विश्व के आधार और जो रामप्रिय होंगे, इनका नाम लक्ष्मण होगा। सुमित्राजी के दूसरे पुत्र के स्मरण मात्र से शत्रुओं का नाश हो जाएगा, उनका नाम शत्रुघ्न रखता हूँ। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जो आनंद सिंधु सुखरासी। सीकर तें त्रैलोक सुपासी।।
सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक बिश्रामा।।
बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।।
जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा।। (1/197/5–8)
लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार।
गुरु बसिष्ट तेहि राखा लछिमन नाम उदार।। (1/197)

इस प्रकार से श्रीरामजी अखिल ब्रह्माण्डनायक ब्रह्म के अवतार हैं, भरतजी विष्णु के अवतार, रामप्रिय लक्ष्मणजी शिवजी के अवतार तथा शत्रुघ्न हैं ब्रह्मा के अवतार, क्योंकि ब्रह्माजी का कोई शत्रु नहीं है जबकि विष्णु के अनेक शत्रु हैं और शिवजी के भी कुछ शत्रु तो हैं ही। लक्ष्मणजी को शेषनाग का अवतार माना जाता है और हनुमानजी को शिवावतार। पूरी रामचरितमानस में हनुमानजी और लक्ष्मणजी का आपस में सीधा सम्वाद किसी भी प्रसंग में नहीं मिलता है, क्योंकि दोनों शिवावतार के रूप में भी हैं। रामप्रिय होने से भी लक्ष्मणजी को शिवावतार कहा है।

मानव देह प्राप्त करने का परम लक्ष्य स्वयं का आत्मोद्धार है। इस हेतु ज्ञान–भक्ति और कर्म तीन साधन हैं। कर्म तो ज्ञान–भक्ति दोनों में उभयनिष्ठ है। ज्ञान की साधना कठिन है और साधनाकाल में चूक हो जाने पर पुनः साधना करना अत्यन्त दुष्कर है, किंतु

'भक्ति' पथ सुलभ साधन है। भक्ति से वह फल अनायास सहज ही प्राप्त हो जाता है, जिसे प्राप्त करने हेतु कठिन ज्ञान साधना करनी होती है, यथा–

अति दुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद।।
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अनइच्छित आवइ बरिआईं।। (7/119/3–4)

भगवत्भक्ति की महिमा का वर्णन करते हुए काकभुशुंडिजी कहते हैं कि रामभक्ति रूपी मणि जिसके हृदय में निवास करती है उसे स्वप्न में भी लेशमात्र दुख नहीं होता, क्योंकि उसका संबंध सुखधाम श्रीरामजी से जुड़ जाता है, यथा–

राम भगति मनि उर बस जाकें। दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें।। (7/120/9)

पंचवटी प्रवास के समय ज्ञान–भक्ति का उपदेश देते हुए श्रीरामजी कहते हैं कि हे लक्ष्मण! भक्ति अनुपम सुख की जड़ है और यह तभी मिलती है जब संत अनुकूल हों अर्थात् जब संत की कृपा हो जाए। इसी संदर्भ में सम्पूर्ण रामकथा श्रवण करने के पश्चात् मोह विगत गरुड़जी अपने विचार व्यक्त करते हुए काकभुशुंडिजी से कहते हैं कि श्रीरामजी की कृपा से ही विशुद्ध संत से मिलन होता है, जिनके सत्संग के परिणामस्वरूप प्रभु भक्ति प्राप्त होती है।

भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला।। (3/16/4)
संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही।। (7/69/7)

अयोध्यावासियों को सम्बोधित करते हुए स्वयं भगवान श्रीरामजी भक्ति की महिमा बताते हुए कहते हैं कि सकल सुखों की खान भक्ति स्वतंत्र है अर्थात् इसे किसी अन्य सहारे की आवश्यकता नहीं है, पर भक्ति बिना सत्संग के प्राप्त नहीं होती और सत्संग बिना पुण्य के प्राप्त नहीं होता। जगत में एक ही पुण्य है मन–वचन–कर्म से विप्र पद सेवा–पूजा। एक और गुप्त मत है कि शिवजी के भजन के बिना भक्ति प्राप्त नहीं होती है, यथा–

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।।
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता।।
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा।। (7/45/5–7)
औरउ एक गुपुत मत सबहि कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि।। (7/45)

गरुड़जी को सम्पूर्ण श्रीरामकथा श्रवण कराने एवं उनके सभी प्रश्नों का समाधान करने के पश्चात् काकभुशुंडिजी कहते हैं कि सभी साधनों का फल है श्रीहरि–भक्ति की प्राप्ति और वह बिना संत की कृपा के किसी को नहीं मिली। ऐसा विचारकर जो सत्संग करते हैं, उन्हें राम–भक्ति सुलभ हो जाती है–

सब कर फल हरि भगति सुहाई। सो बिनु संत न काहूँ पाई।।

अस बिचारि जोइ कर सतसंगा। राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा।। (7/120/18–19)

इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर त्रिपाठीजी ने कहा कि श्रीरामचरितमानस केवल एक धर्मग्रंथ ही नहीं है, बल्कि एक ऐसा समाजशास्त्र है कि जिसमें वर्णित नीतियों एवं आदर्शों पर चलकर सम्पूर्ण विश्व सुख शान्ति प्राप्त कर सकता है। समाज में, परिवार में किसके साथ कब कैसा व्यवहार करना चाहिए, हमें इस महाकाव्य में आचरण सहित मिलता है। इसके अनुपालन से हम 'रामराज्य' जैसे सुशासन को स्थापित कर सकते हैं। मदर टेरेसा सीनियर सैकेण्ड्री स्कूल, गिझौड़, सैक्टर–53, नोएडा तथा सर्वहितकारी शिक्षा निकेतन, निठारी, सैक्टर–31, नोएडा के विद्यार्थियों जिन्होंने इस कार्यक्रम में अपनी प्रस्तुति दी तथा उनके प्रधानाचार्यों को एवं आदित्य शर्मा को, श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष पं0 दिनेश चंद्र शर्मा एवं गीता रामायण समिति के महासचिव श्री सी0एस0 भोगल द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए। पुरस्कारों की व्यवस्था श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति के प्रचार सचिव श्री लीलू राम वर्मा द्वारा की गई। इस कार्यक्रम का कुशल संचालन पत्रकार श्री राजेश बैरागी ने किया। रामायणजी तथा भगवत् विग्रह की आरती तथा भोजन–प्रसाद के पश्चात् अपराह्न 3.00 बजे कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

चरित राम के सगुन भवानी। तर्कि न जाहिं बुद्धि बल बानी।। (6/74/1)

शंकरजी कहते हैं कि हे भवानी! सगुण राम के जो चरित्र हैं वे बल, बुद्धि और वाणी से तर्के नहीं जाते अर्थात् तर्क के विषय नहीं होते। जो निर्गुण ब्रह्म है वह तर्क का विषय है। उनमें तो बहुत हद तक तर्क की गति है। उनका वाणी द्वारा तत्त्वमस्यादि महावाक्य से वर्णन करते हैं। बल से मुनिजन समाधि लगाकर ध्यान करते हैं और बुद्धि से परमात्म तत्व पर विचार करते हैं। वहाँ तो तर्क की गति भी है, लेकिन ये जो सगुण भगवान हैं ये तर्क के विषय नहीं हैं, ये तो केवल श्रद्धा एवं प्रेम के विषय हैं। ऐसा विचार कर जो तत्त्वज्ञानी और विरक्त पुरुष हैं, वे सब तर्क (शंका) छोड़कर श्रीरामजी का भजन ही करते हैं।

अस बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहि भजहि तर्क सब त्यागी।। (6/74/2)

इस संदर्भ में श्रीकाकभुशण्डिजी कहते हैं कि हे गरुड़जी! ब्रह्म का निर्गुण रूप तो अति सुलभ है, किंतु सगुण ब्रह्म को कोई नहीं जान पाता, क्योंकि उन सगुण भगवान के अनेक प्रकार के सुगम और अगम चरित्र होते हैं, जिन्हें देख–सुनकर मुनियों के मन में भी भ्रम हो जाता है, यथा–

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ।। (7/73ख)

दुःख निवृत्ति में सहायक 'मानस' के प्रसंग

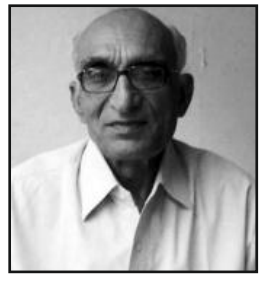

पं. राधा कृष्ण पाठक (अतीत), भांडेर, दतिया (म.प्र.), फोनः 8770436182

श्रीरामचरितमानस के अयोध्याकांड का प्रसंग है। मुनि वसिष्ठजी भरतजी के व्यथित मन को संतोष प्रदान करने के लिए शास्त्र संगत नीति वाक्यों का उल्लेख करते हुए कहते हैं, ''हे भरत सुनो!''

सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ।। (2/171)

अर्थात् मुनिनाथ (वसिष्ठजी) ने विलख कर (दुखी होकर) कहा, हे भरत! भावी (होनहार) बड़ी बलवान है। हानि–लाभ, जीवन–मरण और यश–अपयश ये सब विधाता के हाथ में हैं। जीवन में जो घटित हो रहा है, उसमें हमें जो प्राप्त हो रहा है, वह सब विधाता के हाथ में है। विचारणीय है कि ये सभी विधाता के हाथ में क्यों हैं? इसका कारण कर्म की प्रधानता है। जो जैसा कर्म करता है, उसी के अनुसार विधाता फल देता है। विधाता केवल फल प्रदाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे यदि आप बैंक से रुपये निकालें तो उतना ही मिल सकता है जितना जमा है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा।। (2/219/4)
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता।। (2/92/4)

मुनि वसिष्ठजी ने नीति वचनों को कहकर एक ऐसा रास्ता दिखाया जिसका अनुसरण जीवन में आने वाले संकटों को सहन करने और समझने **के लिए सहायक** है। जीवन में हानि–लाभ, जीवन–मरण और यश–अपयश जो छः उपादान हैं, वे मनुष्य के हाथ में नहीं हैं, हालाँकि जीवन की जीवनी इन्हीं छः उपादानों के अंदर है। आज इस असत् संसार में लगभग सभी प्राणी अपने को सुखी नहीं देख पा रहे, दुःखों से घिरे हुए हैं। प्राणी सुख की तलाश में भटक रहा है, जो संसार में है ही नहीं, क्योंकि संसार के मुख्य दरवाजे पर ही लिखा है ''**दुःखालय**'', लेकिन दुखी प्राणी क्या करें? अपने कर्मों में सुधार है नहीं, समर्पण है नहीं, लेकिन फिर भी सुखी होना चाहता है। सुख पाने के लिए भ्रम के बाजार में भटक रहा है, जहाँ सुख बाँटने वालों की दुकानें खुल गईं, लेकिन देखा जाए तो उन दुकानदारों के पास केवल दुःख का ही सामान है और उस दुःख के सामान से ही सुख बाँटने का काम किया जा रहा है। सहारा और समाधान हमारे वैदिक, धार्मिक ग्रंथों में ही निहित है। यदि हम श्रीरामचरितमानस की ही बात करें, जिसमें सभी वेद–पुराण आदि का सार निहित

है, इसे पढ़ें, समझें और उसका अनुसरण करें, तो हमें इसमें वर्णित नीतियों से जीवन जीने का सुगम रास्ता मिल जाएगा।

महात्मा तुलसीदासजी ने सतत् अध्ययन कर जीवन की 77 वर्ष की आयु में ईश्वरीय प्रेरणा से संपूर्ण वैदिक साहित्य को आधार बनाकर जीवनोपयोगी नीतियों सहित प्रसंगों का वर्णन किया है, वह केवल एक कथा (कहानी) नहीं है, बल्कि जीवन–दर्शन है। मुनि वसिष्ठजी भरत को पुनः समझाते हुए कहते हैं–

अस बिचारि केहि देइअ दोसू। ब्यरथ काहि पर कीजिअ रोसू।।
तात बिचारु करहु मन माहीं। सोच जोगु दसरथु नृप नाहीं।। (2/172/1–2)

अर्थात् किसी अन्य को दोष देने का विचार छोड़ दो, क्योंकि यह सब विधाता के हाथ में है। यह व्यवस्था किसी व्यक्ति विशेष की बनाई नहीं है।

हमें यह सोचना चाहिए कि हमें ईश्वर ने इस धरा पर किसी विशेष प्रयोजन से भेजा है। इस मानव तन को उन्होंने सुख–दुःख, हर्ष–विषाद आदि को सहन करने की क्षमता भी प्रदान की है। संसार में दुःख क्यों? क्या ईश्वर की संरचना दुःख बाँटने की है, विवेक कहता है नहीं, फिर कैसे समझा जाए कि ईश्वर दयालु (दयावान) हैं। प्रकृति गुण–दोषमयी है, जीव खिलौना है और खेलने वाला ईश्वर। अपने खिलौनों से जितना प्रेम एक बालक करता है, उससे अधिक ईश्वर को अपने खिलौनों से प्रेम है। स्वयं श्रीरामजी का कथन है–

मम माया संभव संसारा। जीव चराचर बिबिध प्रकारा।।
सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।। 7/86/3–4)

ईश्वर इतना दयालु है फिर यह दुःख की छाया सारे संसार को अपने साये में क्यों लिए है, लगभग सभी प्राणी इस काली छाया से क्यों नहीं बच पा रहे हैं? यही विमर्श का विषय है, जो चिंतन ही राह दिखाता है। ध्यान रहे चिंता रास्ते बंद कर देती है, पर चिंतन बंद रास्तों को खोलता है। युगों–युगों से इस विषय पर विचार–विमर्श चल रहा है। समय के आँगन में चिंतन के जो दीपक पवन की मौजूदगी में जल रहे हैं, भय लग रहा है कि कहीं शंका रूपी पवन का तेज वेग उन दीपकों को बुझा न दे। ऋणात्मक धारा आगे–आगे चलती है, शंका प्राणी का स्वाभाविक गुण है, फिर भी ईश्वर के समीप पहुँचने का सुगम–सरल रास्ता है। ईश्वर दयालु है, इसीलिए साधन के रूप में ही दुःख प्रचुर मात्रा में फैला दिया है। इस पर गोस्वामीजी लिखते हैं–

कसें कनकु मनि पारिखि पाएँ। पुरुष परिखिअहिं समयँ सुभाएँ।। (2/283/6)

चिंतन–मनन की शक्ति ईश्वर ने सभी मनुष्यों को प्रदान की है। कौन कितना उपयोग करता है, यह उसकी विचारधारा पर निर्भर है। दवा हमारे पास है जब आवश्यकता हो समय से उपयोग करें। निराशा ने आशा के दर्पण पर इतनी धूल की परतें चढ़ा दी हैं

कि एक परत उतरने के बाद भी आशा का दर्पण मैला ही बना रहता है और हम अपने प्रयत्नों में असफलता ही पाते हैं। दुःखी हो जाते हैं। वर्षों की जमीं धूल की सफाई एक दिन का कार्य नहीं है, धोते–धोते एक दिन जब प्रकाश की किरण से दर्पण का चेहरा चमकने लगेगा, तब दुःख का अंधकार स्वतः ही भाग जाएगा और मानव सुखी हो जाएगा, क्योंकि वह सहज ही सुख की राशि का अंश है, यथा–

ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।। (7/117/2)

समस्त जीवन का खेल मन पर आधारित है और जब हम मन से किसी बात को समझ लेते हैं, किसी नीति को समझ लेते हैं, तब हमारे जीवन में एक प्रकाश पुंज उपस्थित हो जाता है और फिर वह हमारे भविष्य के रास्तों का पथ–प्रदर्शक बनता है। यहाँ यह समझने की आवश्यकता है कि मन क्या है? मन का विमर्श धर्म ग्रंथों के पृष्ठों का चिंतन का विषय रहा है। क्या यह कोई स्वतंत्र इकाई है, जो इस काया में निवास करते हुए भी स्वतंत्र एवं स्वच्छंद कार्य करने वाली प्रवृत्ति वाला है। यदि इस मन को मानव चिंता छोड़कर भगवत्चिंतन में लगा दें, तो दुख स्वयं ही समाप्त हो जाएगा। अयोध्याकाण्ड का ही प्रसंग है, जब महाराज जनक श्रीसीतारामजी से मिलने चित्रकूट की यात्रा पर थे, तब उनका मन तो श्रीसीतारामजी के पास चला गया था, इसीलिए उन्हें मार्ग की यात्रा, जो बिना विश्राम किए कर रहे थे, के कष्ट का अनुभव ही नहीं हुआ। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

दुघरी साधि चले ततकाला। किए बिश्रामु न मग महिपाला।। (2/272/5)
राम दरस लालसा उछाहू। पथ श्रम लेसु कलेसु न काहू।।
मन तहँ जहँ रघुबर बैदेही। बिनु मन तन दुख सुख सुधि केही।। 2/275/3–4)

स्फुरण क्रिया ईश्वरीय प्रेरणा से उत्पन्न भावना मन की संवेदना ही है। इसीलिए मन का विचरण स्वच्छंद एवं आधिकारिक स्वभाव की वृत्ति वाला है। प्राणी में स्फुरण ही जीवन का स्वरूप है। जीव के स्फुरण को मन भी कहते हैं। पंचभूत (जिनसे मानव शरीर बना है), इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार ये सभी ईश्वर की जड़ प्रकृति के अंश हैं। इन सबको प्रकाशित करने वाला चेतन तत्व है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।। (1/117/5–6)

अर्थात् विषय, इंद्रियाँ, इन्द्रियों के देवता और जीवात्मा–ये सब एक की सहायता से एक चेतन होते हैं। इन सबका जो परम प्रकाशक है (अर्थात् जिससे ये सभी प्रकाशित होते हैं), वही अनादि ब्रह्म अयोध्या नरेश श्रीरामचंद्रजी हैं। बुद्धि, चित्त, अहंकार, कल्पना, स्मृति, वासना, अविद्या, माया और प्रकृति इत्यादि सब मन से ही संचालित हैं। निरंतर परम सत्ता का स्फुरण ही संसार की चेतना शक्ति है। इसे विद्युत ऊर्जा के प्रभाव की तरह समझा जा सकता है। स्फुरण शक्ति का वह निरंतर प्रवाह है, जिसके बल से ही हमारी सत्ता का

अस्तित्व बना हुआ है। अहंकार मन के आँगन में हलचल पैदा कर काया को कर्ता के अभिमानी स्वरूप का अभ्यासी बना देता है। जीवनपर्यंत कर्ता भ्रम को पाले बाजी हारता रहता है और जब समझ में आता है, तब साधना के लिए समय ही शेष नहीं रहता और तब पछताने के अलावा कुछ नहीं होता। स्वयं श्रीरामजी अयोध्यावासियों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं–

बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा।। (7/43/7–8)
सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोस लगाइ।। (7/43)

पश्चात्ताप की आग भूल के परिणामस्वरूप चिंतन में बाधा उत्पन्न करने लगती है। शेष समय की अवधि का उपयोग साधना में न होकर, चिंता की कालिमा में समाती नजर आती है। ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण ही उस स्फुरण के प्रति एक रास्ता हो सकता है। समस्त द्वंद्वों की समाप्ति, शरणागत भाव से ही जीवन को नवीनता प्रदान कर सकता है। मन की गति भी इसी भाव में समाहित है। मन कर्म रूप भी है, क्योंकि स्फुरणा आते ही कर्म के लिए मानव उद्यत हो जाता है। कर्म–फल का परिणाम अवश्य ही भोग्यमान भोग है। यह ईश्वरीय कृपा है कि भोग फल को भोगने के लिए व्यवस्था का निर्धारण किया गया है। जिस प्रकार का भोगफल है, जीव को उसी प्रकार की योनि, परिस्थिति, वातावरण आदि प्रदान होता है। समस्त कर्म–फल संचित होकर भी प्रारब्ध नहीं बनते, ईश्वर के प्रति समर्पण की भावना, प्रार्थना के परिणाम स्वरूप कुछ कर्म–फल प्राप्त योनियों में भोग्यमान होते जाते हैं। जो भी हम कर्म करते हैं, वह तुरंत हमारे संचित कर्मों में शामिल हो जाता है। असंख्य जन्मों के संचित कर्मों का कुछ अंश प्रारब्ध बनकर प्राणी को उस योनि में भोग के लिए प्रस्तुत हो जाता है। चौरासी लाख योनियों के चार प्रकार के जीवों (उद्भिज, अण्डज, स्वेदज एवं जरायुज) में केवल मानव शरीर ही कर्मयोनि और भोगयोनि दोनों हैं अर्थात् केवल मनुष्य ही कर्म करने का अधिकारी है, पर वह भी प्रारब्ध से बँधा हुआ है और उसी के अनुसार उसे दुख–सुख प्राप्त होता है, किंतु यदि वह ईश्वर के शरणागत होकर आर्त्तस्वर से प्रार्थना करता है, साधना करता है, मंत्र जप करता है तो ईश्वर की कृपा से उसके कुछ नवीन कर्म (क्रियमाण) प्रारब्ध में शामिल हो जाते हैं और उसको मनोवांछित फल प्राप्त करा देते हैं। श्रीरामजी के गुणानुवाद में वह शक्ति है कि वह विधि के लिखे अंक अर्थात् प्रारब्ध को भी बदलकर दुख दूर करके सुख प्रदान कर सकते हैं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।
मंत्र महामनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के।। (1/32/2 एवं 9)

उल्लेखनीय है कि श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका में 'मानस के सिद्ध मंत्र दिए गए हैं। भगवत्शरणागत होकर श्रद्धा–विश्वास पूर्वक भावसहित उनके जप से हम विभिन्न संकटों और दुखों से बच सकते हैं।

गोस्वामीजी ने सुंदरकाण्ड के समापन पर लिखा है कि श्रीरघुनाथजी के गुण समूह सुख के धाम, संदेह का नाश करने वाले और विषाद का दमन करने वाले हैं। अरे मूर्ख मन! तू संसार की आशा त्यागकर निरंतर इन्हें गा और सुन।

सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।। (5/60/छंद)

इस प्रकार हम श्रीरघुनाथजी के गुणगान सुनकर–गाकर दुखों से छुटकारा पा सकते हैं। दुख में ईश्वर का स्मरण करना, उन्हें आर्त्तस्वर से पुकारना भक्त की श्रेणी में आता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।। (1/22/6)

चार प्रकार के भक्त हैं–आर्त्ती, अर्थार्थी, जिज्ञासु और ज्ञानी। आर्त्ती अर्थात् दुख में ईश्वर को पुकारने वाला भक्त। इसे सकाम भक्ति कहा गया है। इससे भक्त के दुख तो दूर होते ही हैं और जीवन का परम लक्ष्य भगवत्प्राप्ति भी हो जाती है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख संपति नाना बिधि पावहिं।।
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं। अंतकाल रघुपति पुर जाहीं।। (7/15/3–4)

जहाँ सुखद परिणाम कर्तापन का अभिमान पैदा करता है, वहीं दुखद परिणाम, अविद्या के सहारे कर्ता होने के भाव से बचाता रहता है और भगवान की याद भी कराता रहता है। इस प्रकार से दुख हमारी साधना में सहायक बन जाते हैं। अक्सर दुख में भगवान की याद आती है और हम सुख में उन्हें भुला देते हैं। संत कबीर कहते हैं–

दुख में सुमिरन सब करैं सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे दुख काहे को होय।।

श्रीभद्भागवत का उस समय का प्रसंग है जब श्रीकृष्णजी ने पाण्डवों को स्पष्ट रूप से बता दिया कि मैं भगवान हूँ, यद्यपि उनके चमत्कारों से वे पहले ही इस तथ्य को समझ गए थे। उन्होंने पाण्डवों से कहा जिसे जो चाहिए, माँग लीजिए। कुन्ती ने यह वर माँगा कि कृष्ण मुझे दुख चाहिए, क्योंकि तुम दुख में ही याद आते हो और मैं चाहती हूँ कि तुम्हारी याद सदा बनी रहे।

प्राणी दूसरों के द्वारा किए गए कर्म से भ्रमित होता रहता है। यही राग–द्वेष का स्वरूप है। संसार सागर स्वरूप है। सागर में सरिताओं का मीठा जल भी मिलकर खारा हो जाता है। अच्छा हो यदि जीवन–सरिता के मुहाने से पहले ही दुःख की कड़वाहट को

मीठे जल से मिटाने के विचार को अपना लें। पर्वत और समुद्र में फेंकी गई अशुद्धियाँ वापस आ जाती हैं, स्वीकार नहीं होती, इसी प्रकार मन विकृतियों से दूर भागता है, स्वतंत्र स्वरूप का स्वामी बंधन की रज्जुओं में बँध नहीं सकता, बार–बार संचेतना बनकर सामने आता है। स्थिर रहना मन का स्वभाव नहीं है। गति ही जीवन है, गति रुक जाने से जीवन का प्रवाह भी रुक जाता है। संसार चलायमान प्रतीकों से व्यवहार करता है और रुके हुए प्रतीक संसार की भागम भाग से पृथक होने लगते हैं। आशा की डोर चलायमान संसार के मजबूत पायों की कल्पना से अबद्ध रहना चाहती है। बहते हुए जल में अशुद्धियों को दूर करने एवं शुद्ध करने का स्वाभाविक गुण बना रहता है। स्थिर जल में गंदगी हो जाना स्वभावतः निश्चित है। जीवन की गति प्राण के अधीन है, अतः जीवन गतिमान रखना आवश्यक है। प्राण निकल जाने के बाद सड़न ही प्रारंभ हो जाती है। जिस शरीर से इतना प्यार था, उसे बाहर निकालकर रखना भी संभव नहीं होता, उसको जितना शीघ्र हो सके, विलीन करने की क्रिया में जुट जाते हैं। इस अनित्य काया में सड़न का सिलसिला जारी है। प्राण (चेतन) ही है जो इस सड़न को शुद्ध कर रहा है।

महात्मा तुलसीदासजी ने अपनी लेखनी के माध्यम से जिन नीति बातों का विस्तृत, प्रामाणिक उल्लेख किया है, वर्तमान में वे सभी प्रासंगिक हैं। आज का समाज दुःख निवृत्ति के लिए साधन खोज रहा है, ऐसे समय में श्रीरामचरितमानस जीवन की संजीवनी है। दुखी प्राणी की सोचने समझने की शक्ति समाप्त हो जाती है और दोषारोपण के लिए निश्चित रूप से वह कभी अपने को, कभी दूसरों को दोषी मानता है, लेकिन तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस में नीतियों की जो भरमार की है सतत् पठनीय है। ये नीतियाँ हर स्थिति और परिस्थितियों में जीवन के लिए पथप्रदर्शक हैं। श्रीरामचरितमानस में वर्णित नीतियाँ बताती हैं कि हमें जीवन को किस प्रकार सुचारु रूप से चलाना है।

मुनि वसिष्ठजी भरतजी को पुनः समझाते हुए कह रहे हैं कि यह सोच (दुख) करने का समय नहीं है। वे कहते हैं कि आपके पिता राजा दशरथजी को वचन प्रिय थे। वचन पालन के समय उन्हें प्राण भी प्रिय नहीं थे। इसलिए हे तात! पिता के वचनों को प्रमाण (सत्य) करो। राजा की आज्ञा शिरोधार्य करो। इसमें तुम्हारी सब तरह से भलाई है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

नृपहि बचन प्रिय नहिं प्रिय प्राना। करहु तात पितु बचन प्रवाना।।
करहु सीस धरि भूप रजाई। हइ तुम्ह कहँ सब भाँति भलाई।। (2/174/5–6)

अति व्यथित भरतजी को मुनि वसिष्ठजी सब प्रकार से समझाते हुए नीति वचन कह रहे हैं कि सोच तो उस ब्राह्मण के बारे में करना चाहिए, जो वेद विहीन है। सोच तो उस राजा का करना चाहिए, जो नीति नहीं जानता और जिसको प्रजा प्राणों से प्यारी नहीं

है। सोच तो उस वैश्य के बारे में करना चाहिए जो धनवान होकर भी कंजूस है और अतिथि सत्कार नहीं करता। सोच तो उस शूद्र के बारे में करना चाहिए जो ब्राह्मणों का अपमान करता है, बहुत बोलने वाला, अपना सम्मान चाहने वाला और ज्ञान का घमंड रखने वाला हो। सोच उस स्त्री के बारे में करना चाहिए जो पति को छोड़कर चली जाती है, कुटिल, कलह प्रिय और स्वेच्छाचारिणी है। सोच उस ब्रह्मचारी के लिए करना चाहिए जो ब्रह्मचर्य व्रत छोड़कर गुरु की आज्ञा के अनुसार नहीं चलता।

इस तरह महात्मा तुलसीदासजी ने उन तमाम नीतियों का वर्णन किया है, जो हमारे जीवन में मार्गदर्शन करती हैं। श्रीरामचरितमानस मानसरोवर की तरह है, जिसमें संकल्प–विकल्प सभी कुछ दिखाई देते हैं। मन से उत्पन्न होने वाले विचार किस तरह उत्पन्न होते हैं और उनका क्या समाधान है, यह सब श्रीरामचरितमानस में वर्णित है, जो हमें रास्ता दिखाता है। मानस का लेखन सतत् अध्ययन के बाद तथा ईश्वरीय प्रेरणा से किया गया है। वर्तमान समय में श्रीरामचरितमानस की उपयोगिता और अधिक बढ़ गयी है। यदि हम अपने घरों में अपने बच्चों को श्रीरामचरितमानस का अध्ययन करवाएँ तो निश्चित रूप से आने वाली पीढ़ी, केवल परिवार नहीं, राष्ट्र और देश–दुनिया के लिए एक बहुत बड़ा संदेश होगा और इसमें वर्णित नीतियाँ लोगों को प्रेमभाव से जीवन को जीने की कला सिखाएँगी। किस तरह व्यवहार करना है, पिता का क्या कर्तव्य है, भाई का क्या कर्तव्य है, स्त्री का क्या कर्तव्य है, सेवक का क्या कर्तव्य है आदि–आदि इसमें उदाहरण सहित वर्णित हैं। इस प्रकार से यह महान ग्रंथ दुनिया के लिए प्रकाश पुंज की तरह है। इसमें वर्णित नीतियों का पालन करने से वातावरण **'रामराज्य'** की तरह हो जाएगा, जहाँ कोई दरिद्र और दुखी नहीं होगा। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना।। (7/21/6)

इस प्रकार से श्रीरामचरितमानस के विभिन्न प्रसंगों को आत्मसात् करने और तदनुसार अपने आचरण में सुधार लाने से **'दुःख निवृत्ति'** संभव है।

निवेदन है कि सुधी पाठक इस अकिंचन के भावों को भावनापूर्ण दृष्टि से पढ़ें, तो निश्चित ही उन्हें आनंद प्राप्त होगा, जो मेरे लिए बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

अकेले हो, परमात्मा को याद करो। परेशान हो, ग्रंथ पढ़ो।
उदास हो, कथाएँ पढ़ो। टेंशन में हो, श्रीरामचरितमानस/गीता पढ़ो।
फ्री हो, अच्छी शिक्षाएँ आगे बढ़ाओ।
हे परमात्मा हम पर और समस्त प्राणियों पर कृपा करो।

ज्ञान–भक्ति और शरणागति

पं. दिनेश्वर मिश्र, कानपुर (उ.प्र.), फोनः 7881102951

सौभाग्यशाली भक्तवृन्द! आइए पहले श्रीमद्भागवत् के एक प्रसंग से इसका श्रीगणेश करें। एक बार गौएँ चराते हुए भगवान श्रीकृष्ण ग्वाल बालों के साथ बृन्दावन से बहुत दूर निकल गए। वहाँ अचानक ही ग्वाल बालों को बड़ी भूख लगी। भगवान ने अपने मित्रों से कहा, ''यहाँ से थोड़ी दूरी पर वेदवादी ब्राह्मण यज्ञ कर रहे हैं, तुम उनकी यज्ञशाला में जाओ और मेरा तथा मेरे बड़े भाई बलराम का नाम लेकर, थोड़ी सी अन्न सामग्री माँग लाओ।'' ग्वाल बालों ने यज्ञशाला के सन्निकट जाकर, बड़ी विनम्रता से ब्राह्मणों को प्रणाम कर उनसे भोजन की याचना की, परन्तु ब्राह्मण देने को प्रस्तुत नहीं हुए, अतः ग्वाल बाल वापस लौट आए। अब देखें–वेदों में यज्ञ की महिमा का गान किया गया है। अनेक उत्कृष्ट यज्ञों द्वारा प्राप्त होने वाले फलों का बड़ा ही आकर्षक वर्णन उनमें मिलता हैं। वेद परम प्रमाण हैं, किंतु क्या यज्ञ मंत्रों द्वारा दी जाने वाली आहुतियों का ही द्योतक है? मानो इस प्रसंग के माध्यम से भगवान श्रीकृष्ण, मित्रों को धर्म के सर्वोत्कृष्ट रूप का परिचय करा रहे थे। यहाँ उनका तात्पर्य यही था कि शास्त्रों में धर्म की चाहे जितनी गंभीर व्याख्या की गयी हो, उसके भले ही दस लक्षण हों, किंतु उन सबका तात्पर्य यही है कि परोपकार ही सबसे बड़ा धर्म है। धर्म का पालन यदि स्वार्थ और स्वहित का ही साधन बन जाए, तो वह 'सार्वभौम धर्म' नहीं हो सकता। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।। (7/41/1)

श्रीरामचरितमानस में गीधराज जटायु, कामदेव आदि पात्रों ने परहित हेतु ही अपने प्राणों की बाजी लगा दी। धर्माभिमानी यज्ञरत ब्राह्मणों की निष्ठुरता से दुखी मित्रों को धैर्य बँधाते भगवान श्रीकृष्ण ने कहा, तुम लोग यज्ञ करने वाले ब्राह्मण–पत्नियों के पास जाकर भोजन माँग लो और विश्वास रखो कि वे तुम्हें मनचाहा भोजन दे देंगी, हुआ भी यही। वे ब्राह्मण–पत्नियाँ प्रभु की मनोहर लीलाओं को सुनती थीं और वे श्रीकृष्ण दर्शन को लालायित थीं। उन ब्राह्मण–पत्नियों ने श्यामसुन्दर व ग्वाल बालों के लिए विविध प्रकार की भोजन सामग्री बनाई और खिलाने के लिए श्यामसुन्दर के पास चल पड़ीं। प्रभु ने उनके व्यंजनों के साथ उनका भरपूर स्वागत किया। महर्षि वेदव्यास ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। इस प्रसंग में वेदवादी ब्राह्मणों और उनकी पत्नियों में भावनात्मक दृष्टि से जो भिन्नता है, वह हृदयंगम करने योग्य है। शास्त्रज्ञ विद्वानों का भगवान श्रीकृष्ण को पहचानने में विलम्ब, यही सिद्ध करता है कि निर्गुण–निराकार ब्रह्म के संदर्भ में ज्ञान की चाहे जितनी सार्थकता

हो, सगुण साकार ब्रह्म तो भक्ति के माध्यम से ही हृदयंगम किया जा सकता है। यहाँ आध्यात्मिक शब्दावली में जिस स्वरूप की कल्पना की गयी है, उसमें 'ज्ञान' को पुरुष रूप में रखा गया है और 'भक्ति' को नारी के रूप में। व्याकरण की दृष्टि से भी यदि ज्ञान पुल्लिंग है तो भक्ति स्त्रीलिंग। नारी और पुरुष में समानतायें होते हुए भी कुछ भिन्नताएँ तो हैं ही। पुरुष यदि विचार–प्रवण होता है, तो नारी बहुधा भावनाओं के द्वारा संचालित होती है। बुद्धि की यह सहज प्रवृत्ति है कि किसी बात को वह सरलता से स्वीकार नहीं करती, उसकी अपेक्षा हृदय, बड़ी ही सरलता से किसी को अपना लेता है। बुद्धि यदि जानकर मानती है तो भावना मानती पहले है और जानती बाद में है।

श्रीरामचरितमानस के उत्तरकांड में ज्ञान और भक्ति का जो तुलनात्मक विवेचन किया गया है, वह समझने योग्य है। गरुड़ की जिज्ञासा थी, 'ज्ञान और भक्ति में अन्तर क्या है?' पक्षिराज गरुड़ की दृष्टि में ज्ञान का ही महत्त्व सर्वाधिक है। शास्त्रों की धारणा भी इसी रूप में दिखाई देती है, यथा–

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति।। (गीता–4/38)

श्रीरामचरितमानस में भी पक्षिराज का मत है–

कहहिं संत मुनि बेद पुराना। नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना।। (7/115/9)

इसलिए जब भुशुंडिजी से उन्होंने सुना कि ज्ञान की तुलना में भक्ति पक्ष अधिक महत्वपूर्ण है, तो इसे वे सरलतापूर्वक ग्रहण नहीं कर पाए और अपनी एतदर्थ जिज्ञासा प्रकट की। भुशुंडिजी ने ज्ञान और भक्ति के पार्थक्य पर प्रकाश डालते हुए, उसका दिव्य विश्लेषण इस रूप में किया।

मनुष्य की प्रवृत्ति को प्रेरित करने वाली शास्त्र अवधारित ''माया'' ही आवरण की सृष्टि करती है, जिससे सत्य का दर्शन नहीं हो पाता। इसी माया के कारण ही व्यक्ति बंधन में बँध जाता है, जिससे छूट पाना उसके लिए कठिन हो जाता है। भुशुंडिजी की दृष्टि में नारी, नारी के रूप के प्रति आकृष्ट नहीं होती। माया नारी है तथा ज्ञान और वैराग्य पुरुष हैं। इसलिए माया, ज्ञान और वैराग्य की ओर आकृष्ट होती है और ज्ञानवान तथा वैराग्यवान पुरुषों को सम्मोहित करने की चेष्टा करती है, किंतु जहाँ भक्ति है, वहाँ माया का प्रवेश नहीं है। माया, भक्त को सम्मोहित कर अपनी ओर आकृष्ट करने की चेष्टा भी नहीं करती, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना।।
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती। अबला अबल सहज जड़ जाती।। (7/115/15–16)
पुरुष त्यागि सक नारिहि जो बिरक्त मति धीर।
न तु कामी बिषयाबस बिमुख जो पद रघुबीर।। (7/115क)
सोउ मुनि ग्याननिधान मृगनयनी बिधु मुख निरखि।

बिबस होइ हरिजान नारि बिष्नु माया प्रगट।। (7/115ख)

मोह न नारि नारि कें रूपा। पन्नगारि यह रीति अनूपा।।
माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ। नारि बर्ग जानइ सब कोऊ।।
पुनि रघुबीरहि भगति पियारी। माया खलु नर्तकी बिचारी।।
भगतिहि सानुकूल रघुराया। ताते तेहि डरपति अति माया।।
राम भगति निरुपम निरुपाधी। बसइ जासु उर सदा अबाधी।।
तेहि बिलोकि माया सकुचाई। करि न सकइ कछु निज प्रभुताई।।
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी। जाचहिं भगति सकल सुख खानी।। (7/116/2–8)

यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानइ कोइ।
जो जानइ रघुपति कृपाँ सपनेहुँ मोह न होइ।। (7/116क)

इन पंक्तियों पर गहराई से विचार करने पर, यह विश्लेषण मनोवैज्ञानिक प्रतीत होता है। दुर्गुण और सद्गुणों का इनमें प्रयोग, सही परिप्रेक्ष्य में किया गया है। 'अभिमान' शब्द पुल्लिंग है तथा 'ममता' स्त्रीलिंग। यही मानव जीवन का तथ्य भी है। पुरुष में अहंकार की वृत्ति प्रबल होती है, अपने स्वामित्व का गर्व होता है, इसलिए प्रयत्न के लिए 'पुरुषार्थ' शब्द का प्रयोग किया जाता है। कर्म तो नारी और पुरुष दोनों के द्वारा सम्पन्न होता है, किंतु उसे 'पुरुषार्थ' कहना, यही सिद्ध करता है कि इस पर पुरुष ही अपना एकाधिकार मानता है। यद्यपि पुरुष और नारी, दोनों मिलकर ही सृष्टि का सृजन करते हैं, तथापि उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति में भिन्नता है। पुरुष यदि बीज का बपन करता है, तो उसे धारण करने का कार्य नारी के द्वारा संपन्न होता है। उसे धारण करते हुए नारी को अत्यंत कष्ट उठाना पड़ता है। इतने कष्ट सहकर वह जिस बालक की सृष्टि करती है, उसमें उसकी ममता स्वाभाविक ही अधिक होती है। 'द्वेष' पुल्लिंग शब्द है और ईर्ष्या स्त्रीलिंग। ईर्ष्या की प्रबल वृत्ति से ही द्वेष होता है। द्वेष के माध्यम से ईर्ष्या, प्रतिशोध का सृजन करती है। इस तरह से पुरुष और नारी वृत्तियों का एकत्रीकरण ही समाज में बंधन की सृष्टि करने वाला बन जाता है।

ज्ञान और वैराग्य के द्वारा जो दुर्गुणों पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा की जाती है, इसका भी तात्पर्य यही है कि संघर्ष करने की क्षमता पुरुष में अधिक है। इसलिए यदि दुर्गुणों से युद्ध करना होगा तो उसके लिए भी ज्ञान और वैराग्य जैसे शक्तिशाली गुणों का ही आश्रय लेना होगा। यह पक्ष सत्य होते हुए भी समस्याओं से मुक्त नहीं है। स्वभावतः जहाँ ज्ञान और वैराग्य की वृत्ति प्रबल होती है, वहीं पर वासनायें भी उसे अधिकाधिक आकृष्ट करने की चेष्टा करती हैं। ये जो कथायें आती हैं कि तपस्या करते हुए मुनियों की साधना में विघ्न डालने के लिए अप्सरायें आती हैं और अपने आकर्षण से मुनियों को भी बाँध लेती हैं, इनका तात्पर्य यही है। ज्ञान का तात्पर्य है ''सद् और असद् का विवेचन'' तथा वैराग्य का तात्पर्य है, ''असद् का परित्याग और सद् का ग्रहण'', किंतु विचार के द्वारा

मिथ्यात्व का विश्लेषण और उसके परित्याग की चेष्टा, तर्क–संगत होते हुए भी, व्यवहार में तो अत्यंत कठिन है। माया के आक्रमणों को झेल पाना सरल नहीं है। दृष्टांत के रूप में इसे यह कह सकते हैं कि यदि सुदृढ़ भवन का निर्माण किया जाए, तो उसके द्वारा शीत, ताप, वर्षा से रक्षा हो जाती है, किंतु जब भयानक भूकंप आता है, तो वह उसकी नींव को ही हिला देता है और परिश्रम से बनाए हुए इस भवन को नष्ट होने में देर नहीं लगती। ज्ञान वैराग्य के द्वारा जिस रक्षा प्राचीर का निर्माण किया जाता है, वह वासनाओं के भूकंप से क्षणभर में ढह जाता है। रूप का मिथ्यात्व और सर्वव्यापक ब्रह्म का सत्यत्व, नारी सौन्दर्य के सामने आते ही धरा–का–धरा रह जाता है। इसी के दृष्टिगत भुशुंडिजी यह कह उठते हैं कि–

सोउ मुनि ग्याननिधान मृगनयनी बिधु मुख निरखि।
बिबस होइ हरिजान नारि बिष्नु माया प्रगट।। (7/115ख)

भक्ति की विचारधारा इससे भिन्न है। भक्तिशास्त्र रूप के मिथ्यात्व पर उतना बल नहीं देता, अपितु यह कहता है कि नेत्रेन्द्रिय के लिए रूप–आकर्षण स्वाभाविक है। यदि नेत्र को रूप की आवश्यकता है, तो उस शाश्वत रूप–सिंधु प्रभु की ही खोज क्यों न करे? जिसमें विलक्षण रूप के साथ–साथ लौकिक दोषों का अभाव है। इसलिए भक्त के हृदय में माया सांसारिक रूप का आकर्षण कैसे उत्पन्न कर सकती है? इसी को समझाने के लिए **'मोह न नारि नारि के रूपा।'** का सिद्धांत प्रस्तुत किया गया। इसलिए निर्गुण निराकार ब्रह्म की धारणा में सर्वदा स्थित रहना असंभव नहीं, पर दुष्कर अवश्य है। भक्तों के पास माया के द्वारा आकृष्ट की जाने वाली वस्तुओं का ऐसा उत्तर विद्यमान है कि भक्त माया के प्रलोभनों से बच जाता है। ज्ञानी, बहुधा ब्रह्म में रूप की कल्पना नहीं कर पाता। उसे लगता है कि निर्गुण–निराकार ब्रह्म, सगुण–साकार कैसे बन सकता है? यदि वह साकार हो जाएगा तो क्या उसकी नित्यता और असीमता समाप्त नहीं हो जाएगी? इसकी तार्किक परिणति यह होती है कि उसकी सगुण–साकार में आस्था सरलता से नहीं हो पाती। नारी तो रूप को ही जन्म देती है। वह तो अपने बालक से सहज भाव से प्यार करती है। उसे उसकी सारी चेष्टायें आकर्षक और लुभावनी प्रतीत होती हैं। इसलिए ईश्वर की रूप कल्पना उसके लिए उतनी कठिन नहीं रह जाती। याज्ञिक ब्राह्मणियों ने श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन सुना था, जिससे उनके मन में श्रीकृष्ण के प्रति सहज भाव से आकर्षण पैदा हो गया, अतः श्रीकृष्ण की ओर उन्मुख हो जाना, सरलता से समझ में आता है। जब उन्होंने सुना कि बलराम–कृष्ण भूखे हैं, तब उनका वात्सल्य उमड़ पड़ा। भक्तों के भगवान तो भाव के ही भूखे होते हैं, पर बेचारा विद्वान याज्ञिक, भगवान में भूख की कल्पना कैसे करे? ''राम भूखे भाव के'' की वाक्यावली में गोस्वामीजी इसी सत्य की पुष्टि करते हैं।

शबरी–प्रसंग में भगवान की उस भूख का वर्णन मिलता है, जिससे प्रेरित होकर वे शबरी के फलों को माँग–माँग कर खाते हैं–

कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि।। (3/34)

प्रभु उन याज्ञिक–पत्नियों की वात्सल्यभरी भावना से संतुष्ट हो जाते हैं। वस्तुतः इस माध्यम से वे उन ब्राह्मणों को भी धन्य करना चाहते थे, जो कर्माभिमान के कारण प्रभु तक नहीं पहुँच पाए थे। जब वे देवियाँ धन्य होकर लौटीं, तब उनमें एक ऐसी अलौकिक आभा का दर्शन हुआ, जिससे उन याज्ञिकों में भी भावना का संचार हुआ। उन्हें अपनी त्रुटि का भान हुआ और पश्चात्ताप भी। किंतु जीव की कैसी बिडम्बना है कि इतना होते हुए भी वे कंस के डर से श्रीकृष्ण के पास नहीं गए। इसका तात्पर्य यही है कि जान लेने के पश्चात् भी बिरले ही व्यक्ति प्रभु की शरण में जा पाते हैं। अंतःकरण में सांसारिक ''भय'' के संस्कार इतने प्रबल होते हैं कि उनसे ऊपर उठकर भगवान की कृपा के बिना भगवान तक जाना जीव के लिए संभव नहीं। भगवान, उन ब्राह्मणों से रुष्ट नहीं हुए, अपितु उन्होंने अनुभव किया कि मुझे उनको अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए उन निमित्त कारणों को समाप्त करना होगा, जो जीव और ईश्वर के बीच व्यवधान बने हुए हैं। भक्ति पथ अत्यंत सरल है। यदि इस पथ पर बिरले व्यक्ति ही चल पाते हैं, तो इसका कारण, भक्ति पथ में आने वाली कठिनाइयाँ न होकर, स्वयं उस व्यक्ति की अपनी मनोस्थिति होती है। **विचारपूर्वक हृदय में शरणागति की भावना उदित हो जाना, अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है,** किंतु उसे क्रियात्मक रूप कर पाना अत्यंत कठिन होता है। जैसे रावण के भय के कारण, विभीषण की शरणागति तभी संभव हो पायी, जब आंजनेय ने उसे मानसिक अंतर्द्वंद से मुक्त करने के बाद लंका जलाकर उसके समक्ष रावण की सीमित शक्ति का दर्शन कराकर, उसके भय को निर्मूल कर दिया। इसीलिए **भक्ति की प्राप्ति में संत की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है**। स्वयं श्रीरामजी कहते हैं–

जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई।।
सो सुतंत्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना।।
भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला।। (3/16/2–4)

स्वर्ग में सब कुछ है, लेकिन मौत नहीं।
गीता में सब कुछ है, लेकिन झूठ नहीं।।
दुनियाँ में सब कुछ है, लेकिन किसी को सुकून नहीं।
और आज के इंसान में सब कुछ है, लेकिन सब्र नहीं।।

तुलसी–मानस के श्रीराम

राष्ट्रपति सम्मानित : डॉ0 हरिः ओ३म् तत्सत् ब्रह्म शुक्ल, बाँदा (उ0प्र0), फोन–9336584200

पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदासजी ने रघुवीर श्रीरामजी को अपना इष्टदेव माना है।

जासु कथा कुंभज रिषि गाई। भगति जासु मैं मुनिहि सुनाई।।
सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा।। (1/51/7–8)

उनके राम न केवल ब्रह्म (निर्गुण ब्रह्म एवं अगुण अशरीरी परमात्मा) हैं, न केवल महाविष्णु (सगुण शरीरी परमात्मा) हैं और न केवल मर्यादापुरुषोत्तम (आदर्श महामानव) हैं, वरन् तीनों के सामन्जस्य से पूर्ण परम आराध्य हैं। यहाँ हम उनके ब्रह्मत्व, महाविष्णुत्व और मर्यादापुरुषोत्तमत्व का पृथक्–पृथक् संक्षेप में विवेचन करके तुलसी–मानस के श्रीराम के वैविध्य को स्पष्ट करने की चेष्टा करेंगे।

ब्रह्म वास्तव में निर्गुण है। इसका प्रतिपादन करते हुए गोस्वामीजी लिखते हैं–

अगुन अखंड अनंत अनादी। जेहि चिंतहिं परमारथबादी।।
नेति नेति जेहि बेद निरूपा। निजानंद निरुपाधि अनूपा।। (1/144/4–5)
ब्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप। (1/205)

निर्गुण ब्रह्म से गोस्वामीजी ने श्रीरामजी का भलीभाँति तादात्म्य बताया है–

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।।
सकल बिकार रहित गतभेदा। कहि नित नेति निरूपहिं बेदा।। (2/93/7–8)

गोस्वामीजी ब्रह्म की निर्गुण अवस्था को सगुण अवस्था से भिन्न बतलाते हुए लिखते हैं–

फूलें कमल सोह सर कैसा। निर्गुन ब्रह्म सगुन भएँ जैसा।। (4/17/2)

निर्गुण ब्रह्म का कोई नाम, रूप, गुण नहीं होता। उसके विषय में वेद भी नेति–नेति कहते हैं। वह अनुभवगम्य है। योगीजन समाधि में उसका अनुभव करते हैं। उसकी चर्चा संभव नहीं है। उसकी चर्चा सगुण के माध्यम से ही की जा सकती है। इसीलिए ब्रह्म की सगुण अवस्था भी मानी गयी है। तुलसीदासजी के अनुसार निराकार ब्रह्म साकार रूप में अवतरित होता है–

अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई।। (1/116/2)

ब्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगत बिनोद।

सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या कें गोद।। (1/198)

वही ब्रह्म निर्गुण भी है और वही सगुण भी। गोस्वामीजी के राम भी निर्गुण और सगुण ब्रह्म दोनों ही हैं।

राम सरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धिपर।
अबिगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह।। (2/126)
जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही। (3/32/छंद–1)

ब्रह्म चाहे निर्गुण हो अथवा सगुण, परन्तु इतना तो निश्चित है कि वह सर्वव्यापी है। इसीलिए जहाँ ब्रह्म के रूप की चर्चा की गयी है, वहाँ उनका कोई विशिष्ट आकार न बताकर उनकी विश्वरूपता का वर्णन कर दिया गया है–

बिस्वरूप रघुबंस मनि करहु बचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर अंग अंग प्रति जासु।। (6/14)

श्रीरामजी की दूसरी झाँकी है, उनका महाविष्णुत्व। ब्रह्म के रूप में जो राम निराकार और सर्वदेशीय बताए गए हैं, वे ही इस झाँकी में साकार और एकदेशीय बन गए हैं। गोस्वामीजी ने श्रीरामजी का उल्लेख विष्णु तथा महाविष्णु दोनों रूपों में किया है।

परमात्मा सृजक भी हैं, पालक भी हैं और संहारक भी हैं। गोस्वामीजी ने परमात्मा के पालक तत्त्व को विष्णु के रूप में देखा है। इसीलिए उन्होंने अपने आराध्य श्रीरामजी का तादात्म्य विष्णु के साथ किया है। धर्म की अतिशय ग्लानि से भयभीत पृथ्वी ने गौ का रूप धारणकर जब देवताओं को अपना दुःख सुनाया, तब ब्रह्माजी ने **'सिंधुसुता प्रिय कंता' (1/186/छंद–2)** की स्तुति की थी और देवताओं को दिए गए आश्वासन के अनुसार वे **'निज आयुध भुज चारी' (1/192/छंद–3)** में आयुध धारण किए हुए श्रीरामजी के रूप में प्रकट हुए। उनके हृदय स्थल पर पड़े हुए भृगुचरण के चिह्न 'उरश्रीवत्स' का उल्लेख है। अतएव इस प्रसंग में श्रीरामजी श्रीविष्णुजी के अतिरिक्त कोई अन्य देव नहीं हैं।

गोस्वामीजी ने श्रीरामजी का उल्लेख विष्णुजी के अतिरिक्त श्रीमहाविष्णुजी के रूप में भी किया है। सतीजी जब श्रीरामजी की भगवत्ता की परीक्षा लेने के उद्देश्य से उनके पास गयीं, तब वहाँ उन्हें अनेक ब्रह्मा, विष्णु और महेश श्रीरामजी की सेवा करते हुए दिखलायी पड़े–

देखे सिव बिधि बिष्नु अनेका। अमित प्रभाउ एक तें एका।।
बंदत चरन करत प्रभु सेवा। बिबिध बेष देखे सब देवा।। (1/54/7–8)

गोस्वामीजी के श्रीरामजी ब्रह्मा, विष्णु और शिव को नचाने वाले हैं–

जगु पेखन तुम्ह देखनिहारे । बिधि हरि संभु नचावनिहारे।। (2/127/1)

ब्रह्मा, विष्णु और शिव श्रीरामजी की आज्ञा और शक्ति से ही जगत् का उद्भव, पालन और संहार करते हैं–

जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।। (5/21/5)

सम्पूर्ण विश्व और उसके स्वामी ब्रह्मादि देव श्रीरामजी के वशवर्त्ती बतलाए गए हैं–

यन्मायावशवर्त्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा। (1/वंदना/श्लोक 6)

निष्कर्ष यह कि गोस्वामीजी के श्रीरामजी देवाधिदेव हैं–महाविष्णु हैं–इसलिए वे अद्वितीय हैं–

पूजहिं प्रभुहि देव बहु बेषा। राम रूप दूसर नहिं देखा।। (1/55/3)

भिन्न भिन्न मैं दीख सबु अति बिचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु राम न देखउँ आन।। (7/81क)

गोस्वामीजी के श्रीरामजी की तीसरी झाँकी है, उनका मर्यादा पुरुषोत्तमत्व। इस झाँकी के अनुसार वे परिस्थिति, आकृति और प्रकृति तीनों दृष्टियों से आदर्श पुरुष हैं। उनकी परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए डॉ0 बलदेव प्रसाद मिश्र ने लिखा है–''भारतवर्ष के परम प्रख्यात सूर्यकुल में उनका जन्म हुआ। इन्द्र की भी बराबरी करने वाले चक्रवर्ती सम्राट दशरथ उनके पिता थे। वसिष्ठ के समान अद्वितीय ब्रह्मर्षि और विश्वामित्र के समान अद्वितीय राजर्षि से उन्होंने शास्त्र और शस्त्र की शिक्षा पायी। लक्ष्मण के समान परम पराक्रमी और भरत के समान परम साधु भाई उन्हें मिले। सीता के समान परम सुन्दरी सती शिरोमणि पत्नी उन्हें मिलीं और विदेहराज के समान परम विवेकी श्वसुर उन्हें मिले। हनुमान के समान परम शक्तिशाली सज्जन ने स्वेच्छापूर्वक उनका आजीवन दास्य स्वीकार किया। ऐसी उत्तम परिस्थिति आदर्श नहीं तो और क्या है?'' (**तुलसी–दर्शन–डॉ0 बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ0156**)

श्रीरामजी की आकृति के आदर्श पर तो गोस्वामीजी ने खूब ही लिखा है। श्रीराम शिशु का दर्शनकर वसिष्ठजी चकित रह गए। श्रीराम लला के अनुपम रूप–गुणों का सर्वज्ञ गुरुदेव भी वर्णन नहीं कर सके–

अनुपम बालक देखेन्हि जाई। रूप रासि गुन कहि न सिराई।। (1/193/8)

श्रीरामजी का रूप वय के साथ बढ़ता ही जाता है। थोड़ा बड़े होने पर जिन गलियों में खेलते हुए वे निकलते हैं, उन गलियों के सभी स्त्री–पुरुष उनको देखकर ठिठक कर रह जाते हैं–

जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई। थकित होंहि सब लोग लुगाई।। (1/204/8)

और यौवन की पूर्णता में पहुँचकर–

'अंग अंग पर वारिअहिं कोटि कोटि सत काम' (1/220) से बढ़कर अन्ततः वर्णनातीत हो जाता है–

स्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।। (1/229/2)

चाहे अवध का बालक रूप हो, चाहे मिथिला का किशोर रूप और चाहे वन का तापस स्वरूप, सर्वत्र श्रीरामजी की छटा अद्वितीय है–

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा। जनु मुनिबेष कीन्ह रति कामा।। (2/239/7)

खर–दूषण की सेना श्रीरामजी के सौन्दर्य को देखकर चकित रह गयी। वे उन पर बाण नहीं छोड़ सके–

प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनीचर धारी।। (3/19/1)

बहिन शूर्पणखा के अपमान से आहत, क्रुद्ध खर–दूषण भी श्रीरामजी के सौन्दर्य को देखकर चकित होकर कहते हैं–

हम भरि जन्म सुनहु सब भाई। देखी नहिं असि सुंदरताई।। (3/19/4)

गोस्वामीजी के श्रीरामजी के इस भुवन–मोहन सौन्दर्य का मूल कारण उनकी शोभा नहीं, वरन् **'श्री'** थी। शोभा और **श्री** दोनों ही कभी–कभार पर्यायवाची शब्द के रूप में प्रयुक्त होते हैं, परन्तु **श्री** हमारे साहित्य में एक अद्‌भुत अर्थगुंफित शब्द है। इसमें शोभा है, कल्याण है, पुनीत की भावना है, साथ ही अलौकिकता का स्पर्श भी है, जो आँखों को शोभन लगे वह शोभा है, परन्तु **श्री** ज्यादा सूक्ष्म तत्त्व है। आप्टे कोष में उसे अतिमानवीय गुण कहा गया है। अतिमानवीय इसलिए कि सामान्य मानव इसे अनायास प्राप्त नहीं कर सकता। **श्री** को प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अतिमानवीय संयम और अभ्यास के बीच से गुजरना होगा। गोस्वामी तुलसीदासजी ने बताया है कि सबको अपने मुख की शोभा से वशीभूत करने वाले श्रीरामजी के सौन्दर्य का रहस्य क्या था। वह शोभा नहीं **'श्री'** थी। अयोध्याकाण्ड के प्रारम्भ में ही गोस्वामीजी ने इस रहस्य को बता दिया है–

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।
मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य मे सदास्तु सा मन्जुलमंगलप्रदा।। (2/वंदना–2)

राज्याभिषेक की बात सुनकर जिस चेहरे पर खुशी की तरंग नहीं उठी और वनवास का समाचार सुनकर जिस पर किंचित् भी मलिनता नहीं आई, वही रघुनन्दन के कमलमुख की **'श्री'** है। यह **श्री** जीवन में सर्वत्र समता की स्थिति में रहने वाले के चेहरे पर ही आ सकती है। श्रीरामजी के पास, सिर्फ श्रीरामजी के पास यह **'श्री'** है। इसलिए सभी नर, नारी, देव, असुर, गंधर्व उन्हें देखकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

जो हाल श्रीरामजी की आकृति का है, वही उनकी प्रकृति का भी है। उनका स्वभाव पुरवासी, कुटुम्बी, गुरु, पिता–माता सभी को सुख देने वाला है–

पुरजन परिजन गुरु पितु माता। राम सुभाउ सबहि सुखदाता।। (2/200/6)

पुरुषोत्तम के रूप में श्रीरामजी में सौन्दर्य, शील, स्नेह, त्याग, समता, सत्यनिष्ठा, सहृदयता, गंभीरता, धीरता, निर्भयता, निर्वैरता, शान्ति, क्षमा, दया आदि सद्‌गुण अपने पूरे परिमाण में विद्यमान हैं। मातृभक्ति, पितृभक्ति, गुरुभक्ति, पत्नी प्रेम, भातृ प्रेम एवं प्रजा रंजकता जितनी श्रीरामजी में है, उतनी किसी अन्य में नहीं दिखती। वे आर्तों के रक्षक, आततायियों के भक्षक एवं मान्य मर्यादाओं के संरक्षक हैं। वे ऐसे आदर्श पुत्र हैं, जिन्होंने माता और विमाता में कभी कोई भेद नहीं माना और पिता के वचनों की रक्षा के लिए सहर्ष

चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार कर लिया। वे ऐसे आदर्श बन्धु हैं, जिन्होंने भाई भरत के लिए सर्वस्व त्याग पर ही रुचि दिखलायी थी और अनुज लक्ष्मण की संकटापन्न अवस्था पर अपना सहज धैर्य तक भूल गए थे। वे ऐसे आदर्श पति हैं, जिन्होंने अपनी भार्या सीता के लिए रावण के समान प्रबल पराक्रमी शत्रु से एकाकी लोहा लिया था। वे ऐसे आदर्श मित्र हैं, जिन्होंने सुग्रीव तथा विभीषण के समान विपदग्रस्त व्यक्तियों को सहज अपनाया और अपनी विपन्न अवस्था की चिंता न करते हुए उन्हें परम ऐश्वर्य सम्पन्न किया। वे ऐसे आदर्श राजा हैं, जिनका राज्य संसार में सदा के लिए एक सुन्दर दृष्टांत बन गया है। श्रीरामजी के गुण अनन्त हैं–**'रामु अमित गुन सागर थाह कि पावइ कोइ' (7/92क)**। उनके समस्त गुणों का उदाहरण देकर वर्णन करना वर्णनातीत है, परन्तु उनके कतिपय गुणों की थोड़ी बानगी यहाँ प्रस्तुत कर देना गुणकारक होगी।

श्रीरामजी के सौन्दर्य की कैफ़ियत पूर्व पृष्ठों में आप पा चुके हैं। आइए, उनके शील की झलक प्राप्त करें।

श्रीरामजी एवं लक्ष्मण के साथ महर्षि विश्वामित्र के जनकपुर पधारने पर लक्ष्मण के हृदय में उस नगर के दर्शन की विशेष लालसा पैदा हो गयी। श्रीरामजी अनुज के मन की दशा जानकर किस संकोच एवं शील के साथ गुरु विश्वामित्रजी से आज्ञा माँगते हैं, देखिए–

परम बिनीत सकुचि मुसुकाई। बोले गुर अनुसासन पाई।।
नाथ लखनु पुरु देखन चहहीं। प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं।।
जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाइ तुरत लै आवौं।। (1/218/4–6)

एक दूसरा दृश्य देखिए–धनुर्भंग एवं लक्ष्मण के वार्तालाप से परशुरामजी क्रुद्ध हैं, हाथ में परशु है। युद्ध के लिए श्रीरामजी को ललकार रहे हैं। परन्तु श्रीरामजी, जिन्होंने अभी–अभी भगवान् शिव के उस धनुष को बिना प्रयास कमलनाल की तरह तोड़ा है, जिसे देवता, दनुज, राक्षस और मनुज हिला भी नहीं सके थे, अपराधी की तरह हाथ जोड़कर कह रहे हैं–

राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा। कर कुठारु आगें यह सीसा।।
जेहिं रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी। मोहि जानिअ आपन अनुगामी।। (1/281/7–8)
प्रभुहि सेवकहि समरु कस तजहु बिप्रबर रोसु। (1/281)

श्रीरामजी के शील की माप नहीं की जा सकती। उनके शील की प्रशंसा विरोधी भी करते हैं–

बैरिउ राम बड़ाई करहीं। बोलनि मिलनि बिनय मन हरहीं।। (2/200/7)

श्रीरामजी का शील अनुपमेय है। चाहे पुरवासी हों या वनवासी, स्वजन हों या परिजन, दशरथ हों या जनक, वसिष्ठ हों या विश्वामित्र, अत्रि हों या अगस्त्य, छोटे हों या बड़े सभी श्रीरामजी के शील–समुद्र में गोताखोर की भाँति डूब–उतरा रहे हैं। नीचातिनीच मनुष्य ने भी उनके आत्मीयता का अनुभव करके उनका साहचर्य प्राप्त किया। कोल, किरात,

निषाद, शबर, वानर, रीछ आदि अनेकानेक अनार्य जातियाँ उनके शील के प्रभाव से प्रभावित होकर उनकी ओर खिंच आईं। अपने शील और सौहार्द भाव से उन्होंने सब के हृदय पर अपना अविनश्वर साम्राज्य स्थापित कर लिया है।

श्रीरामजी का जीवन त्यागमय है। सुमंत्रजी के साथ निस्तेज भूमि पर तड़पते हुए पिता महाराज दशरथ के पास पहुँचने पर श्रीरामजी को जब माता कैकेयी ने भरत के लिए राज्य और उनके लिए चौदह वर्ष के वनवास की बात उन्हें सुनायी, वह अवसर उनके जीवन का सबसे कठिन परीक्षाकाल था। यदि श्रीरामजी चाहते तो पुरवासियों एवं मंत्रियों के समर्थित सहयोग से सहज ही राज्य प्राप्त कर सकते थे, किंतु ऐसा न करके उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक राज्य के अधिकार के त्याग की घोषणा करके क्षणभर में वन की राह पकड़ ली। उनके जीवन में नियम की दृढ़ता और त्याग की प्रबलता है। बालि–वध के पश्चात् सुग्रीव का एवं रावण–वध के पश्चात् विभीषण का राज्याभिषेक भी लोक मर्यादा के प्रति उनकी आस्था तथा त्यागवृत्ति के ही प्रमाण हैं।

तुलसी–मानस के श्रीरामजी का चरित मानव जाति के लिए तेजोमय दीप स्तम्भ है। मानव–जीवन की सुख, शान्ति एवं समृद्धि का आगार बनाने के लिए जिन शाश्वत मर्यादाओं (नियामक नियमों) के पालन तथा अंगीकरण की आवश्यकता है, श्रीरामजी उनके समष्टिगत मूर्तरूप हैं। अपने मर्यादित आदर्श रूप में वे एक ऐसे प्रकाश–स्तम्भ के रूप में हमारे सामने आते हैं, जो बीहड़ जग–जंगल में न केवल हमारा मार्ग प्रशस्त करते हैं, वरन् गन्तव्य को सुगम तथा सरस भी बनाते हैं। श्रीरामजी का सारा जीवन मर्यादाओं के प्रति सतत् जागरूकता एवं निष्ठा का प्रतीक है। वे कर्तव्य बुद्धि से सर्वदा मर्यादा का निर्वाह करते रहे।

श्रीरामजी ने गृहस्थ धर्म को त्यागकर विधिवत् वानप्रस्थ ग्रहण नहीं किया था, किंतु पिता की आज्ञानुसार वन में चौदह वर्ष मुनि–वेश बनाकर रहे। उनका वनवास नैमित्तिक था, तथापि उन्होंने मुनिवेश की मर्यादा का भलीभाँति निर्वाह किया है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

राम लखन सिय बिनु पग पनहीं। करि मुनि बेष फिरहिं बन बनहीं।। (2/211/8)

अजिन बसन फल असन महि सयन डासि कुस पात।
बसि तरु तर नित सहत हिम आतप बरषा बात।। (2/211)

मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामजी सौंदर्य, शील, त्याग के साथ शक्ति की भी सीमा हैं। उनमें **'मरुत कोटि सत बिपुल बल' (7/91क)** है तथा वे **'दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन' (7/91/7)** हैं। उन्हें अपनी शक्ति का पता था, तभी तो उन्होंने भुजा उठाकर प्रतिज्ञा की थी कि वे मही को निशिचर हीन कर देंगे। अजेय विराध और कबन्ध तथा ससैन्य खर–दूषण का अन्त श्रीरामजी के शौर्य एवं शक्ति के अनुपम उदाहरण हैं। बालि–वध हेतु वे सुग्रीव से कहते हैं–

सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहिं बान।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गएँ न उबरिहिं प्रान।। (4/6)

रावण जैसे अजेय शत्रु के जीवित रहते ही उसे मार लेने के विश्वास पर वे विभीषण को लंका का राज्य दे देते हैं–

रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड।। (5/49क)

परम कूटनीतिज्ञ एवं अतिशय बलशाली रावण आसानी से नहीं पछाड़ा जा सकता था। श्रीरामजी ने अपनी दूरदर्शिता से उसकी विचार प्रणाली समझकर उसे सवंश समाप्त किया –

जगत बिदित तुम्हारि प्रभुताई। सुत परिजन बल बरनि न जाई।।
राम बिमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा।। (6/104/9–10)

गोस्वामीजी ने श्रीरामजी की लीलाओं के सम्बन्ध में उनके गुण, कर्म, स्वभाव के माहात्म्य का विराट वर्णन किया है। उनके गुण अनन्त हैं, कर्म अनन्त हैं और उनके सौन्दर्य एवं स्वभाव का माधुर्य भी अनन्त है। वे भावग्राही हैं, भक्तवत्सलता से भरपूर हैं और 'करुणानिधान' तो उनकी खास 'बानि' है। उनके बल के लवलेश से त्रैलोक्य के चराचर पर विजय प्राप्त हो सकती है। वे निरवधि हैं। उनकी कोई उपमा नहीं। श्रीरामजी के समान बस श्रीरामजी ही हैं–

निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै। (7/92 छंद)

गोस्वामीजी ने अपने श्रीरामजी से न तो सीता निर्वासन कराया और न शम्बूक–वध। उन्होंने अपने श्रीरामजी को वाल्मीकीय रामायण और अध्यात्म रामायण के श्रीरामजी से भी अधिक उत्कृष्ट चित्रित किया है, फिर भी कुछ लोग उनके द्वारा चित्रित रामचरित में भी दोषोद्भावना कर ही देते हैं। उस संदर्भ में कुछ कहने के लिए यहाँ स्थान नहीं है। इसके लिए तो पाठक, **लेखक का 'रामचरित्र'** उठाकर देखें।

जो ब्रह्म वास्तव में निर्गुण है, उसे अवतारी (नराकार) मानना भक्त की भावना की बात है। अवतार की सिद्धि कोरी तर्क प्रणाली पर नहीं की जा सकती, उसके लिए तो श्रद्धा का सहारा लेना ही पड़ेगा और श्रद्धाजन्य अवतार की मान्यता में बुद्धिवादी तर्क या आक्षेप उपस्थित कर भ्रम तो पैदा कर ही सकते हैं। और तो और साक्षत् भवानी अपने श्रीमुख से यह संदेह जताते नहीं झिझकतीं कि जो दशरथ के पुत्र के रूप में जन्मे हैं, भला वह परब्रह्म–परमात्मा कैसे हो सकते हैं? अन्ततः इसी शंका के निवारण के लिए गोस्वामीजी अपनी रामकथा का स्वयं शिवजी के मुख से उन्हें सुनाकर उनका भ्रम दूर करते हुए कहते हैं–

चरित राम के सगुन भवानी। तर्कि न जाहिं बुद्धि बल बानी।।
अस बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहि भजहिं तर्क सब त्यागी।। (6/74/1–2)

श्रीरामचरितमानस की रचना के प्रारम्भिक वक्तव्य में गोस्वामीजी ने कहा है कि इस ग्रंथ के निर्माण में उन्होंने नाना निगम–पुराण तथा रामायण आदि की भरपूर सहायता ली है। वाल्मीकीय रामायण तथा अध्यात्म–रामायण से तो बहुत कुछ सामग्री उन्होंने अक्षरशः भी अपनायी है, तथापि श्रीरामचरितमानस में उनकी अपनी निजी भी बड़ी विशिष्ट देन है। महर्षि वाल्मीकि ने श्रीरामजी को जहाँ मात्र एक दिव्य चरित्रवान महामानव के रूप में ही चित्रत किया है, वहीं गोस्वामीजी ने श्रीरामजी को परब्रह्म परमात्मा तथा विष्णु/महाविष्णु के अवतार के रूप में प्रस्तुत करने का साहसिक प्रयास किया है। निराकार, सुराकार एवं नराकार श्रीरामजी के समन्वित अलौकिक रूप को जन हृदय में उतारने के प्रयत्न में उन्हें वाल्मीकीय कथानक में से यहाँ–वहाँ बहुतेरी सामग्री काट–छाँट कर देनी पड़ी है। साथ ही बहुत सी बातें अपनी ओर से भी जोड़नी पड़ी हैं, जिससे उनके मानस के श्रीरामजी का अपना एक निजी व्यक्तित्व बन गया है।

वस्तुतः श्रीरामजी एक हैं। वे ही निराकार, सुराकार एवं नराकार हैं। इनमें कोई विरोध नहीं है। अपनी प्रीति–प्रतीत के अनुसार भक्त उन्हें किसी भी रूप में भज सकता है। गोस्वामीजी श्रीरामजी के समन्वित सगुण रूप के उपासक हैं, क्योंकि उन्हीं श्रीरामजी की भुजाएँ ही भक्तों पर दया करती आयी हैं, कर रही हैं और करती रहेंगी। इसका मनोवैज्ञानिक कारण है, भक्त अपने चारों ओर उस भगवान को देखना चाहता है, जो संकट के समय काम भी आ सके। **इसीलिए स्वरूपतः अभिन्न होते हुए भी अंतर्यामी की अपेक्षा बहिर्यामी श्रेष्ठ है।** पुनश्च, गोस्वामी तुलसीदासजी के समन्वित–सगुण–साकार, श्रीरामजी के रूप और गुण का, सौन्दर्य, शील और शक्ति का अनुपम समन्वय है। वे श्रीरामजी के एक ही चरित्र में साक्षात् ब्रह्म, उसके सगुण विग्रह तथा पुरुषोत्तम की प्रतीति कराने में शत–प्रतिशत सफल हैं। **उनके सर्वगुणाकार, शक्तिगत, सच्चिदानन्द स्वरूप मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामजी को हमारा शतशः प्रणाम है।**

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति की आजीवन सदस्या श्रीमती कुसुम पटैरया पत्नी डॉ. भगवानदास पटैरया आश्विन शुक्ल द्वितीया मंगलवार विक्रमी संवत् 2082 तद्नुसार 23 सितम्बर 2025 को पुणे (महाराष्ट्र) में चिरनिद्रा में लीन हो गईं, वे 78 वर्ष की थीं। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि सभी को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

करुणासागर श्रीराम हरे

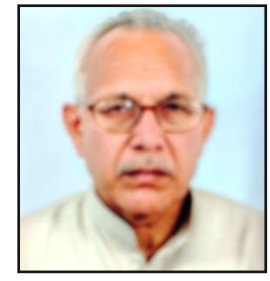

श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल', साहित्याचार्य, नोएडा, फोनः 9311384212

श्रीराम हरे श्रीराम हरे
श्रीराम हरे सुखधाम हरे।
भक्तों के प्राणाधार हरे
करुणासागर श्रीराम हरे।।
श्रीराम सच्चिदानन्दकन्द
अव्यक्त अखण्ड अनंत हरे।
परब्रह्म एकरस अविनाशी
प्रभु अगुण–सगुण भगवंत हरे।।
जग–निर्माता जग–संचालक
जग–परिवर्तक जगपाल हरे।
जग–जगन्नियंता जगदीश्वर
सर्वज्ञ अकाम अकाल हरे।।
जग–कर्ता–भर्ता–संहर्ता
जग–नाटक–नायक राम हरे।
तुम निराकार–साकार ब्रह्म
सुखसार सुखाकर राम हरे।।
घट–घट बैठे सब देख रहे
अन्तर्यामी श्रीराम हरे।
करुणालु कृपालु दयालु सरल
शरणागतवत्सल राम हरे।।
योगी जन रमण करें जिसमें
वह परम तत्व ही राम हरे।
परब्रह्म अखंडानंदकंद
सर्वोपरि सत्ता राम हरे।।
धरती पर धर्मोत्थान हेतु
दशरथ–घर प्रकटे राम हरे।
कौसल्या के दिल के टुकड़े
आँखों के तारे राम हरे।

गुरु–मख–रक्षक खल–दल–भंजक
पतिता–उद्धारक राम हरे।
सीता का पाणिग्रहण किया
शिव–धनु–भंजक श्रीराम हरे।।
हो सके न मिथ्या पिता–वचन
वन गये विहँसते राम हरे।
केवट पर अति अनुकम्पा की
करुणासागर श्रीराम हरे।।
पिघले न भरत की विनती से
दृढ़ संकल्पी श्रीराम हरे।
ठुकराया अवध विशाल राज्य
भाया वन–विचरण राम हरे।।
केकयी एकान्त मिलीं बोलीं
जो किया क्षमा दें राम हरे।
माते! निर्दोष, क्षमा कैसी
जा भवन भजो मन राम हरे।।
दंडक वन पहुँच निजानुज को
उपदेश दिया श्रीराम हरे।
अवतार–कार्य करने उमड़ा
नर–लीला भाव अकाम हरे।।
छलना–छल–छेद दशानन को
दी युद्ध–चुनौती राम हरे।
अरि–दल–वध किया अकेले ही
खर–दूषण–हंता राम हरे।।
मायापति मायिक कंचन मृग
ललचाये ज्ञानी राम हरे।
वध करने दौड़े नंगे पद
मनभावन झाँकी राम हरे।।
निज माया–प्रेरित रावण से
चुरवायीं सीता राम हरे।
फिर पागल भाँति विलखते वन
वन भटके विरही राम हरे।।
कपि–भालु सैन्य–दल साथ लिए
कर दिया कूच रण राम हरे।

पुल बना सिंधु अरि–गढ़ जाकर
निशिचर–संहारक राम हरे।।
वनवास बिता लौटे पुर में
सिंहासन बैठे राम हरे।
तब रामराज्य स्थापित कर
सुख–सुधा वृष्टि की राम हरे।।
भू–भार–हरण कर भू को ही
सुख–स्वर्ग बनाया राम हरे।
सबके मन–मोद–निमग्न किये
नयनाभिराम श्रीराम हरे।।
निर्दोष प्रिया तक को त्यागा
जन–रंजन राजा राम हरे।
पी स्वयं विरह–विष, जनता को
सुख–सुधा पिलायी राम हरे।।
सर्वस्व होम करने वाले
संन्यासी राजा राम हरे।
भू रामराज्य के संस्थापक
न्यायी राजा श्रीराम हरे।।
जय धर्ममूर्ति जय धर्मधुरी
जय धर्मधुरंधर राम हरे।
मर्यादापुरुषोत्तम–पालक
कर्तव्यपरायण राम हरे।।
मानवता–संस्कृति के प्रतिनिधि
जीवन–रस भारत–प्राण हरे।
दुष्टों–असुरों के संहारक
भक्तों का करते त्राण हरे।।
जग भूले–भटके पथिकों को
आये पथ–दर्शक राम हरे।
मानव–कर्तव्य सिखाने को
आये जग–शिक्षक राम हरे।
मैं पढ़ूँ सुनूँ नित रामकथा
ऐसी मति दो श्रीराम हरे।
शरणागतवत्सल सेवक को
पद–पंकज रति दो राम हरे।।

अनुकरणीय है सीताजी की सेवापरायणता

श्री अवध किशोर दूबे, झारखण्ड, फोनः 8409925271

माता–पिता संतान को जैसे संस्कार एवं शिक्षा देते हैं, वे अपने व्यावहारिक जीवन में उसी के अनुसार आचरण करते हैं। सीताजी की माता ने उनके विवाह के पश्चात् अयोध्या के लिए विदा करते समय सीताजी को यह शिक्षा दी–

सासु ससुर गुर सेवा करेहू। पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू।। (1/334/5)

दैवयोग से ससुराल में अल्प समय ही रहने के पश्चात् श्रीरामजी पिताजी की आज्ञानुसार वनवास पर जाने लगे, तब उन्होंने सीताजी को साथ चलने की अनुमति प्रदान कर दी, क्योंकि उन्होंने जान लिया कि यदि उन्हें साथ न ले गए तो वे अपने प्राण त्याग देंगी। सीताजी के मन की भावना यह थी–

चलन चहत बन जीवन नाथू। केहि सुकृती सन होइहि साथू।।
की तनु प्रान कि केवल प्राना। बिधि करतबु कछु जाइ न जाना।। (2/58/3–4)

जब यह निश्चित हो गया कि वे श्रीरामजी के साथ वन जा रही हैं, तब वे सासुजी (माता कौसल्या) से निवेदन करती हैं–

तब जानकी सासु पग लागी। सुनिउ माय मैं परम अभागी।।
सेवा समय दैअँ बनु दीन्हा। मोर मनोरथु सफल न कीन्हा।। (2/69/3–4)

वनवास काल में चित्रकूट प्रवास के समय भरतजी अयोध्या के समाज के साथ श्रीरामजी को मनाने जाते हैं, उस समय सीताजी तीनों सासुओं की समभाव से सेवा करती रहीं, यथा–

सीय सासु प्रति बेष बनाई। सादर करइ सरिस सेवकाई।।
सीयँ सासु सेवा बस कीन्हीं। तिन्ह लहि सुख सिख आसिष दीन्हीं।। (2/252/2-4)

यह है सीताजी की पति के परिवार की सेवापरायणता का अनुकरणीय आदर्श

अब विचार करते हैं सीताजी की पति सेवापरायणता। उनकी माताजी ने ससुराल भेजते समय शिक्षा दी थी–'**पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू।। (1/334/5)**। उनके साथ वन न जाने के लिए श्रीरामजी ने स्पष्ट आज्ञा दी थी और कहा–'**सुमुखि मातु हित राखउँ तोही।। (2/61/8),** पर फिर भी सीताजी ने वन जाने का ऐसा आग्रह किया कि फिर

श्रीरामजी की बाध्यता हो गई, उन्हें साथ ले जाने की। इसका कारण स्पष्ट है कि जब पति पर विपत्ति आए, तब पहले उनका साथ देना चाहिए, क्योंकि–

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।। (3/5/7)

जहाँ तक आज्ञा या उनके रुख (रुझान/चाह) का प्रश्न है, इसका मरम भरतजी ने समझा था। महाराज दशरथ के परलोक सिधारने के पश्चात् जब गुरु वसिष्ठ और मंत्रियों ने, यहाँ तक की माता कौसल्या ने भी सहमति दी थी कि भरत! अब तुम प्रजापालन हेतु पिता की आज्ञा समझकर राज सँभालो, किंतु उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने यह रहस्य जान लिया था कि पिताजी की क्या इच्छा थी। कैकेयी को वरदान देकर भी वे श्रीरामजी को वनवास भेजना नहीं चाहते थे। इस हेतु वे शिवजी से यह प्रार्थना कर रहे थे–

तुम्ह प्रेरक सब के हृदयँ सो मति रामहि देहु।
बचनु मोर तज रहहिं घर परिहरि सीलु सनेहु।। (2/44)

सीताजी ने भी यही विचार किया कि भले ही पति की आज्ञा ही हो, उनको अकेले नहीं जाने दूँगी। सीताजी ने पातिव्रत धर्म के पालनार्थ वन जाने का निश्चय किया, क्योंकि उनके विचार से जिस प्रकार बिना जीव के देह और बिना पानी के नदी की अवस्था होती है, पति के बिना नारी का जीवन वैसा ही है, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।। (2/65/7)

जब सीताजी को वन के असहनीय दुख सुनाए गए, तब सीताजी ने यह कहा–

प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं। मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।। (2/65/6)
छिनु छिनु प्रभु पद कमल बिलोकी। रहिहउँ मुदित दिवस जिमि कोकी।। (2/66/4)

यहाँ पर सीताजी ने वन में रहने में कष्ट के स्थान पर मुदित रहने की बात कही है, पर वे चित्रकूट में निवास के समय मुदित ही नहीं, बल्कि 'प्रमुदित' रहीं, यथा–

राम संग सिय रहति सुखारी। पुर परिजन गृह सुरति बिसारी।।
छिनु छिनु पिय बिधु बदनु निहारी। प्रमुदित मनहुँ चकोर कुमारी।। (2/140/1–2)

चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात् लक्ष्मणजी सहित सीतारामजी अयोध्या आते हैं और उनका राज्याभिषेक होता है। इसके पश्चात् भी सीताजी अपने गृहकार्य स्वयं करती थीं और इस कारण अंतःपुर में किसी सेवक–सेविका का गृहकार्य हेतु प्रवेश नहीं था। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जद्यपि गृहँ सेवक सेवकिनी। बिपुल सदा सेवा बिधि गुनी।।
निज कर गृह परिचरजा करई। रामचंद्र आयसु अनुसरई।। (7/24/5–6)

भक्ति पक्ष अलग विषय है एवं व्यावहारिक जीवन अलग विषय है, अतः आइए पिछले पृष्ठ पर मंत्र की पंक्ति के व्यावहारिक पक्ष पर विचार करते हैं। मंथरा अपनी कुटिल चाल में क्यों सफल हुई? केवल इसलिए कि सरस्वतीजी ने बुद्धि भ्रष्ट कर दी, जी नहीं। इसके पीछे कर्म का भी हाथ है। एक ऐसी दासी के अधीन हो जाना जो स्वभाव से ही वक्री थी **(हँसि कह रानि गालु बड़ तोरें। (2/13/7),** सरस्वती प्रेरणा से पहले भी)। अंतःपुर जहाँ पति–पत्नी का कक्ष है, वहाँ तक मंथरा की ही चलती थी। इतना साथ में रहती है तो गुप्त बातें भी जानती थी। तभी तो उसने कहा था–

कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाहीं। स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाहीं।। (2/22/4)

पति–पत्नी के बीच की बात बताई। पति–पत्नी के बीच दासी आई, तो परिणाम क्या हुआ, हम सभी जानते हैं। आजकल नगरों के लोग दास–दासी रखते हैं और जो दास–दासी भीतर तक बस गए। स्वामी/स्वामिनी को अपने वश में कर लिए, तो परिवार के परिवार टूट रहे हैं। अब सीता चरित को देखिए कि उन्होंने कितनी सावधानी रखी है इस विषय में। जनकजी ने सीताजी के साथ उनकी विश्वस्त एवं प्रिय सेविकाओं को दिया था। महल में दास–दासी बहुसंख्यक हैं और अपने–अपने सेवा क्षेत्र में निपुण भी हैं। एक से बढ़कर एक स्वादिष्ट भोजन बनाने वाले से लेकर हर गृहकार्य विद्या में निपुण लोग हैं, फिर भी सीताजी–**निज कर गृह परिचरजा करई।** अंतःपुर में झाड़ू–पोंछा भी दासी करें, सीताजी ने ऐसे अवसर नहीं आने दिए। आज सेवा करेंगे, कल सेवा के वश में कर लेंगे और फिर पर्दे के पीछे से अपनी सत्ता संचालन करने के उद्देश्य से परिवार को तोड़ देंगे। **देवियों के लिए ये सीता चरित और उनकी सेवापरायणता बहुत ही अनुकरणीय है।**

कर्म और भाग्य

कर्म और भाग्य बैंक–लॉकर की चाबियों की तरह हैं। हर लॉकर की दो चाबियाँ होती हैं। एक आपके पास होती है और एक मैनेजर के पास। आपके पास जो चाबी है वह है परिश्रम (कर्म) और मैनेजर के पास वाली है भाग्य। जब तक दोनों चाबियाँ नहीं लगतीं, लॉकर का ताला नहीं खुल सकता। इस संदर्भ में आप कर्मयोगी पुरुष हैं और मैनेजर भगवान! आपको अपनी चाबी भी लगाते रहना चाहिए। पता नहीं चाबी ऊपर वाला कब लगा दे। कहीं ऐसा न हो कि भगवान अपनी भाग्यवाली चाबी लगा रहा हो और आप परिश्रम (कर्म) वाली चाबी न लगा पायें और इस कारण ताला खुलने से रह जाये।

कर्म करते रहिए, भाग्य भरोसे रहकर अपने लक्ष्य से दूर मत होइए।

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा

श्री कैलाश त्रिपाठी, औरैया (उ.प्र.), फोनः 9897939095

भक्तिमती शबरी को श्रीरामजी ने नवधा भक्ति का उपदेश दिया था। इस लेख में उसी उपदेश में वर्णित पंचम भक्ति पर कुछ विचार प्रस्तुत हैं–

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा। पचंम भजन सो बेद प्रकासा।। (3/36/1)

'मंत्र' एक व्यापक शब्द है, जिसका सामान्य शाब्दिक अर्थ विचार या चिंतन है, लेकिन लक्ष्यार्थ या प्रयोजनार्थ अर्थ अनेक हैं। ऋषियों–मनीषियों द्वारा मंत्र की संस्कृत में सैकड़ों परिभाषाएँ की गयी हैं, कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं–

1. **मनः तारयति इति मंत्रः** अर्थात् मन को तारने वाली ध्वनि ही मंत्र है। ऐसी ध्वनि जिससे मन का तारण अर्थात् कल्याण हो।
2. **मननात् त्रायते यत् मंत्रः** अर्थात् मनन करने पर जो भय से रक्षा करे उसे मंत्र कहते हैं।
3. **मननात् त्रायते यस्मान्तस्यान्मंत्र उदाहृतः** अर्थात् जिसके मनन चिंतन एवं ध्यान द्वारा संसार के सभी दुखों से रक्षा, मुक्ति एवं परम आनंद प्राप्त होता है, वही मंत्र है।
4. **मन्यते ज्ञायते आत्मादि येनः** अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा के आदेश या आवाज पर विचार किया जाये वही मंत्र है।
5. **मन्यते सत्क्रियन्ते परम पदे स्थितः देवताः** अर्थात् जिसके द्वारा परम पद में स्थित देवता का सत्कार (पूजन/हवन आदि) किया जाये वही मंत्र है।

इसी प्रकार हिन्दी में भी मनीषियों ने अनेक प्रकार से 'मंत्र' को परिभाषित करने का प्रयास किया है, यथा–

1. धर्म, कर्म और मोक्ष पाने की प्रेरक शब्द–शक्ति को मंत्र कहते हैं।
2. देवता के सूक्ष्म शरीर या इष्टदेव की कृपा को मंत्र कहते हैं।
3. दिव्य शक्तियों की कृपा को पाने में उपयोगी शब्द–शक्ति को मंत्र कहते हैं।
4. ऐसे विशिष्ट शब्द–समुच्चय, जिनसे हम इष्ट को प्राप्त कर सकते हैं और अनिष्ट बाधाओं को नष्ट कर सकते हैं, को मंत्र कहा जा सकता है।

संदर्भित नवधा भक्ति में मेरे मंत्र का दृढ़ विश्वास के साथ जप करना पाँचवीं भक्ति है–**मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा।**

यहाँ मम, दृढ़ और विश्वास शब्दों में दो–दो संकेत समाहित हैं, मम–मेरे मंत्र का जप और मेरे ऊपर विश्वास, दृढ़–मंत्र जप में दृढ़ता अर्थात् स्थायित्व और विश्वास में भी दृढ़ता, मंत्र पर विश्वास तथा जिसका मंत्र है उस पर विश्वास करके भजन करना अर्थात् मंत्र जपना पंचम भक्ति है।

कौन से मंत्र का जप करना है, इसका यहाँ कोई संकेत न होना अपने–अपने साधन मार्ग, पद्धति, इष्ट और उनके स्वरूपादि के अनुसार या गुरु उपदिष्ट आदि किसी मंत्र का निष्ठा और विश्वास के साथ जप करने का द्योतक है अर्थात् व्यक्ति अपनी निष्ठा, इष्ट और उद्देश्य के अनुरूप मनोवांछित या गुरु उपदिष्ट मंत्र का जप कर सकता है।

राम रहस्य उपनिषद्, श्रीरामपूर्वतापिन्युपनिषद् तथा श्रीरामोत्तरतापिन्युपनिषद् आदि में विभिन्न राम मंत्रों–ऊँ रामाय नमः, ऊँ राम रामाय नमः, ऊँ राम चन्द्राय नमः, ऊँ जानकी वल्लभाय स्वाहा, ऊँ राम भद्राय नमः, ऊँ नमो भगवते राम चन्द्राय, रामभद्र महेश्वास रघुवीर नृपोत्तम। भो दशास्यन्तकास्माक रक्षा कुरु देहि श्रियं च, दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात् आदि मंत्रों का विवेचन है।

श्रीरामजी का विजय मंत्र, **'श्रीराम जय राम जय जय राम। श्रीराम जय राम जय जय राम।।'** जपेय एवं गेय दोनों हैं, अर्थात् इसका जप कर सकते हैं और मानस की चौपाइयों की तरह गायन भी।

अभिप्राय यह है कि अपनी–अपनी दीक्षा व निष्ठा के अनुसार राम या कृष्ण आदि के किसी भी मंत्र का जप पंचम भक्ति है, लेकिन श्रीरामचरितमानस की गीताप्रेस टीका में मेरे (राम) मंत्र के जप का उल्लेख करते हुए 'राम' नाम को मेरे मंत्र के रूप में स्थान दिया है। यहाँ ''राम'' नाम को मेरे मंत्र के रूप में महत्व देना असंगत या निराधार नहीं है, क्योंकि सम्पूर्ण 'मानस' में केवल राम नाम का ही आधार लिया गया है, गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं–

भनिति मोरि सब गुन रहित बिस्व बिदित गुन एक।
सो बिचारि सुनिहहिं सुमति जिन्ह कें बिमल बिबेक।। (1/9)
एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।।
मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।। (1/10/1–2)

अर्थ स्पष्ट ही है कि मेरा काव्य सभी गुणों से रहित है, लेकिन इसमें जगत्प्रसिद्ध एक गुण है। उसका विचार कर अच्छी बुद्धि वाले मनुष्य जिनके अन्दर निर्मल विवेक है, इसे सुनेंगे। उस एक गुण का उल्लेख करते हुए आगे कहते हैं कि इसमें रघुनाथजी का उदार नाम है, जो अत्यन्त पवित्र और वेद पुराणों का सार होने के साथ कल्याण का भवन

और अमंगलों का हरने वाला है, जिसे पार्वतीजी सहित शंकरजी जपते हैं। वस्तुतः यही श्रीरामचरितमानस का सार तत्व है।

तुलसीदासजी के अनुसार ''राम'' नाम मंत्र ही नहीं महामंत्र है। संकेत स्पष्ट है–

महामंत्र जोइ जपत महेसू। कासीं मुकुति हेतु उपदेसू।। (1/19/3)

अब प्रश्न यह है कि क्या शिवजी द्वारा जपा जाने वाला महामंत्र ''राम'' नाम ही है। इसका समाधान श्रीशिवजी के प्रति माँ पार्वती के इस कथन में समाहित है–

तुम्ह पुनि राम राम दिन राती। सादर जपहु अनँग आराती।। (1/108/7)

विभिन्न सनातन धर्मग्रंथों में ''राम'' नाम को महामंत्र की संज्ञा दी गई है, यथा–

यत्प्रभावं समासाद्य शुको ब्रह्मर्षिसत्तमः।
जपस्व तन्महामन्यं राम नाम रसायनम्।। (शुक पुराण)

नारदजी ने भगवान श्रीराम से वरदान माँगा है कि 'राम' नाम सभी नामों से श्रेष्ठ हो, यथा–

राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका।। (3/42/8)

'मानस' के अरण्यकाण्ड में गीधराज जटायु श्रीराम की स्तुति करते हुए कहते हैं–

जे राम मंत्र जपंत संत अनंत जन मन रंजनं। (3/32/छंद)

यहाँ भी तुलसीदासजी ने राम नाम को मंत्र माना है। कोई ''राम'' शब्द को नाम माने या मंत्र, इसका प्रभाव असीम होने के कारण अवर्णनीय है अर्थात् ''राम'' नाम के प्रभाव का वर्णन नहीं हो सकता, तथापि शास्त्रों में इसका अमित प्रभाव वर्णित है। यहाँ उस पर संकेत रूप में एक दृष्टि आवश्यक है। महारामायण में उल्लेख मिलता है कि परमेश्वर के अनन्त नाम हैं, परन्तु उनमें ''राम'' नाम सर्वोत्तम माना गया है–

परमेश्वरनामानि सन्त्येनकानि पार्वति।
परन्तु रामनामेदं सर्वेषामुत्तमं मतम्।।

इसी प्रकार पद्मपुराण में भगवान शंकर के अभिमतानुसार ''राम'' नाम विष्णु के सहस्रों नाम के समतुल्य है। समस्त वेदों और समस्त मंत्रों के जप से कोटिगुणा पुण्य लाभ 'राम' नाम जप से होता है–

जपतः सर्ववेदांश्च सर्वमन्त्रांश्च पार्वति।
तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते।।

श्रीरामरक्षा स्तोत्र में 'राम' नाम को विष्णु सहस्र नाम के समान बताया है, यथा–

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने।।

इसका संकेत श्रीरामचरितमानस में भी है, यथा–

सहस नाम सम सुनि सिव बानी। जपि जेईं पिय संग भवानी।। (1/19/6)

विष्णुपुराण में श्रीवेदव्यासजी कहते हैं कि 'राम' नाम ही सर्वोपरि और सनातन है। विष्णु नारायणादि के सहस्र नामों के सदृश्य एक 'राम' नाम है अर्थात् हजार गुणा अधिक फलप्रद है।

श्री रामेति परं नाम रामस्यैव सनातनम्।
सहस्रनाम सादृश्यं विष्णोर्नारायणस्य च।।

पद्मपुराण के अनुसार भगवान विष्णु का एक–एक नाम भी सम्पूर्ण वेदों से अधिक माहात्म्यशाली माना गया है। ऐसे एक सहस्र नामों के तुल्य एक 'राम' नाम कहा गया है–

विष्णारेक्रैक नामपि सर्ववेदाधिकं मतम्।
तादृङ्नामसहस्रेण राम नाम समं स्मृतम्।।

पद्मपुराण में ब्रह्माजी नारदजी से कहते हैं–

सर्वेषां हरिनाम्नां वै वैभवं रामनामतः।
ज्ञातं मया विशेषेण तस्मात् श्रीराम संजप।।

अर्थात् समस्त प्रभु नामों का ऐश्वर्य–प्रताप श्रीराम नाम के अंशांश से है। इस तथ्य को विशेष रूप से जानकर मैं 'रामनाम' का जप करता हूँ।

अध्यात्मरामायण के अयोध्याकाण्ड में श्रीराम के वनगमन पर व्याकुल समाज को समझाते हुए वामदेवजी कहते हैं कि–

राम रामेति ये नित्यं जपन्ति मनुजा भुवि।
तेषां मृत्यु भयादीनि न भवन्ति कदाचन।।
का पुनस्तस्य रामस्य दुःख शंका महात्मनः।
रामनामैन्व मुक्तिः स्यात्कलौनान्येन केनचित्।।

अर्थात् जो लोग नित्य प्रति राम–नाम जपा करते हैं, उनको भी किसी समय मृत्यु के भय आदि नहीं होते, फिर उन महात्मा राम के लिए तो दुःख की शंका कैसे हो सकती है? कलियुग में तो एक मात्र राम नाम से ही मुक्ति हो सकती है और किसी उपाय से नहीं। यहाँ रामायणकार ने भगवन्नाम के सम्बन्ध में दो बातें कही हैं–

1. भगवन्नाम अभय प्रदाता है।
2. कलियुग में एक मात्र भगवन्नाम ही कल्याण का साधन है।

स्कन्दपुराण में कहा गया है कि सत्ययुग में सम्पूर्ण युग तप करने का जो फल होता है, त्रेतायुग में वही पुण्य पाँच लाख वर्ष तप करने से मिलता है तथा द्वापर युग में

जो एक लाख वर्षों तक तपोऽनुष्ठान का फल प्राप्त होता है, वह कलियुग में केवल एक ही दिन के नाम जप से प्राप्त हो जाता है–

कृते तु युगपर्यन्तं त्रेतायां लक्षपंचकम्।
द्वापरे लक्षयेकं तु दिनैकेन फलं कलौ।।

रामपूर्वतापिन्युपनिषद् में कहा गया है कि यह मंत्र राम का वाचक है और राम वाच्य है, इन दोनों का जो योग है वह सभी प्रकार के साधकों को इच्छित फल देने वाला है, इसमें कोई संदेह नहीं है–

मंत्रोऽयं वाचको रामो वाच्यः स्याद्योग एतयोः।
फलदश्चैव सर्वेषां साधकानां न संशयः।।

नृसिंहपुराण में कहा गया है कि जैसे सूर्योदय होते ही अन्धकार अपने आप समाप्त हो जाता है, उसी प्रकार राम नाम का स्मरण करते ही सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं–

सूर्योदये यथा नाशमुवैतिध्वान्तमाशु वै।
तथैव राम संस्मरणाद्विनाशं यान्त्युपद्रवाः।।

सूतसंहिता में प्रकारान्तर से यही इस प्रकार दृष्टिगत होता है–

रिपवस्तस्य नश्यन्ति न बाधन्ते ग्रहाश्चतम्।
राक्षसाश्च न खादन्ति नरं रामेति वादिनम्।।

अर्थात् जो मनुष्य राम नाम का जप करते हैं उनके शत्रुगण नष्ट हो जाते हैं और उन्हें दुष्ट ग्रह बाधा नहीं पहुँचा सकते। राक्षस भी उन्हें नहीं खा सकते।

श्रीरामरक्षास्तोत्र के अनुसार राम नाम के द्वारा संरक्षित रहने वाले को पाताल, भूतल और आकाश में विचरण करने वाले कपट रूपधारी दुष्ट भी दुःखदायिनी दृष्टि से नहीं देख सकते।

पाताल भूतल व्योम चारिणश्छद्मचारिणः।
न दुष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः।।

शनैश्चरस्मृति में शनैश्चरदेव स्वयं कहते हैं कि मेरे कोप के कारण जो महादुःख समूह को देने वाली ग्रह बाधा आदि उपस्थित हो, तो राम नाम जप के प्रभाव से अल्पकाल में ही शान्त हो जाती है।

मत्कृता या भवेद् बाधा महादुःखौद्यदायिनी।
रामनाम्नो जपोत्साही मुच्यते स्वल्पकालतः।।

'मानस' में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं–

सकल कामना हीन जे राम भगति रस लीन।
नाम सुप्रेम पियूष ह्रद तिन्हहुँ किए मन मीन।। (1/22)

अर्थात् जो समस्त कामनाओं से रहित होकर श्रीराम की भक्ति के रस में लीन हैं, वे भी नाम के सुन्दर प्रेमरूपी अमृत के अगाधकुण्ड में अपने मन को मछली बनाए हुए हैं।

श्रीमद्भागवत् में प्रह्लादजी कहते हैं कि पिताजी! समस्त तापों की एक महौषधि है **'राम–नाम',** फिर 'राम–नाम' जपने वालों को भय कहाँ? आप स्वयं देख लें मेरे शरीर के समीप आकर अग्नि भी शीतल हो गयी है।

रामनाम जपतां कुतोभयं सर्वतापरामनैक भेषजम्।
पश्य तात मम गात्र सन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना।।

'मानस' में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं–

ब्रह्म राम तें नामु बड़ बर दायक बर दानि।
रामचरित सत कोटि महँ लिय महेस जिय जानि।। (1/25)

अर्थात् राम नाम ब्रह्म (निर्गुण) तथा राम (सगुण) दोनों से बड़ा और वरदान देने की सामर्थ्य वालों को भी वर देने वाला है। शिवजी ने यह जानकर ही सौ करोड़ श्लोकी 'रामचरित' से इस 'राम' नाम को ही ग्रहण किया है।

शिवसंहिता में कहा गया है कि–

रामनाम्ना शिवः काश्यां भूत्वा पूतः शिवा स्वयम्।
स निस्तारयते जीवराशीन्काशीश्वरस्सदा।।

अर्थात् राम नाम से काशीश्वर शिवजी स्वयं पवित्र होकर नित्य अनन्त जीवों का उद्धार करते हैं।

श्रीरामचरितमानस में भी यही भाव है। पार्वतीजी को 'राम' नाम की महिमा समझाते हुए शिवजी कहते हैं–

कासीं मरत जंतु अवलोकी। जासु नाम बल करउँ बिसोकी।।
सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी। रघुबर सब उर अंतरजामी।। (1/119/1–2)

अर्जुन को समझाते हुए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! मेरे जन्म और कर्म दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं। इस प्रकार **जो मनुष्य तत्व से जान लेता** है, वह शरीर को त्यागकर फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता, वरन मुझे ही प्राप्त होता है, यथा–

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन।। (गीता 4/9)

यही भाव श्रीरामचरितमानस में वर्णित है, यथा–

चिदानंदमय देह तुम्हारी। बिगत बिकार जान अधिकारी।।

नर तनु धरेहु संत सुर काजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा।। (2/127/5–6)

यहाँ पर भगवान को तत्व से जानने का आशय है कि सर्वशक्तिमान सच्चिदानन्दघन परमात्मा अज, अविनाशी और सर्वभूतों के परम आश्रय हैं। वे केवल धर्म को स्थापन करने, संसार का उद्धार करने एवं अपने भक्तों को परमानंद प्रदान करने हेतु ही अपनी योगमाया से सगुणरूप में प्रकट होते हैं, इसलिए परमेश्वर के समान सुहृद, प्रेमी और पतित–पावन दूसरा कोई नहीं है। जो ऐसा समझकर परमेश्वर का अनन्य प्रेम से निरंतर चिंतन करता हुआ आसक्तिरहित संसार में वर्तता है, वही परमेश्वर को तत्व से जानता है।

इस प्रकार जिसे तात्विक रूप से यह अनुभव हो जाता है कि राम ब्रह्म हैं, वह इस नश्वर शरीर को त्यागकर पुनर्जन्म धारण नहीं करता, प्रत्युत मुक्त हो जाता है, इसमें संदेह नहीं है। अब प्रश्न यह है कि इसकी तात्विक अनुभूति कैसे हो कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म व कर्म दिव्य हैं। इसके लिए साधन रूप में 'मानस' में है भगवान का **'राम'** नाम। भगवन्नाम के सतत् स्मरण से सहज स्वतः अनुभव हो जाता है कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म व कर्म दिव्य हैं। इस प्रकार राम नाम के जप से अत्यन्त सहज ही जीवन के परम लक्ष्य अर्थात् भगवान को प्राप्त किया जा सकता है। गोस्वामी तुलसीदासजी स्वयं राम नाम का आश्रय लेकर इसकी तात्विक अनुभूति कर अपना जीवन सार्थक कर चुके थे। उसी राम नाम को साधन रूप में सर्वजन कल्याण के भाव से प्रतिपादित करके गोस्वामीजी आत्मसुख का अनुभव करते हैं–**स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा।। (1/मंगलाचरण)**

श्रीरामचरितमानस का चिंतन करके भगवान के अवतार का रहस्य जानकर समझ में आ जाएगा कि राम 'ब्रह्म' हैं, यथा –

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।। (1/192)

इस सत्य की तत्वानुभूति कराना ही श्रीरामचरितमानस का उद्देश्य, लक्ष्य और मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। अपने मन की इसी शंका के साथ भरद्वाजजी द्वारा याज्ञवल्क्यजी से यही प्रश्न किया गया है–

एक राम अवधेस कुमारा। तिन्ह कर चरित बिदित संसारा।।
नारि बिरहँ दुखु लहेउ अपारा। भयउ रोषु रन रावनु मारा।। (1/46/7–8)
प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्यधाम सर्बग्य तुम्ह कहहु बिबेकु बिचारि।। (1/46)

यही शंका सती के मन में भी उत्पन्न हुई थी–

ब्रह्म जो ब्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत बेद।। (1/50)

यही शंका गरुड़जी की है, जिसका समाधान काकभुशुण्डिजी द्वारा कथा सुनाकर किया गया है–

ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा। माया मोह पार परमीसा।।
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं। देखउँ सो प्रभाव कछु नाहीं।। (7/58/7–8)
भव बंधन ते छूटहिं नर जपि जा कर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम।। (7/58)

यही शंका आज भी जन मन में यथावत है। यदि इस शंका का तात्विक निर्मूलन हो जाए अर्थात् मनुष्य तत्व से यह जान ले कि राम ब्रह्म हैं और उनके जन्म व कर्म दिव्य हैं तो उसे पुनः शरीर धारण नहीं करना पड़ेगा। यही परमार्थ और जीवन का श्रेय है।

यद्यपि श्रीरामचरितमानस नाम, रूप, लीला और धाम साधन चतुष्टय का सर्वांग समावेशित स्वरूप है, तथापि गोस्वामीजी ने नाम को सर्वोत्तम रूप में आत्मसात किया है। राम नाम के आश्रय से यह तत्वानुभूति सहज संभव है कि राम ब्रह्म हैं तथा उनके जन्म एवं कर्म दिव्य हैं। इसे तुलसीदासजी स्पष्ट करते हैं–

ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा।।
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ।। (1/22/2–3)

इस प्रकार पंचम भक्ति **'मंत्र जाप'** में गीताप्रेस की टीका के अंतर्गत 'राम' नाम मंत्र के जप का उल्लेख निराधार या असंगत नहीं है, तथापि भगवान के अन्य किसी मंत्र का जप भी इसमें सन्निहित है।

मंत्र जप में विश्वास अनिवार्य है। विश्वास के बिना न सफलता मिलती है और न सिद्धि, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरि भजन न भव भय नासा।। (7/90/8)

क्या विश्वास के बिना कोई सिद्धि हो सकती है? अर्थात् नहीं। इसी प्रकार भगवान के भजन के बिना जन्म–मृत्यु के भय का नाश संभव नहीं है।

बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु।। (7/90क)

इस प्रकार श्रद्धा–विश्वास के साथ अपनी रुचि के अनुरूप भगवान के किसी भी मंत्र जप को नवधा भक्ति की पंचम भक्ति के रूप में प्रतिपादित किया गया है।

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति के आजीवन सदस्य श्री रघुनाथ प्रसाद शर्मा के पौत्र गोपाल (शिशु अवस्था में) विक्रमी सम्वत् 2082, कार्तिक पूर्णिमा, बुधवार तदनुसार दिनांक 5 नवम्बर 2025 रात्रि में सोते हुए आकस्मिक चिर निद्रा में लीन हो गए। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

अनन्य भक्ति विवेचना

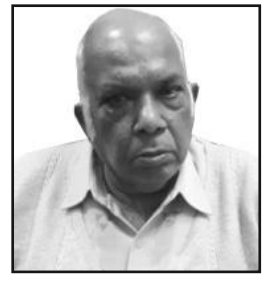

डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय, झाँसी (उ.प्र.), फोनः 7860039496

श्रीरामचरितमानस में अनन्य भक्ति पर बहुत जोर दिया गया है। कहते हैं कि जहाँ अन्य न हो अर्थात् जहाँ अन्य को न जाना जाय केवल भगवान को ही जाना गया हो, वही अनन्य भक्ति है। इसके उदाहरण मानस एवं गीता में विभिन्न प्रसंगों में मिलते हैं। इस लेख में इसी विषय पर कुछ विचार प्रस्तुत हैं–

पहले मानस पर एक दृष्टिपात करते हैं। भगवान राम वन की यात्रा के लिए निकल रहे हैं और लक्ष्मणजी को पता चलता है कि प्रभु वन जा रहे हैं, तो बड़े व्याकुल होकर कहने लगे, प्रभु मै कैसे आपको छोड़कर घर पर रह सकता हूँ, भगवान राम उन्हें समझाते हैं। इस प्रसंग में गोस्वामीजी लिखते है–

समाचार जब लछिमन पाए। ब्याकुल बिलख बदन उठि धाए।। (2/70/1)

जब प्रभु के पास लक्ष्मणजी पहुँचे, तो भगवान ने उनकी यह दशा देखी–

राम बिलोकि बंधु कर जोरें। देह गेह सब सन तृनु तोरें।। (2/70/6)

यहाँ लक्ष्मणजी के जीवन में भगवान के प्रति अनन्यता परिलक्षित होती है। प्रभु देखते हैं कि अनुज शरीर, घर एवं सारे रिश्ते–नाते तोड़कर चलने के लिए खड़े हैं। भगवान राम उन्हें पहले परिवार के नाते से और फिर राजा के उत्तरदायित्व का बोध कराते हुए कहते हैं–

गुर पितु मातु प्रजा परिवारू। सब कहुँ परइ दुसह दुख भारू।।
रहहु करहु सब कर परितोषू। नतरु तात होइहि बड़ दोसू।।
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृपु अवसि नरक अधिकारी।। (2/71/4–6)

इस पर भी लक्ष्मणजी भगवान के चरण पकड़ लेते हैं और अपनी अनन्यता शब्दों में इस प्रकार से निवेदन करने लगते हैं–

गुर पितु मातु न जानउँ काहू। कहउँ सुभाउ नाथ पतिआहू।।
जहँ लगि जगत सनेह सगाई। प्रीति प्रतीति निगम निजु गाई।।
मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर अंतरजामी।। (2/72/4–6)

अर्थात् लक्ष्मणजी का कहना है कि प्रभु मैं आपके सिवा किसी को नहीं जानता हूँ, अतः मैं साथ चलूँगा। यह लक्ष्मणजी की अनन्यता है कि भगवान राम ही उनके सब कुछ हैं।

भगवान राम जब हनुमानजी से प्रथम वार मिलते हैं तो उन्हें उपदेश स्वरूप अनन्य भक्ति के संदर्भ में कहते हैं–

समदरसी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ।। (4/3/8)

सो अनन्य जाकें असि मत न टरइ हनुमंत।

मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत।। (4/3)

भगवान राम हनुमानजी को अनन्यता का वह रूप बताते हैं जो वास्तव में उन्हें प्रिय है। इसका अर्थ यह नहीं कि लक्ष्मणजी की अनन्यता उन्हें प्रिय नहीं लगी। उन्हें प्रिय है, पर अतिप्रिय वह है कि जिसके विवेक–बुद्धि में यह बात स्थिर हो अर्थात् टल नहीं सकती, न टलना चाहिए कि सब चर–अचर के स्वामी वही मेरे भगवान ही हैं। सारे चर–अचर उन्हीं में दिखायी देते हैं। सोचिये जब सब जगह भगवान ही दिखेंगे तो क्या अब आपका कोई शत्रु या विरोधी रह जाएगा, अर्थात् सब सृष्टि भगवद् स्वरूप दिखने लगेगी, फिर ऐसी सृष्टि की आप सेवा के सिवा और क्या करेंगे अर्थात् ब्रह्म स्वरूप सृष्टि के प्रति सेवक भाव, जो न टलने वाला है, से सेवा करिए, ऐसा श्रीराम कहते हैं हनुमानजी को। ऐसी लोग साधना कर तो सकते हैं कि सारे ब्रह्मांड को ब्रह्ममय देखें, परन्तु इसके साथ साधक अपने आपको ब्रह्म मानते ही अहंकार में डूबने लगता है तथा धीरे धीरे अपने अलावा सबको तुच्छ समझने लगता है। अन्ततोगत्वा साधक कालान्तर में अहंकार ग्रस्त होकर भटके हुए जीवात्मा में बदल जाता है। अगर सेवा भावना आप में रहेगी और सारे संसार को सीयराममय जानते रहेंगे, तो संसार की सेवारत रहते कभी भी अहंकार नहीं हो सकता है।

विद्वान लोग कहते है कि भगवान ने लक्ष्मणजी से दूना हनुमानजी को इसीलिए कहा, "**तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना।। (4/3/7)**", क्योंकि हनुमानजी की अनन्यता उन्हें अच्छी लगी। इस संदर्भ में एक दृष्टांत उल्लेखनीय है–वृन्दावन में एक महात्मा सबेरे–सबेरे मंदिर में पूजा–पाठ कर रहे थे, आसन इत्यादि सब उनका लगा हुआ था, जब उनकी पूजा समापन की ओर थी, तो एक भक्त राधेश्याम कहता हुआ उस बिछे हुए आसन को रौंदता हुआ निकल गया। इस बात पर महात्माजी बहुत नाराज हो गए, तो भक्त ने पूछा आप इतने नाराज क्यों हो रहे हैं। कौन हैं, महात्माजी बोले–"मैं भगवान का अनन्य भक्त हूँ और उनका ध्यान लगा रहा था, आपने अपवित्र कर दिया।" भक्त जी तुरंत बोले कि आप कैसे अनन्य भक्त हैं कि जैसे मैं निकला और आपको दिख गया। इसका अर्थ यह है कि आप भगवान को छोड़कर और सब देखते हैं। अच्छा होता कि आप मुझमें भी भगवान देख लेते। पुनः भक्त बोला "क्षमा करें मुझे राधेश्याम की धुन में पता नहीं चला अन्यथा आपके आसन पर नही चढ़ता।" बेचारे महात्मा जी बहुत शर्मा गए।

अनन्यता का यही मन्त्र भगवान अपने सारे सखा, मित्रों को देते हैं। उत्तरकांड में जब प्रभु का राज–तिलक हो गया और बहुत दिन से अपना–अपना घर छोड़कर बन्दर, भालू और सखा सभी भगवान के साथ ही रह रहे थे, तो प्रभु उनका आतिथ्य करने के उपरांत एक दिन कहते हैं–

अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम।। (7/16)

भगवान कहने लगे आप सभी सखा, मित्रो अब अपने–अपने घर जाइए। आप सबने मेरी बहुत सहायता की। यह सुनकर सब बड़े दुखी हो गये। बोले प्रभु! भजन तो यहीं अच्छा होगा। हम लोगों को क्यों उलटा घर भेज रहे हैं, कि वहाँ भजन करो। प्रभु बोले बात यह नहीं है, अभी तक मेरे साथ रहकर जो भी संस्कार या शिक्षा आप लोगों ने सीखी, उसका ही तो प्रयोगात्मक कार्य परिणित होते हुए मैं देखना चाहता हूँ। हमसे दूर रहकर ही आप के कार्य की परीक्षा या समीक्षा की जा सकती है। हमारी सेवा आप लोगों ने की, पर अन्य पूरे समाज को भी (**सीय राममय सब जग जानी (1/8/2**) मेरी ही तरह सेवा दोगे, तो मैं समझ लूँगा कि आप लोगों ने अनन्यता का पाठ पढ़ लिया है।

महाभारत में अनन्य भक्ति को एकान्तिक भाव तथा शाश्वत धर्म भी कहा गया है। महाभारत में गीता में वर्णित उपदेश अनन्य भक्ति प्रधान है। जो ज्ञानी उपनिषद् सहित सम्पूर्ण वेदों का भलीभांति आश्रय लें तथा संन्यास धर्म का पालन करने वाले हैं, इन सबमें उत्तम गति उन्हीं को प्राप्त होती है, जो भगवान के अनन्य भक्त होते हैं। गीता में भगवान कहते हैं–

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।। (12/8)

अर्थात् मुझमें मन व बुद्धि लगाकर तुम मुझमें निवास करोगे, इसमें कुछ भी संशय नहीं। भगवान में हमारी स्वतः सिद्ध स्थिति (नित्य योग) हो जाए, तभी कल्याण संभव है, परन्तु भगवान में मन बुद्धि के न लगाने के कारण हमें भगवान के साथ अपने नित्य योग का अनुभव नहीं होता है। इसीलिए प्रभु कहते हैं कि मन, बुद्धि को मेरे में लगा, फिर तू मेरे में ही निवास करेगा। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार अन्तःकरणचतुष्टय का अंतर्भाव है तथा मन के अंतर्गत चित्त का तथा बुद्धि के अंतर्गत अहंकार का अंतर्भाव है। मन, बुद्धि भगवान में लगाने से अहंकार का आधार ''स्वयं'' भगवान में लग जाएगा। फलस्वरूप मैं भगवान का हूँ और भगवान ही मेरे हैं, ऐसा भाव हो जाएगा। इस भाव में निर्विकल्प स्थिति होने से ''मैं'' पन भगवान में लीन हो जाएगा। साधारणतया अपना स्वरूप मन, बुद्धि, शरीर आदि के साथ दिखता है, पर वास्तव में इनके साथ है नहीं। प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव कर सकता है कि बचपन से लेकर अब तक शरीर, मन, बुद्धि आदि सब बदल गए, पर मैं वही हूँ। इस प्रकार मैं बदलने वाला नहीं हूँ अर्थात् मैं और भगवान एक ही हैं, जो कभी नहीं

बदलते तथा शरीर व संसार दोनों एक प्रकृति के होने से हमेशा बदलने वाले हैं। बदलने वाले मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ, शरीर आदि को पकड़कर ही "स्वयं" (मैं) अपने को बदलने वाला मान लेता है, जबकि परमात्मा का अंश स्वरूप मैं कभी नहीं बदलता।

मन, बुद्धि भगवान की अपरा प्रकृति के हैं। भगवान की अपरा प्रकृति अर्थात् स्वभाव होते हुए भी अपरा प्रकृति भगवान से भिन्न स्वभाव वाली जड़ व परिवर्तनशील है, परन्तु परा प्रकृति (जीवात्मा) भगवान से भिन्न स्वभाव वाली नहीं है। मन, बुद्धि अपरा प्रकृति की जाति के हैं, अर्थात् वे अपरा प्रकृति के अंश हैं, पर हम स्वयं भगवान के अंश हैं, अतः मैं (स्वयं) और मन, बुद्धि में जातीय भिन्नता है। आकर्षण एवं मिलन सजातीयता में होता है विजातीयता में नहीं, अतएव मन, बुद्धि भगवान में नहीं लगा सकते, प्रत्युत स्वयं तो भगवान में लग ही सकता है। मन, बुद्धि की सत्ता अलग मान लेने पर साधक से भूल होती है। तात्पर्य यह है कि भगवान में लगाने से मन, बुद्धि लगते नहीं प्रत्युत लीन हो जाते हैं, क्योंकि मूल में अपरा प्रकृति भगवान का स्वभाव है।

ज्ञान में स्वरूप मुख्य है तथा भक्ति में भगवान मुख्य हैं, इसीलिए ज्ञानी स्वरूप में स्थित रहता है तथा भक्त भगवान में स्थित रहता है **(निवसिष्यसि मय्येव)**। भक्त को भगवान स्वरूप में अखंड रस का अनुभव होता है और भगवान में स्थित होने पर भक्त सब जगह भगवान को ही देखता है, क्योंकि उसका पहले से यह भाव है कि भगवान सर्वव्यापी हैं।

सारांश यह है कि भगवान में पहले साधक का मन लगता है, फिर बुद्धि लगती है और फिर स्वयं लगता है। स्वयं लगाने से अहम् मिट जाता है। प्रेम में मन लगता है और श्रद्धा में बुद्धि लगती है। भगवान में मन, बुद्धि लगाने का अर्थ यह है—भगवान में प्रेम व श्रद्धा होना अर्थात् संसार की प्रियता और महत्ता न रहकर केवल भगवान में प्रियता एवं महत्ता हो जाना।

जब भक्त द्वारा भगवान को सारे संसार में देखा जाएगा, तो कोई दूसरा कहाँ होगा अर्थात् अपने भगवान की ही सेवा होगी, उन्हीं से प्रेम होगा और फिर अपना अहम् नहीं होगा। जब साधक इस स्थिति में पहुँच जाएगा, तभी भक्ति में अनन्यता आएगी और फिर सदा यह भाव रहेगा—

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत।। (4/3)

कोई बुरा बोले या कोई किसी में दोष निकाले। हमें उस पर ध्यान नहीं देकर, स्वयं के चरित्र को सुधारना है। संत—साहित्य के अध्ययन और प्रभु—संकीर्तन से जीवन में सद्विचार अंकुरित होते हैं। मनुष्य आत्म—संकल्प से अपने जीवन को बुराइयों से मुक्त कर सकता है।

श्रीराम हमारे साथ रहें

श्री राम किंकर सिंह, सी–55, सैक्टर–47, नोएडा, फोनः 9899460077

श्रीराम हमारे साथ रहें,
लक्ष्मण भी उनके साथ में हों।
सीता माँ संग वामांगी हों,
बजरंग बली हनुमान रहें ।। 1।।

धनुष–बाण कर में उनके,
रक्षा करके निर्भय कर दें।
लक्ष्मण सतर्क सामर्थ्यवान,
देखते रहें विस्मय करके ।। 2।।

बजरंगबली सम्मुख रहकर,
प्रभु राम की ओर सदा देखें।
अनुशासन का संकेत मात्र ही,
पलक झपक सब पूर्ण करें।। 3।।

सीता की महिमा के आगे,
हनु लक्ष्मण सेवारत रहते।
माता–पग की ओर दृष्टि,
आज्ञा–पानु सब सम्यक् करते।। 4।।

प्रभु श्रीराम हमें अभिरक्षा दें,
गुरुवत् स्नेह समीक्षा से।
हों दोष हमारे तन–मन के,
सभी शमन कर शांति दें।। 5।।

राजाराम का समाजवाद

डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म.प्र.), फोनः 9826249448

श्रीरामचरितमानस के विशेष संदर्भ में:–

ऋग्वेद कहता है कि हे मनुष्यो! आप सब परस्पर मिल–जुलकर स्नेह पूर्वक वार्तालाप करें। आपके मन समान विचारधारा वाले होकर ज्ञानार्जन करें। जिस प्रकार पूर्वकाल में सब लोगों ने एक साथ मिलकर सत्कर्मों को करते हुए देवोपासना की थी, उसी प्रकार आप सभी एक मत हो जाओ, यथोल्लेख है कि–

स्ङ्गच्छध्वं संवदध्वं संगे मनांसि जानताम्।
देवाभागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।। (ऋ0 10/19/2)

श्रीरामचरितमानस में भी मानवमात्र एक परमेश्वर की संज्ञान के रूप में समानाधिकार प्राप्त निरूपित है, यथा–

सब मम प्रिय सब मम उपजाए। (मानस–7/86/4)

श्रीरामचरितमानस में वर्णित श्रीराम के द्वारा सभी जातियों, सभी समुदायों तथा सभी वर्गों के प्रति समान भावना तथा समान व्यवहार एवं आत्मीयता का निदर्शन प्रस्तुत लेख में दृष्ट्व्य है।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीराम के व्यक्तित्व एवं कृतित्व विषयक जिज्ञासा से अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस का प्रारम्भ किया है, उल्लेख है कि–

रामु कवन प्रभु पूछउँ तोही। कहिअ बुझाइ कृपानिधि मोही।। (1/46/6)

श्रीराम जहाँ पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति के अनुकरणीय आदर्श हैं, वहीं वे सम्पूर्ण मानव एवं प्राणी समाज के समानत्व एवं स्वातन्त्र्य के भी पक्षधर हैं। उनका यह कथन उक्त के समर्थन में पर्याप्त है कि–

मुखिआ मुखु सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।। (2/315)

व्यक्ति के परस्पर सौहार्द, सहृदयता, समानता आदि सद्गुणों के संधारण में उसका सदाचार, शील और शालीनता विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। 'शील–गुण' व्यक्ति का परम

आभूषण भी है। यथा महाकवि भर्तृहरि ने कहा है कि **"शीलं परं भूषणम्"** (**नीतिशतक–81 'शील शिक्षा'),** श्रेष्ठ संस्कार की शिक्षा है। शील के बिना शिक्षा अधूरी ही रहती है। श्रीराम समस्त विद्याओं में पारंगत होने के साथ–साथ विनयावनत एवं परमशीलवान् हैं, यथोक्त है कि–

बिद्या बिनय निपुन गुन सीला। खेलहिं खेल सकल नृप लीला।। (1/204/6)

'शील' व्यक्ति का सच्चिदानन्दस्वरूप है। शील–संयोजना में अहंकार बड़ा बाधक होता है। 'अहंकार' शीलगुण को दवा देता है और कर्तापन को दम्भ देकर मानवीय गुणों का हरण कर लेता है, यथोल्लेख है कि–

अहङ्कारविमूढ़ात्मा कर्ताहमिति मन्यते। (गीता 3/27)

श्रीरामचरितमानस में भी मोहमूल एवं शूलदायी अहंकार को त्याज्य कहा गया है, यथा–

मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान। (5/23)

और भी उक्त है कि–

संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोक दायक अभिमाना।। (7/74/6)

पुनश्च अवलोक्य है, यथा–

अहंकार अति दुखद डमरुआ। दंभ कपट मद मान नेहरुआ।। (7/121/35)

श्रीराम सद्गुण शील सम्पन्न सरल स्वभाव हैं। विनम्रता उनमें इतनी अधिक है कि वे सबको आनन्द प्रदान करते हैं, यथा–

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मागि करहिं पुर काजा। देखि चरित हरषइ मन राजा।। (1/205/5–6)

श्रीराम के सहज व्यवहार से जन सामान्य भी सुख का अनुभव करते हैं, यथोल्लिखित है कि–

जेहि बिधि सुखी होहिं पुर लोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा।। (1/205/5)

श्रीराम की सरलता और निश्छलता अद्भुत कही गई है, यथा–

राम कहा सबु कौसिक पाहीं। सरल सुभाउ छुअत छल नाहीं।। (1/237/2)

छोटा हो या बड़ा हो, किसी जाति या किसी भी वर्ग का हो, सभी के प्रति श्रीराम का समादर का भाव प्रदृष्ट है। जनकपुरी में पुष्पवाटिका के रखवाले मालियों से भी उनका समादर का भाव है। वे राजपुत्र होते हुए भी मालीजनों से पुष्पचयन की स्वीकृति लेते हैं, यथोल्लेख है कि–

चहुँ दिसि चितइ पूँछि मालीगन। लगे लेन दल फूल मुदित मन।। (1/228/1)

सबके प्रति श्रीराम का विनम्रभाव उनके स्वभाव का अनुकरणीय आदर्श है, यथा–

बंदि बिप्र सुर गुर पितु माता। पाइ असीस मुदित सब भ्राता।। (1/358/7)

श्रीरामचरितमानस में वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था का उल्लेख है, लेकिन वर्णों में नीच–ऊँच, छोटे–बड़े या स्पृश्य–अस्पृश्य को किन्चित् मात्र भी स्थान नहीं दिया गया, यथा निर्दिष्ट है कि–

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।। (7/20)

वर्णाश्रम धर्म के परिपालन में संलग्न लोगों के समाज से इतर समाज वाले लोगों के साथ श्रीराम का सौहार्द, सहृदयता और समानता का भाव कम नहीं था। वन मार्ग में प्रस्थान के समय गुह निषाद आदि जातियों से आत्मीय भाव प्रकट करते हुए श्रीराम ने उनके प्रति अतिशय अनुराग प्रदर्शित किया था, यथोल्लेख है कि–

यह सुधि गुहँ निषाद जब पाई। मुदित लिए प्रिय बंधु बोलाई।।
सहज सनेह बिबस रघुराई। पूँछी कुसल निकट बैठाई।। (2/88/1 तथा 4)

श्रीराम ने केवट के प्रति भी अपना आत्मीय भाव प्रकट कर सामाजिक संगठन की सुदृढ़ता प्रदर्शित की एवं उसके प्रेम–वचनों से हर्षित हुए, यथा–

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन।। (2/100)
बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ।। (2/102)

ऋषिमुनि–समाज भी श्रीराम की शीलता से श्रीराम का चहेता बना हुआ था। श्रीरामचरितमानस में प्रदृष्ट है, यथा–

यह सुधि पाइ प्रयाग निवासी। बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी।।
भरद्वाज आश्रम सब आए। देखन दसरथ सुअन सुहाए।।
राम प्रनाम कीन्ह सब काहू। मुदित भए लहि लोयन लाहू।। (2/108/5–7)

श्रीरामचरितमानस में श्रीराम सामाजिक सौहार्द के केन्द्र बने हुए प्रदृष्ट हैं। सामाजिक समरसता के आधार बने हुए श्रीराम को ग्रामीणों की भी आत्मीयता प्राप्त है–

गावँ गावँ अस होइ अनंदू। देखि भानुकुल कैरव चंदू।। (2/122/1)
एहि बिधि रघुकुल कमल रबि मग लोगन्ह सुख देत।
जाहिं चले देखत बिपिन सिय सौमित्रि समेत।। (2/122)

श्रीरामचरितमानस में वन के कोल किरात तो श्रीराम के अपने ही बन्धु जैसे दर्शाए गए हैं। समाजवाद का स्वतंत्र, निश्छल एवं आत्मीय स्वरूप यहाँ देखने योग्य है, यथा–

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई। हरषे जनु नव निधि घर आई।।
राम सनेह मगन सब जाने। कहि प्रिय बचन सकल सनमाने।।(2/135/1 तथा 7)

सकल वनचरों के प्रति श्रीराम का प्रेमपूर्ण मृदुल व्यवहार बड़े ही मनोहारी रूप से श्रीरामचरितमानस में दर्शाया गया है, जो सच्चे समाजवाद का द्योतक है, यथा–

राम सकल बनचर तब तोषे। कहि मृदु बचन प्रेम परिपोषे।। (2/137/2)

समाजवाद प्राणियों के विगत वैर एवं प्रेमभाव को प्रत्यक्ष करता है। श्रीराम के सान्निध्य में यह प्रत्यक्ष दर्शाया गया है, यथा–

करि केहरि कपि कोल कुरंगा। बिगतबैर बिचरहिं सब संगा।।
फिरत अहेर राम छबि देखी। होहिं मुदित मृग बृंद बिसेषी।। (2/138/1–2)

यही रहा है श्रीराम के प्रताप का प्रभावी समाजवाद, जहाँ न वैर है, न विग्रह है, न आशा है और न त्रास को ही स्थान है। श्रीराम का स्वभाव तो सभी वर्गों के लिए सुखदाई कहा गया है, यथा–

पुरजन परिजन गुर पितु माता। राम सुभाउ सबहि सुखदाता।। (2/200/6)

श्रीराम के सुकृतों और सात्त्विक स्वभाव के प्रभाव से निषाद आदि जातियों के लोगों की बुद्धि भी धर्मानुगामिनी हो गई थी, यथोक्त है कि –

सपनेहुँ धरमबुद्धि कस काऊ। यह रघुनंदन दरस प्रभाऊ।।
जब तें प्रभु पद पदुम निहारे। मिटे दुसह दुख दोष हमारे।। (2/251/6–7)

समस्त राक्षसों के आतंक को समाप्त कर समता का समाज स्थापित करने का श्रीराम का प्रण बड़ा ही श्लाघ्य कहा गया है। श्रीराम का समदर्शी सुरूप वाला समाजवाद यहाँ उल्लेखनीय है, यथा–

पुनि रघुनाथ चले बन आगे। मुनिबर बृंद बिपुल संग लागे।।
अस्थि समूह देखि रघुराया। पूछी मुनिन्ह लागि अति दाया।।
जानतहूँ पूछिअ कस स्वामी। सबदरसी तुम्ह अंतरजामी।।
निसिचर निकर सकल मुनि खाए। सुनि रघुबीर नयन जल छाए।। (3/9/5–8)
निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह।। (3/9)

श्रीराम ने कोल, किरात, निषाद आदि जातियों को अपने गले लगाकर एवं उनके प्रति अतिशय प्रेम तथा सौहार्द दर्शाकर समत्वपूर्ण समाज की निर्मिति की तथा जटायु गीध को अपनी धारा का अनुगामी बनाकर अभेद को स्थापित किया। श्रीराम का इससे भी अधिक समता का मानवीय व्यवहार सबर जाति की शबरी के प्रति प्रदृष्ट है। श्रीराम राजपुत्र होते हुए भी शबरी के घर गए एवं उसके द्वारा प्रदत्त कंदमूल फल प्रेमपूर्वक खाकर उसे आह्लादित किया, यथा–

ताहि देइ गति राम उदारा। सबरी कें आश्रम पगु धारा।। (3/34/5)
कंदमूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि।। (3/34)

इस प्रकार श्रीराम ने भक्ति अर्थात्–सेवाभावना को श्रेष्ठ मानते हुए समस्त मानव समाज में भक्ति के माध्यम से समता की स्थापना की। श्रीराम ने मानव समुदाय से इतर वानर एवं राक्षस सम्प्रदाय के लोगों को भी सामाजिक सौहार्द बनाए रखने की प्रेरणा देकर उनकी निरंकुशता को दूर करने में सहयोग दिया तथा समाजवाद की सुदृढ़ स्थिति को संजोने में अहम भूमिका का निर्वहन किया।

वस्तुतः वानर और राक्षस दोनों ही वर्ग मनुष्य ही थे। श्रीरामचरितमानस में राक्षसों के नर रूप होने का स्पष्ट उल्लेख है, यथा–

एहिं सर मम उत्तर तट बासी। हतहु नाथ खल नर अघ रासी।। (5/60/5)

वस्तुतः आततायी एवं आचारहीन मनुष्य ही असुर या राक्षस कहे गए हैं, यथा–

मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा।।
जिन्ह के यह आचरन भवानी। ते जानेहु निसिचर सब प्रानी।। (1/184/2–3)

इसी प्रकार सभी वानर जाति या सम्वर्ग के लोग भी मनुष्य ही कहे गए हैं, यथा–

हनुमदादि सब बानर बीरा। धरे मनोहर मनुज सरीरा।। (7/8/2)

उपर्युक्त राक्षस और वानर जाति के लोग विविध रूप बनाने में बड़े दक्ष थे। 'मारीच' कपट मृग बनकर लुभाता था, तो राक्षस रावण ने यती का रूप धारण करने में दक्षता दर्शायी थी। वहीं श्रीहनुमानजी ने विप्र रूप बना लिया था, यथोल्लेख है कि–

तेहि बन निकट दसानन गयऊ। तब मारीच कपट मृग भयऊ।। (3/27/1)
सून बीच दसकंधर देखा। आवा निकट जती कें बेषा।। (3/28/7)
बिप्र रूप धरि कपि तहँ गयऊ। माथ नाइ पूछत अस भयऊ।। (4/1/6)

श्रीराम ने उन सभी को सौहार्द पूर्वक मानव समाज से जोड़ा और अतिशय आत्मीयता प्रकट कर उन्हें समाजवाद की परिधि में लाकर श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया। श्रीहनुमानजी को श्रीराम ने अपने भाई लक्ष्मण से दूना प्रिय बताकर मानव सम्वर्ग में श्रेष्ठ स्थान दिया, यथा–

सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना। तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना।। (4/3/7)

इसी प्रकार राक्षस सम्वर्ग का होते हुए भी निश्छल स्वभाव वाले विभीषण को श्रीराम ने अपना अत्यन्त प्रिय बन्धु मानकर उसका समादर किया, यथा–

सुनु लंकेस सकल गुन तोरें। तातें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें।। (5/49/1)

श्रीराम ने निषाद को अपना प्रिय सखा निरूपित किया और अपने भाई भरत के समान बताकर परम आत्मीयता प्रदान की, यथोल्लेख है कि–

तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता। सदा रहेहु पुर आवत जाता।। (7/20/3)

'श्रीराम' राजसिंहासन पर आसीन हुए, तो सब वर्गों के लोगों को समान समादर दिया। उन्होंने सुग्रीव आदि सब सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों से परमप्रेम का व्यवहार कर सबको सबका हित करते रहने की सलाह दी, यथा–

परम प्रीति समीप बैठारे। भगत सुखद मृदु बचन उचारे।। (7/16/3)

अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।

सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम।। (7/16)

रामराज्य का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि श्रीराम ने राज्योत्कर्ष एवं राज्य की सुख, समृद्धि और शान्ति के लिए जन–जन को जोड़ा। उन्होंने सम्पूर्ण जनता के समक्ष उद्घोष किया कि यदि शासन द्वारा किंचित् मात्र भी अनुचित कहा जाए या अनुचित किया जाए तो जनता को यह अधिकार है कि वह भयरहित होकर राजा या प्रशासन को वर्जित करे या उसका विरोध करे, यथोल्लेख है कि–

सुनहु सकल पुरजन मम बानी। कहउँ न कछु ममता उर आनी।

जौं अनीति कछु भाषौं भाई। तौ मोहि बरजहु भय बिसराई।। (7/43/3 एवं 6)

यह था श्रीराम का समाजवाद, जिसमें जनता के सुख के लिए उसकी समान भागीदारी थी। वहाँ न जाति भेद था और न ही नीच–ऊँच का व्यवहार।

निष्कर्ष यह है कि श्रीराम ने सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय स्वयं को जनता का सेवक स्वीकार कर शासन में जनता की समान भागीदारी को स्वीकार किया था एवं उन्होंने सम्पूर्ण राज्य में समतापूर्ण समाजवाद की सुखद स्थापना की थी। उनके द्वारा स्थापित समाजवाद में सुख शान्ति और अनुशासन सहित अद्भुत साम्य था, यथोल्लेख है कि–

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।

चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय सोक न रोग।। (7/20)

अस्तु, श्रीराम के द्वारा स्थापित समाजवाद आज विश्व के लिए अनुकरणीय आदर्श है।

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति के वरिष्ठ आजीवन सदस्य श्री अमर सिंह सेंगर पौष शुक्ल पक्ष चतुर्दशी सम्वत् 2082 तदनुसार 2 जनवरी 2026 को चिर निद्रा में लीन हो गए। वे 78 वर्ष के थे। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

गएँ सरन प्रभु राखिहैं

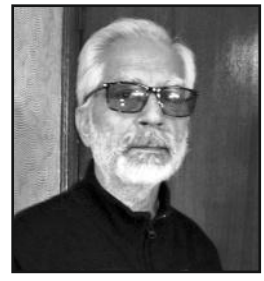

श्री देवेन्द्र शर्मा, गुरुग्राम, फोनः 9810199441

(समिति की वार्षिक स्मारिका के अंक 32 के पृष्ठ 51 से आगे लेख का शेष भाग)

वे ही श्रीभगवान यदि शरणागति के प्रश्न पर यहाँ तक कह देते हैं कि–

कोटि ब्रिप बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू।। (5/44/1)

तो अब श्रीभगवान और उनकी करुणानिधानता के पक्ष पर किसी भी प्रकार की शंका या आशंका के लिए स्थान ही कहाँ बचता है? और शरणागति प्रदान करने के बारे में जीव की श्रीभगवान से इससे अधिक और क्या अपेक्षा शेष रह जाती है?

श्रीभगवान के इसी करुणानिधान स्वभाव पर श्री काकभुशुण्डिजी कहते हैं कि–

अस सुभाउ कहुँ सुनउँ न देखउँ। केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ।। (7/124/4)

और श्रीगोस्वामीजी भी मानस का समापन करते हुए यही कहते हैं कि–

राम समान प्रभु नाहीं कहूँ। (7/अन्तिम छंद/अन्तिम पंक्ति)

निवेदन है कि अनन्त श्रीभगवान से सम्बन्धित सारे विषय भी अनन्त हैं और इन्हें किसी प्रकार भी किसी भी सीमा में बांधा नहीं जा सकता, लेकिन भाषा, वाणी और लेखनी की तो अपनी सीमा होती है, अतः शब्दों, वाणी और लेखनी को तो एक स्थिति स्वीकार करनी होती है कि अमुक विषय पर इससे आगे अब कुछ कहा या लिखा नहीं जा सकता। यहाँ पर यह लिखना अति आवश्यक हो गया है कि श्रीभगवान के करुणानिधान स्वभाव और शरणागति प्रदान करने के प्रस्तुत संदर्भ में इससे आगे तो अब हमारे ही श्रद्धा और विश्वास की बात रह जाती है।

निवेदन है कि अब तक की चर्चा में तो हमने शरणागति के संदर्भ में परम कृपालु शरणागतवत्सल श्रीभगवान के पक्ष में दर्शन किए और अब हमारे पक्ष की बारी आती है। इस निवेदक के विचार में अपने पक्ष में कहने के लिए हमारे पास कुछ भी सार्थक नजर नहीं आता, क्योंकि श्रीभगवान की दुरत्यया माया से मोहित, संसार पर ही निर्भर, संसारिक स्वार्थ और परिवार में लिप्त–मद, मोह, कपट और छल से ग्रस्त यह जीव कहे भी तो क्या कहे? फिर भी जो जीव संसार में आया है उसे रहना तो इसी में ही है।

यहाँ पर ध्यानाकर्षण हेतु निवेदन है कि इस संसारी जीव के लिए ''संसार'' शब्द भी बड़े महत्व का है। इसका साधारण अर्थ तो यह है कि यह संसार बंधन कारक और स्मृतिमूलक है, जिसमें जन्म लेकर यह जीव नाना प्रकार के कर्म करता हुआ, अपनी जीवन यात्रा पूरी करता है। इसे कुशलता पूर्वक तय करने का एक ही सुगम मार्ग बताया गया है और वह है श्रीभगवान की भक्ति का मार्ग। इस भक्ति–मार्ग की यात्रा में मोह–मद–मान रूपी विषम जंगल मिलते हैं, कुसंग रूपी ऊबड़–खाबड़ मार्गों से गुजरना पड़ता है, कुसंगियों के वचन रूपी अनेक डरावने जंगली जानवर भी मार्ग में मिलते हैं, इनके अलावा कुतर्क रूपी अनेक नदियाँ मार्ग में अवरोध पैदा करती हैं और गृह–कारज–जंजाल रूपी पहाड़ तो भक्ति मार्ग में आगे बढ़ने ही नहीं देते **(1/38/7–9)** तो फिर इतने विकट संकटों से पूर्ण इस लंबी जीवन–यात्रा को भक्ति–मार्ग द्वारा कुशलता पूर्वक कैसे तय किया जाए? श्रीगोस्वामीजी का कहना है कि किसी भी यात्रा की सुगमता के लिए तीन साधनों की आवश्यकता होती है–धन, संग और भरोसा। भक्ति–मार्ग द्वारा इस जीवन–यात्रा को तय करने के लिए वे उपर्युक्त तीनों साधनों में पहला साधन है–मार्ग के खर्चे के लिए **श्रद्धा रूपी धन**। दूसरा साधन है– **सत्संग,** जो विवेक रूपी मार्ग–रक्षक का जनक भी है। तीसरा साधन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है और वह है–**श्रीभगवान और उनकी कृपा का भरोसा**। इन तीनों साधनों की सहायता से जीव अपनी यात्रा को भक्ति–मार्ग द्वारा सुगमता से और कुशलता पूर्वक तय कर सकता है।

संसार शब्द का दूसरा और विशेष अर्थ है कि सं+सार अर्थात् सार सहित अर्थात् यह संसार सारगर्भित है और इस संसार का सार यह है कि इसमें जीव को साधन–धाम और मोक्ष–द्वार रूपी यह शरीर भी इसी संसार में, इसी संसार (प्रकृति) के द्वारा प्रदत्त हुआ है, अतः इस संसार को, जहाँ एक ओर बन्धन कारक बताया गया है, वहीं दूसरी ओर उक्त बन्धन से मुक्त होने के लिए ज्ञान, वैराग्य और भक्ति रूपी साधन हेतु यह मनुष्य शरीर भी ईश्वर की कृपा से इस संसार में सौभाग्य से मिलता है।

इस प्रकार से हमें चाहिए कि इसी संसार में रहते हुए ही, इसी मनुष्य शरीर से, श्रीभगवान के द्वारा श्रीविभीषणजी को उपदेशित, **धर्म–रथ (श्रीरामचरितमानस 6/80/1–11)** पर आरूढ़ होकर और श्रीभगवान के ही द्वारा भक्तिमती शबरीजी को उपदेशित, **नवधाभक्ति–मार्ग (श्रीरामचरितमानस 3/35/8 से 3/36/5)** पर चलते हुए अपने भक्ति और मुक्ति मार्ग को प्रशस्त करें और जो जीव इस देव–दुर्लभ शरीर और सौभाग्यशाली अवसर का समुचित लाभ नहीं उठाते उन जीवों के लिए श्रीभगवान कहते हैं कि–

आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी।।
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा।।
कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही।। (7/44/4–6)
बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा।। (7/43/7–8)
सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोस लगाइ।। (7/43)

इसके साथ ही इस देव–दुर्लभ मनुष्य शरीर की प्राप्ति रूपी सौभाग्य का लाभ उठाने के संदर्भ में श्रीभगवान श्रीरामजी का आदेश और उपदेश है कि–

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई।।
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं।। (7/44/1–2)
नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो।।
करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।। (7/44/7–8)
जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदयँ दृढ़ गहहू।।
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई।। (7/45/1–2)
भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।।
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता।। (7/45/5–6)

गीता में भगवान श्रीकृष्णजी भी यही उपदेश अर्जुन को देते हैं –

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च। मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्।। (8/7)

अर्थात् हर स्थिति–परिस्थिति में जीव अपने मन और बुद्धि दोनों को ही मुझे अर्पण करके मुझे ही निरंतर स्मरण करते हुए अपनी जीवन–यात्रा को प्रगतिशील रखे तो निःसंदेह ही वह मुझे प्राप्त हो जाएगा और उसका मनुष्य शरीर की प्राप्ति का उद्देश्य सफल हो जाएगा।

अब एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न सामने आता है, जिसका उत्तर ढूँढ़े बिना तो यह चर्चा अधूरी ही रह जाएगी और वह प्रश्न यह है कि शरणागत होने के लिए परम शरण्य उन श्रीभगवान को कहाँ ढूँढ़ा जाए? वे हमें कहाँ मिल पाएँगे? यही एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर ढूँढ़ने के लिए, हमारे ऋषि–मुनियों ने हजारों–हजारों वर्षों तक अध्ययन, चिन्तन, मनन और कठिन से कठिन तप किए और जिनके फलस्वरूप उन्हें उपर्युक्त प्रश्न के उत्तर के साथ–साथ भगवत् प्राप्ति भी हुई। वर्तमान में यथा उपलब्ध अनेकानेक ग्रंथ भी उपर्युक्त प्रश्न के समुचित उत्तर अपने आप में संजोए हुए हैं, परन्तु बात तो वहाँ पर आकर टिक जाती है कि हमें क्या समझ में आता है और समझने के बाद भी क्या हम उस पर पूर्ण विश्वास करते हैं, क्योंकि–

बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु।। (7/90क)

निवेदन है कि परमादरणीय श्रीगुरु, ग्रंथों और सत्संग से प्राप्त ज्ञान के अनुसार हमारे अन्दर और बाहर दोनों ही प्रकार से श्रीभगवान तो सदैव हमारे समीप ही रहते हैं। वे सर्वत्र व्यापी होने के कारण आत्माराम रूप से सदैव हमारे अन्दर हृदय में ही विराजमान हैं और सर्वत्र व्यापी होने के कारण से ही वे ही श्रीभगवान हमारे बाहर पूरे विश्व में समान रूप से सर्वत्र विराजमान हैं। अवतार काल में, किसी न किसी स्वरूप में किसी एक स्थान पर विशेष रूप से अपने श्रीविग्रह में विराजमान होने के साथ–साथ, उन सर्वशक्तिमान श्रीभगवान के दर्शन बिना श्रद्धा–विश्वास के हो ही नहीं सकते–

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्।। (1/वंदना/श्लोक–2)

श्रीगोस्वामीजी, श्रीरामचरितमानस में हमारे अन्दर हृदय में विराजमान आत्माराम श्रीभगवान का निवास स्थान इस तरह से बताते हैं–

ब्यापकु एकु ब्रह्म अबिनासी। सत चेतन घन आनँद रासी।।
अस प्रभु हृदयँ अछत अबिकारी। सकल जीव जग दीन दुखारी।।
नाम निरूपन नाम जतन तें। सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें।। (1/23/6–8)

अर्थात् वह सर्वव्यापी, अविनाशी, सत्य, सदैव चेतन और आनंदघनराशि ब्रह्मरूप श्रीभगवान तो हमारे हृदय में ही विराजमान हैं और अचल श्रद्धा–विश्वास और अनन्य प्रेम से श्रीभगवान के नाम की महिमा और प्रभाव को जानकर नाम जपने से, वे कृपा करते हैं और प्रकट होकर दर्शन देते हैं।

श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड में ही श्रीगोस्वामीजी हमारे बाहर सर्वत्र समान रूप से व्यापक/विराजमान श्रीभगवान को दर्शन हेतु सगुण रूप में प्रकट करने की विधि बताते हैं और इसके लिए वे एक दृश्य प्रस्तुत करते हैं। आइये, हम भी उस मार्मिक दृश्य को हृदयंगम करके अपने आपको कृतार्थ करने का प्रयास करें। वह दृश्य इस प्रकार है कि रावणादि आदि राक्षसों के अत्याचार और पापाचार से व्याकुल पृथ्वी सहित सभी देवगण एक सभा करते हैं और उस सभा में सभी एक निर्णय पर पहुँचते हैं कि रावणादि राक्षसों के नाश के बिना यह संकट दूर नहीं हो सकता और यह काम श्रीभगवान के अवतार लिए बिना सम्पन्न हो नहीं सकता। तो फिर श्रीभगवान के सम्मुख जाकर उनसे अवतार ग्रहण के लिए प्रार्थना की जाए। अब यहाँ पर भी वही प्रश्न समस्त देवगणों के सामने भी आ खड़ा हुआ जो कि हम सबके सामने सदैव ही रहता है कि अवतार ग्रहण करने की प्रार्थना

के लिए श्रीभगवान को कहाँ ढूँढ़ा जाए? किसी ने कहा कि वे श्रीभगवान बैकुण्ठलोक में मिलेंगे, किसी ने कहा कि वे तो क्षीर–सागर में रहते हैं। इस प्रकार सबने अपने–अपने विचार प्रकट किए, परन्तु निर्णय नहीं हो पाया कि कहाँ जाकर श्रीभगवान से प्रार्थना करें कि जिससे तुरन्त सुनवाई हो जाए। तब इस विकट समस्या के समाधान के लिए, जगद्गुरु आशुतोष भगवान श्रीशंकरजी, जो सौभाग्य से उस सभा में उपस्थित थे, सामने आते हैं। आइए! हम भी श्रीगोस्वामीजी के शब्दों में उस दृश्य के दर्शन करते हैं–

बैठे सुर सब करहिं बिचारा। कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा।।
पुर बैकुंठ जान कह कोई। कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई।।
जाके हृदयँ भगति जसि प्रीती। प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहिं रीती।।
तेहिं समाज गिरिजा मैं रहेऊँ। अवसर पाइ बचन एक कहेऊँ।।
हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं।।
अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी।।
मोर बचन सब के मन माना। साधु साधु करि ब्रह्म बखाना।।
सुनि बिरंचि मन हरष तन पुलकि नयन बह नीर।
अस्तुति करत जोरि कर सावधान मतिधीर।। (1/185)

अर्थात् भगवान श्रीशंकरजी, उस सभा में अपने विचार रखते हुए कहते हैं कि ऐसा कोई समय और स्थान है ही नहीं कि जब और जहाँ श्रीभगवान विराजमान न हों और वे करुणानिधान श्रीभगवान तो अनन्य प्रेम की आर्त पुकार से प्रकट होते हैं, अतः हमें उनको ढूँढ़ने के लिए कहीं भी जाने की आवश्यकता नहीं है। हम जहाँ भी बैठे हैं वहीं से आर्त–भाव और आर्त–स्वर से प्रार्थना करते हुए उन सर्वशक्तिमान के शरणागत हों तो वे करुणानिधान श्रीभगवान उसी स्थान पर प्रकट होकर हम सबको अवश्य ही दर्शन देंगे और दारुण से दारुण विपत्ति से हमें निस्तार प्रदान करेंगे। भगवान श्रीशंकर के वचन सुनकर श्रीब्रह्माजी ने उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की और फिर उसी सभा स्थान से सबने आर्त–भाव और आर्त–स्वर से परम सुहृदय श्रीभगवान की इस प्रकार से स्तुति की–

जय जय सुरनायक .....नमत नाथपद कंजा। (1/186/छंद)

आर्त–भाव और आर्त–स्वर से की गई स्तुति के फलस्वरूप आकाशवाणी के द्वारा श्रीभगवान ने पृथ्वी सहित सभी देवगणों को अपने अवतार ग्रहण के लिए आश्वस्त करके निर्भय कर दिया।

अब यहाँ पर एक और प्रश्न खड़ा होता है कि श्रीशंकरजी ने तो आश्वस्त किया था कि–**प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना**–तो यहाँ पर श्रीभगवान ने प्रकट होकर दर्शन क्यों नहीं दिए? केवल आकाशवाणी से ही काम क्यों चला दिया? तो इस संदर्भ में इस निवेदक का भाव पूर्ण निवेदन यह है कि श्रीभगवान सकाम भक्ति की तुलना में निष्काम भक्ति से अधिक प्रसन्न होते हैं। देवताओं को तो सदा स्वार्थी बताया गया है। **आए देव सदा स्वारथी। बचन कहहिं जनु परमारथी।। (6/110/2)** और उस पर उनकी यह प्रार्थना निःसंदेह ही आर्त तो अवश्य थी, पर स्वार्थ से परिपूर्ण थी। भक्तिमती द्रौपदी की करुण–पुकार भी तो उसकी अपनी लज्जा बचाने रूपी स्वार्थ से पूर्ण थी, तो उसके बदले में भी श्रीभगवान उसकी लज्जा तो अवश्य उसी स्थान पर जाकर बचाते हैं जहाँ से उसने पुकार की थी, परन्तु वे श्रीभगवान अपने श्रीकृष्ण स्वरूप के दर्शन वहाँ भी नहीं देते और वस्त्र बढ़ाने की युक्ति–रूपी–कृपा से काम चला देते हैं, जिसे बाद में श्रीभगवान के वस्त्रावतार का नाम दिया गया। लेकिन निष्काम भक्ति के माध्यम से जब शरणागत की आर्त–पुकार होती है तो श्रीभगवान स्वयं प्रकट होकर साक्षात् उसी स्वरूप में ही दर्शन देते हैं जिस स्वरूप में भक्त की कामना होती है या फिर जिस स्वरूप में श्रीभगवान दर्शन देना चाहें। इस संदर्भ में श्रीमद्भागवत में वर्णित अनेक भक्तों के प्रसंगों में भक्तराज श्रीप्रह्लादजी का प्रसंग, श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड में वर्णित महाराज मनु और महारानी शतरूपा का प्रसंग (दोहा सं. 141 से 151) और उत्तरकाण्ड में दोहा संख्या 74ख से 88 तथा 109 से 114 के मध्य वर्णित परमभक्त श्रीकाकभुशुण्डिजी का प्रसंग स्मरणीय है। इस निवेदक के विचार से शायद भक्तराज श्रीप्रह्लादजी ही ऐसे निष्काम भक्त हुए हैं कि खम्भे से प्रकट होकर और दैत्यराज हिरण्यकशिपु का वध करने के पश्चात् जब श्रीभगवान ने उनसे वरदान माँगने को कहा तो उन्होंने यही वरदान माँगा कि–

यदि रासीश मे कामान् वरांस्त्वं वरदर्षभ।
कामनां हृद्यसंरोहं भवतस्तु वृणे वरम्।। (श्रीमद्भागवत 7/10/7)

अर्थात् हे मेरे वरदानि शिरोमणि स्वामी! यदि आप मुझे मुँह माँगा वर देना ही चाहते हैं तो यह वर दीजिए कि मेरे हृदय में कभी भी किसी कामना का बीज अंकुरित ही न हो, क्योंकि–

इन्द्रियाणि मनः प्राण आत्मा धर्मो धृतिर्मतिः।
ह्रीः श्रीस्तेजः स्मृतिः सत्यं यस्य नश्यन्ति जन्मना।। (श्रीमद्भागवत 7/10/8)

अर्थात् हृदय में किसी भी कामना के उदय होते ही इन्द्रिय, मन, प्राण, देह, धर्म, धैर्य, बुद्धि, लज्जा, श्री, तेज, स्मृति और सत्य ये सबके सब नष्ट हो जाते हैं।

भक्तिमान् महाराज मनु और भक्तिमती महारानी शतरूपा की निष्काम प्रेमाभक्ति से प्रसन्न होकर –

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना। (1/146/8)

अर्थात् श्रीभगवान उचित अवसर पर प्रकट होकर उन्हें प्रत्यक्ष ही दर्शन देते हैं और उसी प्रकार परम भक्त श्रीकाकभुशुण्डिजी की निष्काम प्रेमाभक्ति से प्रसन्न होकर श्रीभगवान उनसे प्रत्यक्ष होकर वरदान माँगने को कहते हैं–

काकभुसुंडि मागु बर अति प्रसन्न मोहि जानि। (7/83ख)

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं (5/32/7)–अनन्य भाव से की गयी सेवा के फलस्वरूप, भगवान श्रीराम जिनके ऋणी होकर रह गए और जिनके मंत्रमय–वचन को प्रस्तुत शीर्षक बनाकर यह निवेदक भी जिनका ऋणी हो गया, उन अनन्य भक्तिशिरोमणि श्रीहनुमानजी महाराज का इस स्थान पर स्मरण किए बिना तो श्रीभगवान के परम भक्तों की यह चर्चा अधूरी ही रह जाएगी। निवेदन है कि श्रीहनुमानजी महाराज श्रीभगवान के ऐसे निष्काम अनन्य भक्त हैं कि उन्होंने अपने पवित्र मन से भगवन्नाम जप करके ही, श्रीभगवान को अपने वश में कर लिया और श्रीभगवान ने भी उनके हृदय की निर्मलता से सन्तुष्ट होकर उनके हृदय को अपने नित्य निवास के लिए पसन्द कर लिया–

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू। (1/26/6)
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। (1/17)

निवेदन यह है कि श्रीभगवान को ढूँढ़ने की विधि के उपर्युक्त प्रसंगों की चर्चा से एक निर्णय तो अवश्य निकलता ही है कि चाहे अवतार काल में, साक्षात श्रीभगवान के शरणागत होना हो या फिर अपने अन्दर और बाहर सदैव विराजमान प्रभु को प्रकट करना हो, हर स्थिति में अनन्य प्रेम और अटल–श्रद्धा–विश्वास ही सहायक सिद्ध होते हैं। कोई और अन्य साधन है ही नहीं। श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीभगवान ने स्वयं भी यही कहा है कि–

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप।। (श्रीगीताजी 11/54)

अर्थात् हे परंतप! मुझे तत्व से जानने में, देखने में और मेरी प्राप्ति में केवल मेरी अनन्य भक्ति ही सहायक सिद्ध होती है। तीनों प्रकार से मैं केवल अनन्य भक्ति (प्रेम) के द्वारा ही शक्य (प्राप्त/साध्य/सुगम) होता हूँ और किसी अन्य साधन से नहीं। निवेदन है कि उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए जीवन की सभी आवश्यकताओं को धर्मसम्मत–यानी

कि **यथा लाभ संतोषा** के सिद्धांतों से पूरा करें और एक लालसा को सदा जाग्रत रखते हुए, उनके प्रति सच्चे मन से सतत प्रयासरत रहें कि–

राम चरन बारिज जब देखौं। तब निज जन्म सफल करि लेखौं।। (7/110/14)

श्रीभगवान के अतिरिक्त जब भी कभी किसी और से कुछ माँगने की स्थिति आ जाये तो एक ही वरदान माँगें कि–

सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। (2/205/2)

यदि जब कभी स्वयं अपने आपको या अपने किसी स्नेही स्वजन को शुभकामना देनी हो तो केवल यही शुभ कामना दें कि–

जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल।
सो कृपाल मोहि तो पर सदा रहउ अनुकूल।। (7/124क)

भक्तों को परम सुख प्रदान करने वाले, श्रीभगवान के श्रीचरणकमलों के दर्शनों का मनोरथ इस प्रकार करें कि –

चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं। करत मनोरथ बहु मन माहीं।।
देखिहउँ जाइ चरन जलजाता। अरुन मृदुल सेवक सुखदाता।।
जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंडक कानन पावनकारी।।
जे पद जनकसुताँ उर लाए। कपट कुरंग संग धर धाए।।
हर उर सर सरोज पद जेई। अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई।। (5/42/4–8)
जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ।। (5/42)

अपने आप में, एक भरोसे को, एक बल को, एक आस को और एक विश्वास को दृढ़ करें कि–

एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास।
एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास।। (दोहावली/207)

अर्थात् एक श्रीभगवान की कृपा का ही भरोसा है, एक उनके ही बल का आश्रय है, एक उनका ही आसरा है और मेरा यह जन्म केवल श्रीभगवान के दर्शनों के लिए ही हुआ है, अतः यह जीवन उनको ही समर्पित है और जैसे चातक पक्षी, वर्षा ऋतु में, जल से भरे हुए काले बादलों के दर्शन की उत्कट लालसा से सदैव आकाश की ओर टकटकी लगाकर देखता रहता है, उसी प्रकार मैं भी कृपा रूपी जल से भरे हुए करुणानिधान घनश्याम श्रीभगवान के दर्शनों के लिए पलक–पाँवड़े बिछाए, सदैव उनकी बाट जोहता रहूँगा और एक विश्वास के साथ श्रीभगवान के शरणागत होवे कि–

जद्यपि जनमु कुमातु तें मैं सठु सदा सदोस।
आपन जानि न त्यागिहहिं मोहि रघुबीर भरोस।। (2/183)

श्रीभगवान की दुस्तर माया–जाल से छूटने और जब भी श्रीभगवान कृपा करके किसी रूप में भी हमें दर्शन देने हमारे समक्ष आएँ तब हम उन्हें पहचान पाएँ और उनसे परम सुखदायिनी अविरल भक्ति की याचना कर पाएँ, इस हेतु श्रीहनुमानजी महाराज की भाँति, श्रीभगवान से एक ही प्रार्थना नित्य करें कि–

तव माया बस फिरउँ भुलाना। ताते मैं नहिं प्रभु पहिचाना।। (4/2/9)
एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान।। (4/2)
जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें।।
नाथ जीव तव मायाँ मोहा। सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोहा।।
ता पर मैं रघुबीर दोहाई। जानउँ नहिं कछु भजन उपाई।।
सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें।। (4/3/1–4)
नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी।। (5/34/1)

श्रीभगवान की कृपापूर्ण सुखदायिनी शरणागति मिल जाने पर फिर कभी हम उनसे बिलग न हों और श्रीभगवान सदैव हमें अपने सान्निध्य में ही रखें, इस हेतु समर्पणशिरोमणि श्रीलक्ष्मणजी द्वारा की गई प्रार्थना को उसी विश्वास के साथ हम भी नित्य करें कि–

गुर पितु मातु न जानउँ काहू। कहउँ सुभाउ नाथ पतिआहू।।
जहँ लगि जगत सनेह सगाई। प्रीति प्रतीति निगम निजु गाई।।
मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर अंतरजामी।।(2/72/4–6)
मन क्रम बचन चरन रत होई। कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई।। (2/72/8)

तो! अब तो यह एक श्रीभगवान के प्रण, प्रतिष्ठा, पराक्रम और स्वभाव पर पूर्ण विश्वास करने की बात है कि **प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि (5/22)** और अब यह एक श्रीभगवान की आन और बान की भी बात है कि–**एक बानि करुनानिधान की। सो प्रिय जाकें गति न आन की।। (3/10/8)** और अब यह एक अपने आत्मविश्वास की बात है कि उपर्युक्त पूर्ण समर्पण भाव से शरणागत होने पर–

गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि।। (5/22)

युवा पीढ़ी देश का भविष्य है। शास्त्रानुकूल विद्याध्ययन से जीवन में संस्कारों का जन्म होता है, जिससे हम नशाखोरी और अपराधों से दूर रहकर, राष्ट्र–चिन्तन के प्रति हमेशा समर्पित रहेंगे।

श्रीराम–जन्मभूमि मंदिर अयोध्या

श्रीमती राजवती शर्मा, नोएडा, फोनः 9650721742

हिन्दुओं के आराध्य भगवान श्रीराम की जन्मभूमि है–अयोध्या। ब्रह्म पुराण के अनुसार पावन सप्तपुरियों (अयोध्या, मथुरा, काशी, हरिद्वार, उज्जैन, द्वारका और कांची) में अयोध्या का प्रथम स्थान है। अयोध्यापुरी नित्य है। वह सच्चिदानन्दरूपा है–

अयोध्यानगरी नित्या सच्चिदानन्दरूपिणी। – (साकेतसुषुमा, पृष्ठ 7)

जैसे काशी, मथुरा दिव्य भूमियाँ हैं, वैसे ही अयोध्या भी दिव्य भूमि है। यह भगवान श्रीराम का नित्य धाम है। जैसे मथुरा–वृन्दावन भगवती राधा और भगवान श्रीकृष्ण की नित्य विहार–भूमि है, वैसे ही अयोध्या भी भगवती सीता और भगवान श्रीराम की नित्य विहार–भूमि है। स्कंद पुराण के द्वितीय वैष्णव खंड के 20वें श्लोक में श्रीराम–जन्मभूमि अयोध्या के माहात्म्य के वर्णन में लिखा है–

यद् दृष्ट्वा च मनुष्यस्य गर्भवासजपो भवेत्।
विना दानेन तपसा विना तीर्थैविना मखैः।।

(राम–जन्मभूमि के दर्शन मात्र से बिना दान के, बिना तप के, बिना तीर्थयात्रा के तथा बिना यज्ञ किए ही मनुष्य की मुक्ति हो जाती है, उसे गर्भ में रहना नहीं पड़ता।)

भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त काकभुशुण्डि पक्षिराज गरुड़ को अयोध्यापुरी के प्रभाव के विषय में अपना अनुभव सुनाते हुए कहते हैं–अब मैंने अवध का प्रभाव जान लिया है कि किसी जन्म में जो कोई भी अवध में बस जाता है, वह अवश्य ही भगवान श्रीराम के परायण हो जाता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कवनेहुँ जन्म अवध बस जोई। राम परायन सो परि होई।। (7/97/6)

वाल्मीकीय रामायण के अनुसार अयोध्या विश्व की प्रथम राजधानी थी। अयोध्या नगरी को सृष्टि के प्रथम पुरुष महाराज मनु ने बसाया था। यह उस समय 120 किलोमीटर लम्बी और 30 किलोमीटर चौड़ी थी। यह बड़ी सुंदर, भव्याकर्षण, मनभावन, पापहारिणी और सुखदायिनी थी। इक्ष्वाकु, मान्धाता, मुचुकुन्द, सगर, भगीरथ, हरिश्चन्द्र, दिलीप जैसे प्रतापी राजाओं ने यहाँ शासन किया और इसकी कीर्ति–ध्वजा में चार चाँद लगाए। महाराज रघु ने इसकी कीर्ति–ध्वजा में और सितारे टाँक कर इसका गौरव बढ़ाया। यहाँ त्रेतायुग

के अन्तिम चरण में जगत की परमसत्ता परब्रह्म ने राम रूप में जन्म लेकर मनभावन मधुर लीलायें कीं। पूर्व मीमांसकों के अनुसार आदिकाल से अयोध्या श्रीराम की जन्मभूमि है। भगवान श्रीराम के शब्दों में भी अयोध्या उनकी जन्मभूमि है, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जन्म भूमि मम पुरी सुहावनि। (7/4/5)

अयोध्या की एक काव्यात्मक झलक देखिए–

चल मेरे मन आज अयोध्या
जन्मभूमि जो जगमाली।
कल–कल करती सरयू बहती
पावन शीतल जलवाली।।

जग–विख्यात अयोध्या नगरी
बसी हुयी सरयू तट पर।
सदा उमड़ता रहता पावन
दिव्यानन्द महासागर।।

मनु ने स्वयं बसाया उसको
अति सम्पन्न मनोहर थी।
भव्याकर्षण पापहारिणी
वह सुखदा मनभावन थी।।

'सरल' अयोध्या क्या? हरि–मानस
नृप 'मनु' माँग धरा लाए।
पावन सरयू–तीर बसायी
देख देव तक हर्षाए।।

–सरल

जैसे काशी और द्वारका सृष्टिकर्ता ब्रह्मा की सृष्टि नहीं हैं, वैसे ही अयोध्यापुरी भी सृष्टिकर्ता ब्रह्मा की रचना नहीं है, अपितु यह तो भगवान विष्णु का हृदय है, जिसे प्रथम महाराज मनु भगवान श्रीहरि से माँग कर भूलोक में लाए थे और उसे सरयू नदी के तट पर बसाया था।

अयोध्या में भगवान श्रीराम का भव्य मंदिर था, जिसे विदेशी आक्रांता ने ध्वंस कर दिया था और उसी के भग्नावशेषों से मस्जिद का ढाँचा खड़ा कर दिया था। स्वतंत्रता के बाद अयोध्या मंदिर का पुनर्निर्माण भी सोमनाथ मंदिर की तरह बिना किसी अकुलाहट के

होना चाहिए था, परन्तु दुर्भाग्यवश यह वोट बैंक की राजनीति का शिकार हो गया। इस कारण राम मंदिर के पुनर्निर्माण के लिए हिन्दुओं को वर्षों तक संघर्ष करना पड़ा।

मुस्लिम वोट बैंक की राजनीति करने वाली पार्टियों के स्वार्थांध नेताओं का कथन था कि राम का कोई अस्तित्व नहीं है, कोरी कल्पना है और अयोध्या में राम मंदिर था ही नहीं। ऐसे लोगों का मुँह बंद करने के लिए हमारे वेद, शास्त्र, पुराण और भारतीय प्राचीन इतिहास डंके की चोट पर कहते हैं कि राम कल्पना नहीं, अपितु यथार्थ हैं और उनकी जन्मभूमि अयोध्या है। यह बात सर्वोच्च न्यायालय में सप्रमाण सिद्ध की जा चुकी है। अयोध्या में राम मंदिर होने का सबसे प्रबल साक्ष्य तो 6 दिसम्बर, 1992 को ढहाए ढाँचे की दीवारों से निकले राम मंदिर के 265 अवशेष दे रहे हैं। इन अकाट्य प्रमाणों की कोई काट नहीं है। उनमें काले रंग की राम और काकभुशुण्डि की मूर्तियाँ सारी भ्रान्तियों को समाप्त कर देती हैं और सिद्ध करती हैं कि वह मस्जिद राम मंदिर तोड़कर ही बनायी गयी थी।

अब प्रश्न यह उठता है कि आज से लगभग 8,80,150 (आठ लाख अस्सी हजार एक सौ पचास) वर्ष पूर्व जन्मे राम, जिनकी कीर्ति–पताका आज भी दिग्दिगन्त में देदीप्यमान है, **वे राम कौन हैं?**

'राम' शब्द का अर्थ है– वह तत्व जिसमें योगी पुरुष रमण करते हैं, उसे राम कहते हैं–

रमंते योगिनो यस्मिन् सः रामः।

आध्यात्मिक दृष्टि से कहें तो श्रीराम अनंत कोटि ब्रह्माण्डनायक, सच्चिदानन्दकन्द परब्रह्म हैं। वे एक, नित्य, सत्य, अनंत, अखंड, अव्यक्त, अचिन्त्य, अविनाशी, घटघटवासी शुद्ध ब्रह्म हैं। वे एकसाथ निर्गुण–सगुण, निराकार–साकार हैं। वे सृष्टि के आदि कारण हैं। वही जगत के कर्ता, भर्ता और संहर्ता हैं। वही जगत के ईश्वर हैं। वे काल के भी काल, मन आदि से परे, सर्वव्यापक, सर्वप्रेरक, अन्तर्यामी हैं। वे जगत के कण–कण में व्याप्त हैं। ऐसी कोई जगह नहीं, जहाँ भगवान राम न हों। वही हमारे प्राणाधार और जीवन–नैया के पतवार हैं। वही हमारे भाग्यविधाता हैं। वही हमारी भाग्य–पंक्ति को चक्र की भाँति घुमा रहे हैं। हमारी जीवन–डोर उन्हीं के हाथ में है। वे ही कठपुतली की भाँति हमें नचा रहे हैं। वही जगन्नियंता जगदीश्वर धर्मोत्थान करने और भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने के लिए हर कल्प में अवतार लेते हैं, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कलप कलप प्रति प्रभु अवतरहीं। चारु चरित नाना बिधि करहीं।। (1/140/2)

गीता के अनुसार–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।। (4/7)

अर्थात् जब–जब धर्म का पतन होता है और अधर्म बढ़ जाता है, तब–तब साधुओं की रक्षा, दुष्टों का विनाश, धर्मोत्थान करने के लिए भगवान अवतार लेते हैं, परन्तु वे अपनी भगवत्ता को अपनी योगमाया से छिपाये रहते हैं, इसलिए हम उन्हें पहचान नहीं पाते। भगवान श्रीराम के जन्म–कर्म दिव्य हैं। उनके जन्म–कर्म की दिव्य पावन कथा को पढ़ने–सुनने से प्राणी जन्म–कर्म के बंधन से छूट जाते हैं।

भगवान श्रीराम समस्त जीवों के हृदय में रहते हैं और विश्व के समस्त प्राणियों के मन की बात जानते हैं। वे सभी प्राणियों के मन–मंदिर में बैठे हुए यह देखते रहते हैं कि प्राणी के मन में क्या भाव है। भगवान प्रेमभाव के भूखे हैं। उन्हें प्रेमभाव से जो दिया जाए, उसे वे बड़े प्रेम से स्वीकार कर लेते हैं, किंतु उन्हें छल–छंद पसंद नहीं।

लोक दृष्टि से कहें तो राम धर्म की साकार मूर्ति हैं– **रामो विग्रहवान् धर्मः।** राम प्रकृति–नटी को नचाने वाले सूत्रधार हैं। राम मर्यादापुरुषोत्तम हैं। राम भक्ति, प्रीति, नीति, न्याय, आस्था, दया, करुणा, शील, सौंदर्य, बल और शिवत्व का मंगलमय समन्वय हैं। राम ज्ञान–कर्म–भक्ति का संगम हैं। राम धर्म–चक्र की धुरी, मानवता की रीढ़ और भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि हैं। राम लोक का विश्वास, भारत की आत्मा और भारतीय जीवन–मूल्यों के मेरुदंड हैं। राम मर्यादा के परम आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित हैं। श्रीराम के पावन चरित्र सहज, ग्राह्य और व्यावहारिक होने के कारण मानव–समाज के लिए अनुकरणीय हैं।

भगवान राम की लीलायें अलौकिक होते हुए भी लौकिक लगती हैं, इसलिए साधारण मनुष्य के लिए सहज ग्राह्य हैं। भगवान राम ने एक आम मनुष्य की तरह जीवन के झंझावातों का सामना करते हुए अर्थात् संघर्ष करते हुए सदा धर्म–मार्ग पर चलकर लोक को धर्म–पालन की शिक्षा दी। भगवान श्रीराम का शरीर पंचभूतों (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) से निर्मित हाड़–मांस का पुतला नहीं था, अपितु उनका शरीर तो दिव्यातिदिव्य सच्चिदानन्दमय था, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

चिदानंदमय देह तुम्हारी। बिगत बिकार जान अधिकारी।। (2/127/5)

श्रीराम अयोध्यानरेश दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र थे, अतः अयोध्या राम की जन्मभूमि है। वे एक आदर्श और प्रजावत्सल राजा थे। उन्होंने रामराज्य की स्थापना कर सूर्यवंश की कीर्ति–पताका में और चार चाँद जड़े। प्रजा को समर्पित राम जैसा राजा और रामराज्य जैसा राज्य पहले न हुआ था, न भविष्य में होगा–**न भूतो न भविष्यति।** उन्होंने अपने आचरण से ऐसा आदर्श स्थापित किया, जिसके कारण राम हमारे जीवन में, प्राणों में और हृदय में बस गए हैं। राजा राम ने अपने जीवन में त्याग को प्रधानता दी–यही राम का

आदर्श था। उन्होंने अज्ञानवश एक व्यक्ति के लांछन लगाने पर गंगाजल सी पवित्र, निर्दोष, सतीशिरोमणि अपनी प्राणप्रिया सीता का परित्याग कर दिया था। वे प्रजा–मनोरंजन के लिए सदा सुखामृत बहाते रहे और स्वयं विरह–विष–पान करते रहे। राजाराम के इस महान त्याग से परिवारवाद की राजनीति करने वाले वर्तमान शासकों को शिक्षा लेनी चाहिए। यदि हमारे वर्तमान नेता राजाराम की इस शिक्षा को आत्मसात कर लें तो भारत में रामराज्य का स्वप्न साकार हो सकता है।

ऐसे प्रजावत्सल, भगवान श्रीराम के मंदिर का पुनर्निर्माण आवश्यक था। आखिरकार हिन्दुओं का संघर्ष और रामभक्तों का बलिदान रंग लाया। असत्य पराजित हुआ और सत्य की विजय हुयी। भगवान श्रीराम की जन्मभूमि अयोध्या में उसी स्थल पर पुनः श्रीराम का भव्य मंदिर बना। मंदिर में भगवान श्रीराम (रामलला) की विधिवत् प्राण–प्रतिष्ठा हुयी, **नवम्बर 2025 में राम मंदिर के शिखर पर ध्वजारोहण हुआ और पावन अयोध्याधाम की काया पलट हुयी तो मुझे अपार हर्षोल्लास हुआ और ऐसी अकथनीय आनन्दानुभूति हुयी कि मानो मुझे मानव–जीवन के चारों पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) प्राप्त हो गए।**

शिकायत या धन्यवाद?

एक आदमी ने सालों की मेहनत से पैसे जोड़कर अपने परिवार के लिए एक सुन्दर घर बनवाया। जब घर पूरा हो गया, तो उसने तय किया कि तीन दिन बाद अपने परिवार के साथ वहाँ शिफ्ट करेगा, लेकिन शिफ्टिंग से ठीक एक दिन पहले रात में भूकंप आ गया और वह नया घर पूरी तरह से मिट्टी में मिल गया। अगली सुबह जब मोहल्ले वाले, रिश्तेदार और जानने वाले दुख प्रकट करने उस उजड़े घर के पास पहुँचे, तो सब हैरान रह गए, वह आदमी हाथ में मिठाई का डिब्बा लेकर आया और सबको मिठाई बाँटने लगा। लोगों की हैरानी गुस्से में बदल गई। एक ने झुंझलाकर पूछा, ''तुम्हारा दिमाग तो सही है, इतना बड़ा नुकसान हुआ और तुम मिठाई बाँट रहे हो'' उस आदमी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, ''नहीं भाई, मैं तो भगवान का धन्यवाद कर रहा हूँ कि भूकंप एक रात पहले आ गया, अगर मैं अपने परिवार के साथ उस घर में होता, तो आज मिठाई नहीं बाँट रहा होता, बल्कि सब मलबे के नीचे दफन होता।''

जिंदगी में हमेशा दो रास्ते होते हैं:

एक शिकायत का और दूसरा धन्यवाद का, हम क्या चुनते हैं, यही है हमारे विचारों की देन।

चित्रकूट की आध्यात्मिक महिमा

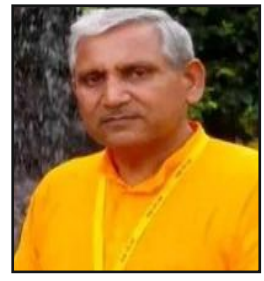

श्री श्रवण कुमार पाण्डेय, झाँसी, फोनः 9450073660

तुलसीदासजी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस एक दिव्य ग्रन्थ है, जिसके प्रत्येक शब्द में अलौकिक शक्ति समाहित है। गोस्वामी तुलसीदासजी को इस महान दिव्य ग्रन्थ की रचना करने की प्रेरणा एवं शक्ति श्रीहनुमानजी की कृपा से चित्रकूट में ही प्राप्त हुई। श्रीरामचरितमानस की रचना लोकभाषा में होने से चित्रकूट जैसे पिछड़े तथा वंचित क्षेत्र का आध्यात्मिक विकास हो गया। भौतिक दृष्टि से आज भी यह क्षेत्र अविकसित ही है, किंतु इस क्षेत्र में विशुद्ध प्रेम की धारा निरंतर प्रवाहित हो रही है। प्रेम की प्रधानता होने के कारण यह क्षेत्र आध्यात्मिक विकास के लिए उत्तम है।

रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा।। (2/137/1)

भगवत्कृपा प्राप्त करने के लिए सबसे श्रेष्ठ एवं सुगम स्थल चित्रकूट को ही मानते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी ने विनय पत्रिका में लिखा है कि–

अब चित चेत चित्रकूटहिं चलु।

हमारे अन्तःकरण चतुष्टय (मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार) में जब चित्त की प्रधानता होने से विशुद्ध प्रेम जाग्रत हो जाता है, तब हमारे हृदय में ही भगवान के दर्शन हो जाते हैं, जैसा कि भगवान शिव ने कहा है–

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।। (1/185/5)

गोस्वामी तुलसीदासजी ने अनेक तीर्थ क्षेत्रों का भ्रमण किया, परन्तु भगवान श्रीरामजी के प्रत्यक्ष दर्शन का सौभाग्य उन्हें चित्रकूट में ही प्राप्त हुआ।

चित्रकूट के घाट पर भइ सन्तन की भीर।
तुलसीदास चन्दन घिसैं तिलक देत रघुबीर।।

जब भगवान श्रीराम 14 वर्ष के वनवास के प्रारम्भ में महर्षि वाल्मीकिजी के आश्रम आकर उनसे उचित निवास स्थल पूछते हैं, तब वे उनके लिए चित्रकूट को ही सर्वश्रेष्ठ निवास स्थान बताते हैं, यथा–

चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू।। (2/132/3)
चित्रकूट महिमा अमित कही महामुनि गाइ।

आइ नहाए सरित बर सिय समेत दोउ भाइ।। (2/132)

महर्षि वाल्मीकिजी के निर्देशानुसार भगवान श्रीराम ने लगभग 12 वर्षों तक चित्रकूट में निवास किया तथा वहाँ के वनवासी आदिवासी लोगों के साथ आत्मीय प्रेम सहित रहे।

बेद बचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन।। (2/136)

भगवान श्रीराम के चित्रकूट में निवास करने से चित्रकूटगिरि का नाम कामदगिरि हो गया, जो जन–जन की कामनापूर्ति का केन्द्र बन गया–

कामद भे गिरि राम प्रसादा। अवलोकत अपहरत बिषादा।। (2/279/1)

सभी श्रद्धालुओं की ऐसी मान्यता है कि चित्रकूट भगवान राम का शास्वत धाम है तथा कामदगिरि भगवान राम का साक्षात् विग्रह ही है, जिनकी शरण में अनेक दीन–दुखी श्रद्धालु आकर मनोवांछित सिद्धि प्राप्त करते हैं। चित्रकूट का महत्व केवल मनोकामनाओं की पूर्ति तक ही सीमिति नहीं है। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य आदि आध्यात्मिक तत्वों की प्राप्ति के लिए भी यह अनादि काल से एक सिद्ध स्थल रहा है। इस तथ्य को महर्षि अत्रिजी भरतजी से कहते हैं कि–

तात अनादि सिद्ध थल एहू। लोपेउ काल बिदित नहिं केहू।।
बिधि बस भयउ बिस्व उपकारू। सुगम अगम अति धरम प्रचारू।। (2/310/4 एवं 6)

इस प्रकार से यद्यपि चित्रकूट अनादि काल से सिद्ध स्थल रहा है, किंतु इसका ज्ञान केवल कुछ विशिष्ट लोगों तक ही सीमित था। भगवान श्रीराम ने अपनी वनवास लीला के माध्यम से इस सिद्ध स्थल का जन सामान्य के लिए पुनः लोकार्पण कर दिया। श्रीरामचरितमानस में चित्रकूट के आध्यात्मिक साम्राज्य का बहुत सुन्दर वर्णन मिलता है। यहाँ पर विवेक रूपी राजा अपने वैराग्य रूपी मंत्री, यम नियम रूपी सेनापति तथा शान्ति, सुमति एवं शुचि रूपी सुन्दर रानियों के साथ निष्कण्टक राज्य कर रहे हैं, यथा–

सचिव बिरागु बिबेकु नरेसु। बिपिन सुहावन पावन देसू।।
भट जम नियम सैल रजधानी। सांति सुमति सुचि सुन्दर रानी।।
सकल अंग संपन्न सुराऊ। राम चरन आश्रित चित चाऊ।। (2/235/6–8)
जीति मोह महिपालु दल सहित बिबेक भुआलु।
करत अकंटक राजु पुरँ सुख संपदा सुकालु।। (2/235)

इस प्रकार चित्रकूट के दो स्वरूप बन जाते हैं। पहला स्वरूप स्थूल है, जो एकदेशीय है और जिसमें सभी का प्रवेश हो सकता है। यहाँ पर कामदगिरि, मन्दाकिनी की पवित्र

धारा, ब्रह्म कुण्ड से प्रवाहित पयस्वनी की धारा, सरयू धारा तथा रामघाट में मत्त गजेन्द्रनाथ नाम से विराजमान भगवान शिव के दर्शन होते हैं।

चित्रकूट का दूसरा स्वरूप सूक्ष्म तथा व्यापक है, जिसमें नित्य श्रीसीतारामजी विहार करते हैं। इस चित्रकूट का दर्शन करने के लिए हम सभी को भगवान श्रीराम की कथा रूपी मंदाकिनी के जल से अपने चित्त को निर्मल करना आवश्यक है। निर्मल चित्त में ही विशुद्ध प्रेम रूपी सुन्दर वन प्रदेश बन जाता है, जिसमें श्रीसीतारामजी नित्य विहार करते हैं। इस आध्यात्मिक चित्रकूट का दर्शन साधन साध्य नहीं है, बल्कि भगवत् कृपा साध्य है। जिस साधक पर श्रीरामजी की कृपा हो जाती है, वही अपने घर पर रहते हुए नित्य चित्रकूट का दर्शन प्राप्त कर सकता है, यथा–

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।। (1/31)

हम सभी का चित्त प्राकृतिक रूप से निर्मल ही होता है, किन्तु जीवन काल की कुछ परिस्थितियों के कारण षट्विकार हमारे निर्मल चित्त को दूषित कर देते हैं। जब हमारा प्रवेश चित्रकूट के दिव्य क्षेत्र में हो जाता है, तब चित्रकूट का आध्यात्मिक प्रभाव हमारे अन्तःकरण के सभी विकारों को नष्ट कर देता है तथा चित्त को पुनः निर्मल बना देता है। यहाँ पर चित्रकूट एक शिकारी की तरह मानसिक दोषों पर घात लगाता है।

चित्रकूट जनु अचल अहेरी। चुकइ न घात मार मुठभेरी।। (2/133/4)

चित्रकूट में चित्त का परिष्कार होता है। परिष्कृत चित्त रूपी चित्रकूट में ही भगवान श्रीराम आज भी अपने छोटे भाई लक्ष्मण तथा सीताजी के साथ निरंतर निवास कर रहे हैं।

चित्रकूट निसि दिन बसत प्रभु सिय लखन समेत।
राम नाम जप जापकहिं तुलसी अभिमत देत।। (दोहावली से)

भक्तों की भावना के अनुसार चित्रकूट में भगवान श्रीरामजी के तीन स्वरूपों में दर्शन होते हैं–

लखन जानकी सहित प्रभु राजत रुचिर निकेत।
सोह मदनु मुनि बेष जनु रति रितुराज समेत।। (2/133)
राम लखन सीता सहित सोहत परन निकेत।
जिमि बासव बस अमरपुर सची जयंत समेत।। (2/141)
सानुज सीय समेत प्रभु राजत परन कुटीर।
भगति ग्यानु बैराग्य जनु सोहत धरें सरीर।। (2/321)

उपर्युक्त तीन स्वरूप साधना के तीन सोपान हैं। प्रथम सोपान में सौन्दर्य की प्रधानता है। दूसरे में दैवी समृद्धि की प्रधानता है तथा तीसरे सोपान में आध्यात्मिक सिद्धियों के दर्शन होते हैं।

कहते हैं कि गोस्वामी तुलसीदासजी ने अपने जीवनकाल में **अनादि सिद्ध स्थल चित्रकूट की आध्यात्मिक महिमा का स्वयं भी अनुभव किया है।**

भगवान मेरे हैं

—श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज

एक सीधी सरल बात—भगवान मेरे हैं। ऐसे भगवान को मेरा कह दिया तो बड़ा असर पड़ता है प्रभु पर। अनेक जन्मों से बिछुड़ा हुआ और चौरासी लाख योनियाँ भुगतता हुआ, दुःख पाता हुआ जीव अगर कह दे—'हे नाथ! मैं आपका हूँ। हे प्रभु! आप मेरे हो' तो प्रभु को बड़ा संतोष होगा। बड़े ही राजी होंगे भगवान। भगवान की खोयी हुई चीज उनको मिल गयी।

सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघनासहिं तबहीं।। (5/44/2)

भगवान के सम्मुख होते ही करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते, क्योंकि पाप तो भगवान से विमुख होने से ही हुए हैं। सब पापों की जड़ तो वहाँ से चली है। भगवान के सम्मुख होते ही बेचारे पाप टिक नहीं सकेंगे। इस वास्ते 'हे नाथ! मैं आपका हूँ। आप मेरे हैं', ऐसे भगवान के साथ अपनापन है—यह बहुत सार चीज है। क्रियाओं के द्वारा आप भगवान को नहीं पकड़ सकते, जितना प्रेम के द्वारा, अपनेपन के द्वारा पकड़ सकते हो। बड़े अच्छे—से—अच्छे काम करो, यज्ञ करो, दान करो, तीर्थ आदि करो, वेदाध्ययन करो। सब—की—सब लाभ की बातें हैं, परन्तु अपनापन किया जाए, यह बहुत लाभ की और विचित्र बात है।

एक करोड़पति के यहाँ एक नौकर है, जो बीस हजार रुपये पाता है और करोड़पति का लड़का है, उसे सौ रुपये महीना भी कोई दे नहीं सकता, क्योंकि वह अयोग्य है। पिता मर जाता है, तो बीस हजार रुपये पाने वाला नौकर मालिक नहीं बन सकता, पर अयोग्य लड़का मालिक बन जाता है। वह योग्य तो नहीं है, पर उसका हक बनता है। इस प्रकार योग्यता से वह अधिकार नहीं मिलता, जो अपनेपन से मिलता है।

'प्रभु के हम हैं'—यह बनाया हुआ अपनापन नहीं है। भगवान तो सभी जीवों को अपना कहते हैं, यथा—

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः (गीता 15/7) अब केवल आपकी सम्मति होने की जरूरत है। सम्मुख होने की आवश्यकता है कि मैं भगवान का हूँ।

जगत–मोहिनी माया

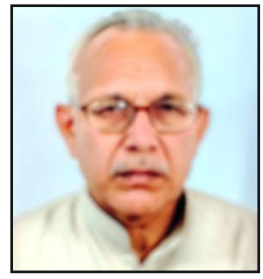

श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल', साहित्याचार्य, नोएडा, फोनः 9311384212

पर्वत–शिखर जिसके मस्तक हैं, सूर्य–चन्द्र जिसके नेत्र हैं, तारे जिसके आभूषण हैं, पृथ्वी जिसका उदर है, नदियाँ जिसकी नसें हैं और वृक्ष जिसके रोम हैं–यह षड्रसमय जगत क्या है?

संसरतीति संसारः (जो सरक रहा है, वह संसार है।) जगत माया का खेल है। माया ही जगत की रचना, पालन और संहार करती है। जगत नश्वर और परिवर्तनशील है। कल तक जहाँ निर्जन था, वहाँ आज सहस्रों विद्युत–दीपों के प्रकाश से प्रदीप्त सुंदर गगनचुंबी भवन दिखाई देते हैं। आज जिन खंडहरों, ध्वंसावशेष भवन, महल और किलों की तरफ कोई देखता तक नहीं, वे कभी सहस्रों दीप–मालाओं से आलोकित थे और विलासता के केन्द्र थे। यह सब उस मायाविनी माया की लीला है या यों कहें कि जगत उस नटनी की रंगशाला है। जो कुछ हम देख रहे हैं, यह सब उसी नटनी का अभिनय है।

जगत घोर अटवी है। समस्त प्राणियों को माया ही इस भवाटवी में भटका रही है और वही सबको अपनी उँगली के इशारे पर नचा रही है। इस जगत को माया ने ही बनाया है, किंतु जगत का निर्माण करने के लिए माया ने और कहीं से सामग्री नहीं ली है, बल्कि जैसे मकड़ी अपने मुख से लार निकालकर जाला बनाती है, वैसे ही माया ने भी अपने मुख से पाँच प्रकार के तार यानी पाँच प्रकार की सामग्री (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) उगलकर जगत को बनाया है–

यथा रचती है मकड़ी जाल
उगल कर अपने मुख से लार।
तथा माया भी रचती जगत
उगल निज से पचरंगे तार।।

–सरल

जैसे मकड़ी अपने बनाए जाल में कुछ समय तक खेलती है और फिर मन भर जाने पर उसे स्वयं निगल जाती है, वैसे ही माया भी स्वनिर्मित जगत के साथ कुछ समय तक खेलती है और फिर उसे स्वयं निगल जाती है।

अब प्रश्न उठता है कि जिसने मकड़ी की भाँति इस दुर्गम जगज्जाल को बनाया है, जिसने आकाश में बिना आधार के सूर्य–चन्द्र–तारों को लटकाया है, जिसने गगनचुंबी पर्वत बनाए हैं, जिसने घाटियों को फुरसत में बैठकर फूलों से सजाया है, जिस चितेरी ने बिना ब्रश–रंग के फूलों में सुंदर रंग और मनमोहिनी सुगंध भरकर 'सोने में सुगंध' वाली कहावत चरितार्थ की है, जिसने जगत के समस्त प्राणियों को मोह के गर्त में डाल रखा है और जिसकी संसार में जय जयकार हो रही है, वह माया कौन है?

'माया' शब्द दो वर्ण **मा** और **या** से मिलकर बना है। **मा** का अर्थ है–निषेधात्मक और **या** का अर्थ है–हकारात्मक, अतः माया शब्द का अर्थ है–जो न हो उसे दिखाए, वह माया है।

'माया' शब्द का प्रयोग दर्शन शास्त्र और धर्म–ग्रंथों में विभिन्न नामों से हुआ है, जैसे–वेदान्त दर्शन में माया, सांख्य शास्त्र में प्रकृति। श्रीमद्भगवद्गीता में माया और प्रकृति दोनों शब्दों का प्रयोग हुआ है।

वेदान्त शिरोमणि आद्यजगद्गुरु शंकराचार्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ विवेक चूड़ामणि में माया का स्वरूप इस प्रकार बतलाया है–

अव्यक्तनाम्नी परमेशशक्तिरनाद्यविद्या त्रिगुणात्मिका परा।
कार्यानुमेया सुधियैव माया यया जगतसर्वमिदं प्रसूयते।।

अर्थात् जो अव्यक्त नाम वाली त्रिगुणात्मिका (सत्, रज, तम गुण वाली), अनादि, अविद्या, परमेश्वर की पराशक्ति है, वही माया है। माया से ही यह सारा जगत उत्पन्न हुआ है।

माया ब्रह्म की शक्ति है। जिस प्रकार वट के दाने में वट–वृक्ष की शक्ति ओत–प्रोत रहती है, उसी प्रकार माया भी ब्रह्म में ओत–प्रोत रहती है। ब्रह्म की शक्ति होने के कारण माया अनादि है। माया अत्यन्त गहन, दुस्तर, विलक्षण, अघटितघटनापटीयसी (असंभव को भी संभव करने में चतुर) और अनिर्वचनीया (जिसके विषय में इत्थंभूत कुछ भी न कहा जा सके) है। अज्ञान, अविद्या, प्रकृति आदि माया के नाम हैं। इसका न आदि है, न अंत है, यह अनंत है। माया वह सुषुप्ति है, जिसमें बेचारे जीव अपने स्वरूप को भूलकर सोते रहते हैं। माया सत्, रज, तम–इन तीन गुणों से युक्त है, अतः त्रिगुणमयी है। माया की दो शक्तियाँ हैं–आवरण और विक्षेप। माया की आवरण शक्ति तो परमात्मा को ऐसे ढक लेती

है, जैसे बादल की घटा सूर्य को ढक लेती है और विक्षेप शक्ति परमात्मा में जगत की भ्रान्ति कराती है।

संतशिरोमणि तुलसीदासकृत श्रीरामचरितमानस के अरण्यकाण्ड में माया का वर्णन मिलता है–एक बार पंचवटी पर भगवान श्रीराम सुख से बैठे हुए थे, तब उनके अनुज लक्ष्मण ने उनसे अनेक आध्यात्मिक प्रश्न किए। उनमें से एक प्रश्न यह भी था कि **माया किसे कहते हैं?** इसके उत्तर में भगवान श्रीराम ने चन्द शब्दों में जो उत्तर दिया, वह बड़ा सारगर्भित है–

मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया।।
गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।।
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ।।
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।।
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।। (3/15/2–6)

(मैं और मेरा, तू और तेरा–यही माया है।) माया ने समस्त प्राणियों को अपने वश में कर रखा है। इन्द्रियों के विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) और जहाँ तक मन जाता है, वह सब माया है अर्थात् जो आँखों से दिखाई देता है और जहाँ तक चंचल मन जाता है, वह सब माया है। माया के दो भेद हैं–विद्या और अविद्या। इनमें अविद्या तो दोषयुक्त और अत्यंत दुखरूप है, जिसके वश में होकर जीव भवकूप (संसार रूपी कुआँ) में पड़ा हुआ है और दूसरी विद्या है, उसके वश में गुण रहते हैं। वह संसार की रचना करती है। वह भगवान श्रीराम से प्रेरित है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, झूठ, कपट, अत्याचार, व्यभिचार, तस्करी, शोषण, हिंसा आदि माया का परिवार है और माया का यह परिवार अमरबेल की तरह फैलता जा रहा है। संसार में चारों ओर इसी बलवती माया के बल का जोर है। विश्व के अनंत आकाश में माया की कीर्ति का तिरंगा झंडा फहर रहा है और उसी का सर्वत्र जयघोष गूँज रहा है। माया के स्वरूप की एक काव्यमयी झलक देखिए–

जग को मोहित करने वाली
माया बड़ी अपार है।
दुस्तर अति गंभीर विलक्षण
पाया किसने पार है।।

गूढ़ अनिर्वचनीया माया
आदि न अंत, अनंत है।
जान न पाते वेद वेदविद
सुर ऋषि मुनिवर संत हैं।।

ब्रह्मशक्ति सहचरी संगिनी
जननी इस संसार की।
कैद पड़ी माया की मुट्ठी
साँसें इस संसार की।।

अघटितघटनापटीयसी वह
त्रिगुणमयी गंभीर है।
बाधक मानव–मुक्ति, अविद्या
देती तन–मन पीर है।।

काम क्रोध मद लोभ मोह भ्रम
झूठ कपट व्यभिचार रे।
तिमिर तस्करी शोषण हिंसा
माया का परिवार रे।।

चारों ओर इसी ठगिनी के
बल का जग में जोर है।
फहर रहा नभ कीर्ति–तिरंगा
गूँज रहा जयघोष है।।

–सरल

वेदान्त, उपनिषद्, शास्त्र, पुराण और रामायणों के अनुसार जनकपुत्री सीता भगवान श्रीराम की माया हैं। भगवान श्रीराम विश्व की सर्वोपरि सत्ता हैं और सीताजी उनकी अनिर्वचनीया माया हैं। सीतोपनिषद् के अनुसार सीताजी शक्तिस्वरूपा, मूलप्रकृति, भगवान श्रीराम का प्राण और ऐश्वर्य हैं। सांख्य शास्त्र के अनुसार सीताजी प्रकृति हैं। भगवान शिव

द्वारा रचित अध्यात्म रामायण के अनुसार सीताजी ही संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार करती हैं–

एषा सीता हरेर्माया सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी। – (अ0रा0 2/5/23)

(ये सीताजी जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करने वाली साक्षात् भगवान श्रीराम की माया हैं।)

अध्यात्म रामायण को अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस की आधारशिला मानने वाले संत तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड के मंगलाचरण में आद्यशक्ति रामप्रिया भगवती सीता को संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाली, क्लेशों को दूर करने वाली तथा सम्पूर्ण कल्याणों को करने वाली कहकर प्रणाम किया है–

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं कलेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।। (1/मंगलाचरण–5)

भक्ति का सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ श्रीमद्भागवत् पुराण में भी माया के दो भेद बताए हैं–माया और योगमाया। योगमाया को अपने अधीन करके भगवान अवतार लेते हैं अर्थात् शरीर धारण करते हैं। भगवान श्रीकृष्ण योगमाया का आश्रय लेकर ही रासलीला जैसी विचित्र लीलायें करते हैं। सीता, राधा, लक्ष्मी, दुर्गा आदि योगमाया हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण अपने सखा अर्जुन से कहते हैं कि मैं अजन्मा और अविनाशी होते हुए भी तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया से प्रकट होता हूँ–

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया।। (4/6)

भगवान श्रीकृष्ण आगे कहते हैं कि मेरी मूलप्रकृति सम्पूर्ण भूतों की योनि अर्थात् गर्भाधान का स्थान है और मैं उस योनि में गर्भ को स्थापन करता हूँ। उस जड़–चेतन के संयोग से सब प्राणियों की उत्पत्ति होती है, इसलिए प्रकृति तो उन सब प्राणियों की माता है और मैं पिता हूँ–

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम्।
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत।। (14/3)
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता।। (14/4)

भगवान की माया बड़ी प्रबल है। उसके सामने साधारण प्राणियों की तो चले क्या, बड़े–बड़े तपस्वी भी ठहर नहीं पाते। वे बड़े–बड़े वीतरागी ज्ञानियों के भी चित्त को बलपूर्वक खींच कर मोह में डाल देती है–

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति।। (दुर्गासप्तशती–1/55–56)

तभी तो महात्मा तुलसीदासजी ने मानस में कहा है–श्रीरघुनाथजी की माया बड़ी प्रबल है। जगत में ऐसा कौन जन्मा है, जिसे माया ने मोहित न किया है–

अति प्रचंड रघुपति कै माया। जेहि न मोह अस को जग जाया।। (1/128/8)

उस बलवती माया के आगे विश्व नतमस्तक है। यदि यह कहा जाए कि समस्त प्राणियों के जीवन का परिणाम माया की मुट्ठी में है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। माया कितनी प्रबल है, यह बताने के लिए श्रीरामचरितमानस में वर्णित 'नारद–मोह' और 'सती–मोह' ज्वलंत उदाहरण हैं–

नारद–मोह की कथा के अंतर्गत हरिभक्त देवर्षि नारद जिस विश्वमोहिनी कन्या के रूप सौंदर्य पर लट्टू हो गए थे और उसके साथ विवाह करने के लिए बेचैन हो गए थे, वह विश्वमोहिनी और कोई नहीं थी, भगवान की माया ही तो थी। जिस बलवती माया ने काम–विजय का दंभ भरने वाले नारद को कामासक्त बनाकर विवाह करने के लिए अत्यधिक उतावला बना दिया था, उस अपनी माया का अपार बल देखकर तो स्वयं भगवान हरि भी अपनी हँसी नहीं रोक पाए थे–

निज माया बल देखि बिसाला। हियँ हँसि बोले दीनदयाला।। (1/132/8)

दूसरे सती–मोह प्रसंग में भगवान श्रीरामजी की जिस बलवती माया ने भगवान शिव की अर्धांगिनी भगवती सती तक से राम–पत्नी सीता का रूप धारण करवाया और फिर झूठ बुलवा दिया था, उस माया के चरणों में शंकर भगवान को भी नतमस्तक होना पड़ा था–

तब संकर देखउ धरि ध्याना। सतीं जो कीन्ह चरित सबु जाना।
बहुरि राममायहि सिरु नावा। प्रेरि सतिहि जेहिं झूँठ कहावा।। (1/56/4–5)

महाभारत के 10वें दिन के युद्ध में परम पुरुषार्थी, अजेय, इच्छामृत्यु भीष्मपितामह के सामने अर्जुन की ढाल बनकर शिखंडी के रूप में भगवान श्रीकृष्ण की प्रचंड माया ही तो

आकर खड़ी हो गयी थी। उसी ने अजेय भीष्मपितामह को बाणों से छलनी कर शर–शैया पर सुलाया था।

भगवान की माया बड़ी गूढ़ और रहस्यमयी है। **श्रीसत्यनारायण व्रत कथा** के चौथे अध्याय में साधु नाम का वैश्य दंडी स्वामी स्वरूप भगवान से उनकी माया की गूढ़ता बतलाते हुए कहता है–हे प्रभो! यह बड़े आश्चर्य की बात है कि आपकी माया से मोहित होने के कारण ब्रह्मा आदि देवता भी आपके गुणों और रूप को यथावत् रूप से नहीं जान पाते, फिर मैं उस बलवती माया से घिरा, उसके प्रबल चंगुल में फँसा आपको कैसे जान सकता हूँ–

त्वन्मायामोहिताः सर्वे ब्रह्माद्यास्त्रिदिवौकसः।

न जानन्ति गुणान् रूपं तवाश्चर्यमिदं प्रभो।। (4/14)

अब प्रश्न उठता है कि जब माया इतनी गूढ़, अनादि, अनंत, अपार, दुस्तर है, तब उसके जटिल बंधन से छूटने का क्या कोई उपाय है?

हाँ, उपाय है और एक नहीं अनेक उपाय हैं–एक उपाय तो यह है कि माया ने जीवों को उन्हीं के द्वारा निर्मित जिस कर्म–शृंखला से बाँध रखा है, यदि वह कर्म–शृंखला टूट जाए तो जीव बंधन–मुक्त हो सकता है, परन्तु वह कर्म–शृंखला टूटे कैसे? इसके उत्तर में भगवती श्रुति कहती है–

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयः।

क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।। (छान्दोग्य उपनिषद्)

(उस परावर तत्व का साक्षात्कार कर लेने पर यानी परात्पर पुरुषोत्तम को तत्व से जान लेने पर उस जीव के हृदय की अज्ञान रूपी गाँठ खुल जाती है, उसके सभी संशय मिट जाते हैं और समस्त शुभ–अशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं अर्थात् जीव कर्म–बंधन से मुक्त होकर परमानंद परमेश्वर को प्राप्त हो जाता है। फिर उसे जन्म–मरण का चक्कर काटना नहीं पड़ता।)

यही बात श्रीमद्भगवत्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कही है–

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा। (गीता–4/37)

(ज्ञानाग्नि में समस्त कर्म (क्रियमाण, संचित और प्रारब्ध) भस्म हो जाते हैं। कर्म–भस्म होने पर जीव बंधन मुक्त हो जाता है।)

भगवान का साक्षात्कार (दर्शन) करने से जीव के कर्म–बंधन से छूटने की बात को मानसकार ने भी व्यक्त किया है–

सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं।। (5/44/2)

भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में अपनी दुस्तर माया को पार करने का सरल उपाय बतलाया है–

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। (7/14)

(अर्थात् ये त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर (जिसे बड़ी कठिनाई से पार किया जा सके) है, परन्तु जो प्राणी मुझको भजते हैं, वे भक्त मेरी इस दुस्तर माया को तर जाते हैं अर्थात् इस मायिक भवसागर को पार कर जाते हैं।)

माया का पार पाने के लिए माया जिसकी दासी है, उस मायापति को पाने का प्रयत्न करो और उस मायापति को प्राप्त किया जा सकता है–भक्ति से। माया नर्तकी है, वह सबको नचाती है। यदि नर्तकी माया के बंधन से छूटना है तो 'नर्तकी' शब्द को उलट दो तो शब्द होगा–कीर्तन। भगवान का कीर्तन करने से नर्तकी माया छूट जाती है। इसलिए संतों ने कीर्तन भक्ति को श्रेष्ठ माना है। **मनुष्य को चाहिए कि भगवान की कथा का श्रवण, कीर्तन और स्मरण करे।**

माया की प्रेरणा से यह अविनाशी जीव काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से घिरा हुआ सदा भटकता फिरता है–

फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा।। (7/44/5)

परन्तु भगवान श्रीराम के राज्य में काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से उत्पन्न दुख किसी भी प्राणी को नहीं थे यानी रामराज्य में समस्त जड़–चेतन माया के बंधन से मुक्त थे–

राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं।। (7/21)

मानस–प्रेमियों से कहना है कि माया के बंधन से छुटकारा पाने के लिए या तो हम रामराज्य में जाकर रहें या रामराज्य को ही अपने हृदय में ले आएँ। वर्तमान समय में धरती पर तो कहीं रामराज्य दिखायी नहीं देता, इसलिए रामराज्य को ही हमें अपने हृदय में स्थापित करना होगा, तभी हम प्रचंड बलवती जगन्मोहिनी माया के जटिल बंधन से छुटकारा पा सकते हैं।

श्रीराम की लोकप्रियता

पं. दिनेश चंद्र शर्मा, नोएडा, फोनः 9811056467

भगवान के यद्यपि अनेक अवतार हुए हैं और उनकी महिमा भी एक से एक बढ़कर रही है, तथापि अनेक विद्वानों और सन्तों ने दशरथनन्दन रूप में हुए रामावतार को सर्वश्रेष्ठ माना, क्योंकि उनके सब कर्म जहाँ ईश्वरोचित थे, वहीं मानवोचित एवं अनुकरणीय थे। उन्होंने जो लीलाएँ कीं उनमें मानव से कुछ अधिक होने का आभास नहीं होने दिया। श्रीराम के जीवन चरित्र पर एक दृष्टि डालें तो बाल्यकाल से ही उनके कर्म में मानवता का पुट मिलेगा। श्रीराम के पुरुषोचित कर्मों ने ऋषि भरद्वाज एवं सती के मन में भी संदेह पैदा कर दिया, ऋषि भरद्वाज का प्रश्न था–

एक राम अवधेस कुमारा। तिन्ह कर चरित बिदित संसारा।।
नारि बिरहँ दुखु लहेउ अपारा। भयउ रोषु रन रावनु मारा।। (1/46/7–8)

और सती के मन की शंका थी–

ब्रह्म जो ब्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत बेद।। (1/50)

श्रीराम का सभी विषयों में पारंगत होना, सभी के प्रति आत्मीयता का भाव, न्याय–निपुणता और उज्ज्वल चरित्र उनकी लोकप्रियता का विशेष कारण रहा है। इसीलिए उन्हें आदर्श पुरुष, पुराण पुरुष और मर्यादापुरुषोत्तम नामों से सम्बोधित किया गया है।

किसी एक कार्य से कोई व्यक्ति सभी क्षेत्रों में लोकप्रियता प्राप्त नहीं कर सकता। लोकप्रियता तो सभी क्षेत्रों में दक्षता होने पर ही बढ़ती है। श्रीराम की लोकप्रियता के मुख्य कारण त्याग, तपस्या, सदाचार, नीति, पाण्डित्य, शौर्य आदि अनेक गुण थे। उनमें प्रेमभाव तो इतना अधिक था कि मृगादि पशु भी उनकी ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रहे, यथा–

फिरत अहेर राम छबि देखी। होहिं मुदित मृग बृंद बिसेषी।। (2/138/2)

इसी कारण देवगण भी चित्रकूट के मृगादि पशुओं के भाग्य की सराहना करते हैं, यथा–

चित्रकूट के बिहग मृग बेलि बिटप तृन जाति।
पुन्य पुंज सब धन्य अस कहहिं देव दिन राति।। (2/138)

वनवासियों ने जब यह जाना कि प्रभु श्रीराम वन में आकर रहने लगे हैं तो सभी को प्रसन्नता हुई और वे दोनों में कन्द मूल फल भर–भर कर भेंट देने के लिए ले चले। गोस्वामीजी वर्णन करते हुए लिखते हैं–

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई। हरषे जनु नव निधि घर आई।।
कंद मूल फल भरि भरि दोना। चले रंक जनु लूटन सोना।। (2/135/1–2)

प्रभु श्रीराम के व्यक्तित्व और आकर्षक सौन्दर्य का प्रभाव शत्रुओं पर भी पड़े बिना नहीं रहा। खर–दूषण की सेना ने श्रीरामचन्द्रजी को चारों ओर से घेर लिया, किन्तु उनकी रूप माधुरी देखकर चकित रह गए, यथा–

प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनीचर धारी।।
सचिव बोलि बोले खर दूषन। यह कोउ नृपबालक नर भूषन।। (3/19/1–2)
नाग असुर सुर नर मुनि जेते। देखे जिते हते हम केते।।
जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूपा। बध लायक नहिं पुरुष अनूपा।। (3/19/3 एवं 5)

प्रभु श्रीराम जब शत्रुओं में भी इतने प्रिय थे, तब अन्य जनों में उनकी लोकप्रियता बढ़ी तो आश्चर्य ही क्या है? श्रीराम अयोध्या नगरी को छोड़कर चले तो वहाँ के निवासियों की दशा उनके वियोग की कल्पना करके ही बिगड़ती जा रही थी। इसीलिए पुरवासी झुण्ड के झुण्ड उनके साथ चल पड़े–

सबहिं बिचारु कीन्ह मन माहीं। राम लखन सिय बिनु सुखु नाहीं।।
जहाँ रामु तहँ सबुइ समाजू। बिनु रघुबीर अवध नहिं काजू।। (2/84/5–6)

श्रीराम ने साथ आए लोगों को बहुत समझाया और उन्हें घर लौटने के लिए बार–बार कहा, किन्तु कोई भी लौटना नहीं चाहता था। कितना उत्कट प्रेम था प्रजाजनों का। भगवान विवश थे, न तो साथ ले जा सकते थे और न फेरने से वे फिरते ही थे। तब उन्हें एक उपाय सूझा–अर्धरात्रि व्यतीत होने पर रथ को इस प्रकार चलाया जाए कि किसी को खोज के लिए ठीक चिह्न न मिल सके, यथा–

राम लखन सिय जान चढ़ि संभु चरन सिरु नाइ।
सचिवँ चलायउ तुरत रथु इत उत खोज दुराइ।। (2/85)

भगवान चले गए। उस समय कोई भी न जान सका कि वे कहाँ जा रहे हैं। कुछ तो शोक श्रम से थके हुए थे और कुछ देवताओं की माया से मोहित हुए अचेत पड़े रहे। जब प्रातःकाल हुआ और उनकी आँख खुली तब तो कोहराम मच गया। सभी हाय राम! हाय राम! पुकारते हुए चारों दिशाओं में दौड़ने लगे। मानो कोई समुद्री जहाज डूब गया

हो और व्यापारियों को उससे बड़ी हानि हुई हो। वे परस्पर कहने लगे–रामचन्द्रजी के बिना तो हमारे जीवन को ही धिक्कार है। यदि विधाता ने प्रिय का वियोग ही दिया, तो मृत्यु ही क्यों नहीं दे दी।

बाल्यावस्था में भी वे प्रेम की साक्षात् मूर्ति रहे। जो बालक उनके साथ खेलते, वे सब उनसे अत्यन्त स्नेह करने लगे। श्रीराम भी निरभिमान रूप से उनकी बात मान लेते। जनकपुर के प्रजाजनों ने जब सुना कि रामचन्द्रजी नगर देखने के लिए आए हैं, तो उनके चित्त में श्रद्धा और प्रेम का सागर उमड़ पड़ा। वहाँ की युवतियाँ व महिलाएँ भी प्रेम रस में डूबे बिना न रह सकीं, यथा–

जुबतीं भवन झरोखन्हि लागीं। निरखहिं राम रूप अनुरागीं।। (1/220/4)

राजा जनक भी उस रूप–रस और प्रेम रस के प्रवाह से वंचित न रह सके। उनमें भी श्रीराम के दर्शनोपरान्त आत्मविस्मृति का भाव विशेष रूप से जाग्रत हो उठा। मानस के अनुसार–

मूरति मधुर मनोहर देखी। भयउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी।। (1/215/8)

श्रीरामजी के पिता तो उनसे प्राण के समान प्रेम करते थे। राम के वन जाने पर तो महाराज श्रीदशरथजी ने उनके वियोग में अपने प्राण ही त्याग दिए। यथा–

हा रघुनंदन प्रान पिरीते। तुम्ह बिनु जिअत बहुत दिन बीते।। (2/155/7)
राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहर रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम।। (2/155)

श्रीराम के सम्पर्क में आने पर पत्थर भी प्राणवान हो गया। महर्षि गौतम की पत्नी अहिल्या पति–शाप से पाषाण हो गयी थी। वह श्रीराम का चरण स्पर्श पाते ही उठ खड़ी हुई। इसी प्रकार जब समुद्र पार करने के लिए मार्ग की आवश्यकता हुई, तब पत्थरों ने अपने गुरूत्व गुण का त्याग करके जल पर तैरना आरम्भ कर दिया। यद्यपि नल–नील नामक वानरों को वैसा वरदान प्राप्त था तथापि रामचन्द्रजी की कृपा के बिना उन पत्थरों का जल पर पंक्तिबद्ध रूप में स्थिर रहना संभव नहीं था। श्रीरामचरितमानस में यही प्रतिपादन हुआ है–

श्री रघुबीर प्रताप ते सिंधु तरे पाषान। (6/3)

और उन वानरों को देखिए जो रामकाज के लिए जीवन तक न्योछावर करने में पीछे नहीं हटे, इसीलिए भगवान राम उनकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं–

ऐ सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भये समर सागर कहँ बेरे।।
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पिआरे।। (7/8/6–7)

अर्थात् हे मुने! ये सब मेरे सखा हैं, जो युद्ध रूप समुद्र में बेड़ा (जहाज) बन गए। इन्होंने मेरे लिए जीवन तक बलिदान कर दिया। इसीलिए ये मुझे भरत से भी अधिक प्रिय हैं। विभीषणादि सभी उनसे कितना स्नेह करते हैं, इसका अनुमान निम्नलिखित पंक्ति से सहज ही लगाया जा सकता है, यथा–

एकटक रहे जोरि करि आगे। सकहिं न कछु कहि अति अनुरागे।। (7/17/2)

श्रीराम के निर्विकार भाव का प्रभाव वन के अहिंसक जीवों पर भी इतना गहरा पड़ा कि वे सब पारस्परिक शत्रुभाव का त्याग करके साथ–साथ घूमने लगे थे।

करि केहरि कपि कोल कुरंगा। बिगतबैर बिचरहिं सब संगा।। (2/138/1)

इस प्रकार भगवान श्रीरामचन्द्रजी का चरित्र अलौकिक है लेकिन लोकमर्यादित होने से समाज के सभी वर्गों के लिए अनुकरणीय है। हमारे जीवन में, हमारे समाज में, देश में, परिवार में व पूरे विश्व में सुख शान्ति तभी स्थिर रह सकती है, जब हम श्रीराम के जीवन से शिक्षा लेकर उसका अनुकरण करें और तभी 'रामराज्य' जिसकी कल्पना बहुतों ने की और आधुनिक काल में महात्मा गांधी ने की, स्थापित हो सकेगा। इसका मूल मंत्र है आपसी प्रेम–सद्भाव। मानस के शब्दों में –

दैहिक दैविक भौतिक तापा । रामराज नहिं काहुहि ब्यापा।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/1–2)

राम–साक्षी

भारतीय मानसिकता हर स्थिति में राम को साक्षी बनाने की आदी है। कुछ उदाहरण इस प्रकार से हैं–

अभिवादन में राम राम!	दुःख में हे राम!
लज्जा में हाय राम!	अशुभ में अरे राम राम!
शपथ में रामदुहाई!	अज्ञानता में राम जाने!
अनिश्चिता में राम भरोसे!	अचूकता के लिए रामबाण!
मृतक के पीछे राम नाम सत्य है!	सुशासन के लिए रामराज्य!

जनक नन्दनी जानकी

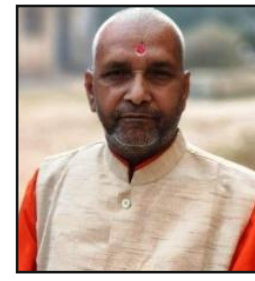

श्री राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी (उ.प्र.), फोनः 9451131195

जनक–नन्दनी जगत–वन्दनी रामप्रिया सिया जानकी।
अजर अमर बल बुद्धि वर दे माता बनी श्री हनुमान की।।
मैं बालक हूँ बुरा भला हूँ जैसा भी हूँ तेरा माँ।
पूत कुपूत भले हो जाये पर माँ रहे सुमाता माँ।।
मेरी मति को सुमति बना दे तू समर्थ है मेरी माँ।
बाल हँसे तो माँ हँसती है रोये पूत तो रोती माँ।।
वात्सल्यमयी करुणामयी माता रक्षा करना प्रानकी।
जनक–नन्दनी जगत–वन्दनी रामप्रिया सिया जानकी।। (1)

तेरी कृपा कटाक्ष प्राप्त कर रंक अवनिपति होते हैं।
चिंता रहित सदा रहते जो गोद तुम्हारी सोते हैं।।
शरण गहे जो जगजननी की जग में वे नहीं रोते हैं।
सुयश शांति सुख सम्पत्ति जग में स्वतः प्रसोते हैं।।
मातृ मैथिली महिमामयी माँ जननी तुम्हीं जहान की।
जनक–नन्दनी जगत–वन्दनी रामप्रिया सिया जानकी।। (2)

तेरे लिए प्रभु राम रोते हैं विरही जब हो जाते हैं।
श्रुति संत सद्ग्रंथ शास्त्र सब यश तेरा ही गाते हैं।।
दया दृष्टि जब तुम करती तो नर पारस हो जाते हैं।
तेरी महिमा गा – गाकर नर भवसागर तर जाते हैं।।
तारनहारी जग–पालनकारी सुखदात्री माँ जानकी।
जनक–नन्दनी जगत–वन्दनी रामप्रिया सिया जानकी।। (3)

माधव मास तिथि नवमी को धरा धाम पर आयी।
सुर नर ऋषि मुनि भक्त जनों ने तेरी महिमा गायी।।
तेरी बाल सुलभ सब क्रीड़ा जनकराज को भायी।
किया अकाल सब दूर राज्य से सुख समृद्धि छायी।।
मिथला को महिमामय कीन्ही नवरत्नों की खानकी।
जनक–नन्दनी जगत–वन्दनी रामप्रिया सिया जानकी।। (4)

वाल्मीकि शारद श्रुति नारद महिमा क्या कह सकते।
साधु संत ऋषि मुनि जन सब गुण कहते नहिं थकते।।
तेरे गुणों को गाये नित जो उसके सब दुख कटते।
सप्त द्वीप नव खण्ड सभी तेरी माया में भटकते।।
दयादृष्टि हो जाये मुझ पै माँ भगवती–भगवान की।
जनक–नन्दनी जगत–वन्दनी रामप्रिया सिया जानकी।। (5)

मानस में अलंकारों की छटा

श्री सचिन शर्मा, नोएडा, फोनः 9310555665

'श्रीरामचरितमानस' का ही संक्षिप्त नाम है–मानस। श्रीरामचरितमानस जन–जन का प्राण है और संतशिरोमणि तुलसीदासजी द्वारा रचित लोकप्रसिद्ध महाकाव्य है।

सर्वप्रथम प्रश्न उठता है कि काव्य किसे कहते हैं?

आचार्य विश्वनाथ ने रसयुक्त वाक्य को काव्य कहा है–**रसात्मकं वाक्यं काव्यम्।** लोकनायक कवि संत तुलसीदास ने भी अपने पांडित्य का प्रदर्शन न करते हुए सहज स्वभाव अपने महाकाव्य मानस की प्रथम पंक्ति में काव्य की परिभाषा दी है–रसयुक्त, छंदोबद्ध शब्द–अर्थ के समूह को काव्य कहते हैं–**वर्णानां अर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।**

'काव्य' शब्द का अर्थ है–कविता–ग्रंथ, अतः 'महाकाव्य' का अर्थ हुआ–बड़ा कविता ग्रंथ। पद्य को ही कविता कहते हैं। 'कविता' शब्द स्त्रीलिंग है, अतः स्त्रीलिंग होने के कारण कविता को कविता सुंदरी भी कहते हैं। विद्वान कवियों ने कविता सुंदरी की तुलना सुंदर युवती से की है। उसी तुलना की एक झलक आपके समक्ष प्रस्तुत है–

कविता सुन्दरी की सुन्दर युवती से तुलना

क्र0 सं0	शरीरांग	कविता सुन्दरी	सुन्दर युवती
1.	शरीर निर्माण	कविता सुंदरी का शरीर दो तत्वों से बना है। वे दो तत्व हैं–शब्द–अर्थ –वर्णानामर्थसंघानाम्	नारी का शरीर पाँच तत्वों से बना है। वे तत्व हैं– पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश।
2.	अलंकार	अलंकारों से कविता सुंदरी की शोभा बढ़ती है।	आभूषणों से युवती की शोभा बढ़ती है।
3.	आत्मा	रस कविता की आत्मा है। रसहीन कविता व्यर्थ की बकवास है।	आत्मा के बिना नारी का शरीर मुर्दा है।
4.	गुण	गुणों से रस का उत्कर्ष होता है।	गुणों से नारी की कीर्ति बढ़ती है।
5.	दोष	दोषों से रस का अपकर्ष होता है।	दोषों से नारी का अपयश होता है।
6.	पाद (पैर)	छन्द कविता के पैर हैं। छन्दोबद्ध कविता चिरकाल तक रहती है।	पैरों से नारी अपनी जीवन यात्रा सहज ही तय करती है।

कविता सुन्दरी के सौंदर्य में चार चाँद लगाने वाले अर्थात् कविता सुन्दरी की शोभा बढ़ाने वाले अलंकार ही इस लेख का मुख्य विषय है।

अब पुनः प्रश्न उठता है कि अलंकार किसे कहते हैं?

'अलंकार' संस्कृत भाषा का शब्द है। 'अलंकार' शब्द का अर्थ है–आभूषण, गहना। जैसे–हार, कुंडल, कंगन आदि। जैसे स्वर्णादि के आभूषणों से नारी की शोभा बढ़ती है, वैसे ही अलंकारों से काव्य का सौंदर्य बढ़ता है–

काव्य शोभाकारान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते। – (आचार्य दंडी)

(काव्य की शोभा बढ़ाने वाले साधनों को अलंकार कहते हैं।)

संत तुलसीदास ने मानस के बालकाण्ड में मानस को मानसरोवर का रूप दिया है, उसमें उपमा आदि अलंकारों को मानसरोवर की तरंगों का विलास बताया है–

उपमा बीचि बिलास मनोरम। (1/37/3)

वस्तुतः अलंकार काव्य का साध्य नहीं, साधन है। बिना अलंकार के भी कविता अधिक सुन्दर हो सकती है। जैसे एक सुंदर युवती बिना आभूषणों के भी सुंदर लगती है, वैसे ही बिना अलंकार के कविता भी सुन्दर लगती है, परन्तु जैसे सुंदर नारी आभूषणों से और सुंदर लगने लगती है, वैसे ही अलंकारों से कविता सुंदरी की शोभा भी और बढ़ जाती है अर्थात् कविता सुंदरी के सौंदर्य में और चार चाँद लग जाते हैं, इसलिए काव्य में अलंकारों का अपना ही महत्व है। जैसे युवती की शोभा बढ़ाने वाले हार, कुंडल, कंगनादि आभूषण अनेक प्रकार के होते हैं, वैसे ही कविता सुंदरी की शोभा बढ़ाने वाले अलंकार भी अनेक प्रकार के हैं।

अलंकार मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं–शब्दालंकार और अर्थालंकार। जो अलंकार काव्य के शब्दों की शोभा बढ़ाते हैं, उन्हें शब्दालंकार कहते हैं और जो अलंकार काव्य के अर्थ की शोभा बढ़ाते हैं, उन्हें अर्थालंकार कहते हैं। शब्दालंकार कई प्रकार के होते हैं और अर्थालंकार भी अनेक प्रकार के होते हैं। शब्दालंकार के मुख्य रूप से तीन भेद ये हैं–**अनुप्रास, यमक और श्लेष**। अर्थालंकार के बीसियों भेद हैं, उनमें से मुख्य ये हैं–उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, भ्रान्तिमान, संदेह, अतिशयोक्ति आदि। शब्दालंकार और अर्थालंकारों के कई–कई उपभेद भी हैं।

अब मैं पाठकों का ध्यान इस लेख के शीर्षक–'मानस में अलंकारों की छटा' की ओर आकृष्ट कराता हूँ। चतुर मानसकार ने अपने कवित्व चातुर्य से अपने 'मानस' को विविध अलंकारों से बड़े सुंदर ढंग से सजाया है, अतः सम्पूर्ण मानस विविध अलंकारों की छटा से सुशोभित है–यही इस लेख का मुख्य विषय है। अब यहाँ इसी का प्रतिपादन करते हैं। यों तो समूचे मानस में विविध अलंकारों की सर्वत्र छटा बिखरी पड़ी है, किंतु इस छोटे से लेख में उस सबका वर्णन करना तो संभव नहीं है। यहाँ केवल उसकी एक बानगी दिखाते हैं अर्थात् **मानस में बिखरी अलंकारों की छटा की एक झलक का ही दिग्दर्शन कराते हैं**–

शब्दालंकारों की छटा

1. अनुप्रास अलंकार–

जहाँ एक वर्ण या शब्द की बार–बार आवृत्ति हो, वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है, जैसे–

जय राम रमा **रमनं समनं**
भवताप **भ**याकुल पाहि जनं।
अवधे**स** सुरे**स** रमे**स** बिभो
सरना**गत** मा**गत** पाहि प्रभो।। (7/14/छंद)

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन रामु हृदयँ गुनि।।
मानहुँ मदन दुन्दुभी दीन्ही। मनसा बिस्व बिजय कहँ कीन्ही।। (1/230/1)
मुनि पद कमल बंदि दोउ भ्राता। चले लोक लोचन सुखदाता।। (1/119/1)
चितवत चितहि चोरि जनु लेहीं। (1/219/7)
सर समीप गिरिजा गृह सोहा।। (1/228/4)

इन पद्यों में रेखांकित शब्द और वर्णों की बार–बार आवृत्ति हुयी है, अतः यहाँ इन पद्यों में अनुप्रास अलंकार की छटा है।

2. यमक अलंकार–

जहाँ एक शब्द की बार–बार आवृत्ति हो, परन्तु प्रत्येक बार अर्थ भिन्न हो, वहाँ यमक अलंकार होता है, जैसे–

मूरति मधुर मनोहर देखी। भयउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी।। (1/215/8)

(भगवान श्रीराम की मधुर मनोहर मूर्ति (छवि) देखकर विदेह (राजा जनक) विदेह (देह की सुध–बुध रहित) हो गए।)

समन्वय–यहाँ 'बिदेहु' शब्द दो बार आया है, परन्तु दोनों शब्दों के अर्थ अलग–अलग हैं। पहले 'बिदेहु' शब्द का अर्थ राजा जनक है और दूसरे 'बिदेहु' शब्द का अर्थ देह की सुध–बुध न रहना है, अतः अर्थ भिन्न होने से इस चौपाई में यमक अलंकार की छटा है।

3. श्लेष अलंकार–

जहाँ एक शब्द एक ही बार आए, परन्तु उसके कई अर्थ निकलते हों तो वहाँ श्लेष अलंकार होता है। 'श्लेष' शब्द का अर्थ है–चिपका हुआ। इसमें जिस श्लेष शब्द का प्रयोग होता है, उसमें कई अर्थ चिपके रहते हैं, जैसे–

रावन सिर सरोज बनचारी। चलि रघुबीर सिलीमुख धारी।। (6/92/7)

(रावन के शिर रूपी कमल वन में विचरण करने वाले रघुवीर के बाण रूपी भौंरों का झुंड चला।)

समन्वय – यहाँ 'सिलीमुख' शब्द के दो अर्थ हैं–बाण और भौंरा। इस प्रसंग में यहाँ दोनों ही अर्थ सार्थक हैं, अतः यहाँ श्लेष अलंकार की छटा है।

बहुरि सक्र सम बिनवउँ तेही। संतत सुरानीक हित जेही।। (1/4/10)

(संत तुलसीदास दुष्ट पुरुषों की वंदना करते हुए कहते हैं कि फिर उन्हें (असंतों को) इन्द्र के समान मानकर उनकी विनय करता हूँ, जिनको सुरा (मदिरा) नीकी और हितकारी मालूम देती है अर्थात् इन्द्र के लिए भी सुरानीक अर्थात् देवताओं की सेना हितकारी है।)

समन्वय – यहाँ 'सुरानीक' शब्द इन्द्र के लिए आया है। **'सुरानीक'** शब्द के दो अर्थ हैं और दोनों ही अर्थ इन्द्र के लिए उपयुक्त हैं–(1) सुर + अनीक = देवता हैं जिसकी सेना में अर्थात् इन्द्र। (2) सुरा + नीक = शराब है जिसको प्रिय अर्थात् इन्द्र, अतः यहाँ 'सुरानीक–शब्द के दो अर्थ होने से श्लेष अलंकार की छटा है।

4. वक्रोक्ति अलंकार –

जहाँ वक्ता के कहे हुए वाक्य का श्रोता व्यंग्य के द्वारा कुछ दूसरा ही अर्थ लगावे। ऐसे द्विअर्थक शब्द को वक्रोक्ति कहते हैं, अतः जहाँ वक्रोक्ति शब्द होता है, वहाँ वक्रोक्ति अलंकार होता है, जैसे–

कह कपि धर्मसीलता तोरी। हमहुँ सुनी कृत पर त्रिय चोरी।। (6/22/5)

(अंगद–रावण–संवाद के अंतर्गत अंगद ने रावण से कहा– तुम्हारी धर्मशीलता मैंने भी सुनी है। वह यह कि तुमने परायी स्त्री की चोरी की है।)

समन्वय–यहाँ 'धर्मशीलता' का रूप 'परायी स्त्री की चोरी' में दिखाया गया है। यह उक्ति ठीक नहीं है, अपितु वक्रोक्ति है, इसलिए यहाँ **वक्रोक्ति अलंकार की छटा** है।

अर्थालंकारों की छटा

1. उपमा अलंकार–

अर्थालंकारों में 'उपमा' अलंकार प्रथम और सबसे अधिक महत्वपूर्ण है तथा प्रचलित अलंकार है। उपमा अलंकार का सटीक प्रयोग करने में संस्कृत के कविकुलगुरु कालिदास सिद्धहस्त थे, तभी तो विद्वानों ने उनके विषय में कहा है–**उपमा कालिदासस्य**। उन्हीं की तरह हिंदी के कवियों में लोकनायक कवि संत शिरोमणि तुलसी का नाम सटीक उपमा देने में प्रख्यात है।

उपमा अलंकार के चार अंग होते हैं– उपमेय, उपमान, वाचक और साधारण धर्म (गुण)। उपमा अलंकार की परिभाषा देने से पूर्व उपमा के इन चारों अंगों को बतलाना आवश्यक है, क्योंकि इनको समझने से और कई अर्थालंकारों को सुगमता पूर्वक समझा जा सकता है–

'उपमा' शब्द का अर्थ है–समानता।

उपमेय जिसको उपमा दी जाये अर्थात् जिसकी समता की जाए।

उपमान = जिसकी उपमा दी जाए अर्थात् जिससे समता की जाए।

वाचक शब्द = समता सूचक शब्द, जैसे – सम, समान, तुलना, तरह।

साधारण धर्म = उपमेय का विशेष गुण, जिसके कारण उपमान से समता की जाए।

परिभाषा–

जहाँ उपमेय की किसी विशेष गुण के कारण उपमान से समानता की जाए, वहाँ उपमा अलंकार होता है। उपमा अलंकार के दो भेद होते हैं– पूर्णोपमा और लुप्तोपमा।

पूर्णोपमा–

जहाँ उपमा के चारों अंग (उपमेय, उपमान, वाचक शब्द और साधारण धर्म (गुण) उपस्थित हों, वहाँ पूर्णोपमा अलंकार होता है, जैसे–

बिरही इव प्रभु करत बिषादा। (3/37/2)

(भगवती सीता का हरण होने पर भगवान श्रीराम विरही मनुष्य की तरह विषाद (दुख) करते हैं।)

समन्वय – यहाँ पर 'प्रभु' उपमेय, 'बिरही' उपमान, 'इव' वाचक शब्द और 'विषादा' साधारण धर्म (गुण) है, अतः यहाँ उपमा के चारों अंग होने से पूर्णोपमा अलंकार की छटा है।

लुप्तोपमा–

जहाँ उपमा के चारों अंग न हों अर्थात् चारों अंगों में से कोई एक अंग भी लुप्त हो तो वहाँ लुप्तोपमा अलंकार होता है, जैसे–

तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी। (3/17/8)

(पंचवटी पर श्रीराम के मनमोहक रूप को देखकर काम–पीड़िता शूर्पणखा सुंदर रूप धर कर भगवान श्रीराम के पास जाकर बोली–न तो तुम्हारे समान कोई पुरुष है और न मेरे समान कोई स्त्री है।)

समन्वय– यहाँ 'तुम'–'मो' उपमेय हैं, 'पुरुष'–'नारी' उपमान हैं, 'सम'–'सम' वाचक शब्द हैं, किंतु साधारण धर्म (गुण अर्थात् सुंदर शब्द) लुप्त है, इसलिए यहाँ पर लुप्तोपमा अलंकार की छटा है।

2. उत्प्रेक्षा अलंकार

जहाँ उपमेय में उपमान की संभावना की जाये, वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। उत्प्रेक्षा अलंकार में मनु, जनु, मानो आदि वाचक शब्दों का प्रयोग होता है, जैसे–

लताभवन तें प्रगट भे तेहि अवसर दोउ भाइ।

निकसे जनु जुग बिमल बिधु जलद पटल बिलगाइ।। (1/232)

(जब लताओं की ओट में श्रीराम की छवि देखकर सीताजी प्रेममग्न थीं, तभी दोनों भाई राम–लक्ष्मण लता भवन यानी लताओं के कुंज में से प्रकट हुए। उस समय वे दोनों ऐसे लग रहे थे मानो दो निर्मल चन्द्रमा बादलों के पर्दे को हटाकर निकले हों।)

समन्वय– यहाँ राम–लक्ष्मण में चन्द्रमा की संभावना (कल्पना) की गयी है और 'जनु' वाचक शब्द का प्रयोग हुआ है, अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है।

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन रामु हृदयँ गुनि।।

मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही। मनसा बिस्व बिजय कहँ कीन्ही।। (1/230/1–2)

(जब गौरी–पूजन करने सीताजी पुष्प वाटिका में आयीं, तब उनके कंगन, करधनी और पायजेब की ध्वनि सुनकर श्रीराम अपने हृदय में विचार कर अपने अनुज लक्ष्मण से कहते हैं कि यह ध्वनि ऐसी आ रही है मानो कामदेव ने विश्व को जीतने का संकल्प कर युद्ध के नगाड़े बजाए हों।)

समन्वय – यहाँ सीताजी के कंगन, करधनी और पायल की ध्वनि में कामदेव के द्वारा युद्ध के नगाड़े बजाने की संभावना (कल्पना) की गयी है और 'मानहुँ' वाचक शब्द का प्रयोग हुआ है, अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार की छटा है।

3. रूपक अलंकार

जहाँ उपमेय में उपमान का आरोप किया जाए अर्थात् उपमेय को उपमान का रूप दे दिया जाए, वहाँ रूपक अलंकार होता है, जैसे–

श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि। (2/1)

(श्रीगुरुजी के चरण–कमलों की रज से अपने मनरूपी दर्पण को साफ करके श्रीराम के यश का वर्णन करता हूँ।)

समन्वय– इस अर्धाली में गुरुजी के चरण को कमल का रूप और अपने मन को दर्पण का रूप दिया गया है, अतः यहाँ रूपक अलंकार की छटा है।

उदित उदय गिरि मंच पर रघुबर बालपतंग।

बिकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृंग।। (1/254)

(मंच रूपी उदयाचल पर राम रूपी बालसूर्य के उदय होते ही सब संत रूपी कमल खिल उठे और नेत्र रूपी भौंरे हर्षित हो गए।)

समन्वय– यहाँ मंच को उदयाचल का, राम को बाल सूर्य का, संतों को कमलों का और नेत्रों को भौंरों का रूप दिया गया है, अतः यहाँ रूपक अलंकार की छटा है।

तेहिं अवसर सुनि सिवधनु भंगा। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा।। (1/268/2)

(राजा जनक के दरबार में श्रीराम के द्वारा शिव धनुष के तोड़े जाने पर धनुष के टूटने का भयंकर शब्द सुनकर भृगुकुल रूपी कमल के सूर्य परशुरामजी आ गए।)

समन्वय– यहाँ परशुरामजी को भृगुकुल रूपी कमल को खिलाने वाला सूर्य कहा है, अतः यहाँ रूपक अलंकार की छटा है।

4. भ्रान्तिमान अलंकार

जहाँ उपमेय में उपमान की भ्रान्ति हो अर्थात् जहाँ भ्रमवश किसी वस्तु को और वस्तु समझ लिया जाए, वहाँ भ्रान्तिमान अलंकार होता है, जैसे –

कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ।। (5/12)

(जब हनुमानजी ने अशोक वाटिका में सीताजी को विरह से बहुत व्याकुल देखा, तब उन्होंने अपने हृदय में विचार कर सीताजी के सामने अँगूठी डाल दी। सीताजी ने यह समझकर कि मानो अशोक वृक्ष ने अंगारा दे दिया, उसे उठकर प्रसन्न होकर अपने हाथ में ले लिया अर्थात् अँगूठी को भ्रम से अंगारा समझकर उठा लिया।)

समन्वय–यहाँ स्वर्ण की अँगूठी को सीताजी ने भ्रमवश अंगारा समझ लिया, अतः यहाँ भ्रान्तिमान अलंकार की छटा है।

5. संदेह अलंकार

जहाँ उपमेय में उपमान का संदेह (संशय) हो जाए, वहाँ संदेह अलंकार होता है, जैसे –

की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ। नर नारायन की तुम्ह दोऊ।। (4/1/10)

जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार।

की तुम्ह अखिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार।। (4/1)

(हनुमानजी श्रीराम से पूछते हैं–क्या आप ब्रह्मा, विष्णु, महेश–इन तीन देवताओं में से कोई हैं? क्या आप दोनों नर–नारायण हैं? क्या आप जगत के मूल कारण हैं? क्या आप सम्पूर्ण लोकों के स्वामी स्वयं भगवान हैं? क्या आपने लोगों को भवसागर से उतारने तथा पृथ्वी का भार नष्ट करने के लिए मनुष्य रूप में अवतार लिया है?)

समन्वय–यहाँ हनुमानजी को राम और लक्ष्मण को समझने में संदेह बना हुआ है, अतः यहाँ संदेह अलंकार की छटा है।

6. अतिशयोक्ति अलंकार

जहाँ किसी वस्तु का लोक–सीमा से परे बढ़ा–चढ़ाकर वर्णन किया जाए, वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है, जैसे –

अस मैं सुना श्रवन दसकंधर। पदुम अठारह जूथप बंदर।। (5/55/3)

(रावण का कुफिया दूत शुक श्रीरामजी की सेना की संख्या का अनुमान बताते हुए कहता है कि उसने ऐसा सुना है कि केवल सेनापति ही 18 पदम हैं, फिर वानर सेना की संख्या तो अपार ही होगी।)

समन्वय–यहाँ पर वानर सेना के सेनापतियों की संख्या 18 पदम बताई गई है। एक पदम में 10 हजार करोड़ होते हैं तो 18 पदम अर्थात् 180 हजार करोड़ केवल सेनापति ही थे। इस प्रकार वानर दल की संख्या को अत्यधिक बढ़ा–चढ़ाकर कहा गया है, अतः यहाँ पर अतिशयोक्ति अलंकार है।

7. प्रतीप अलंकार

जहाँ उपमेय की अपेक्षा उपमान हीन हो, वहाँ प्रतीप अलंकार होता है। यह अलंकार उपमालंकार का उलटा होता है, जैसे –

बहुरि बिचारु कीन्ह मन माहीं। सीय बदन सम हिमकर नाहीं।। (1/237/8)

(श्रीराम ने सीताजी को देखकर अपने मन में विचार किया कि चन्द्रमा सीताजी के मुख के समान सुंदर नहीं है।)

समन्वय–यहाँ उपमेय (सीताजी के मुख) से उपमान (चन्द्रमा) हीन है अर्थात् कम सुंदर है, अतः यहाँ प्रतीप अलंकार है।

8. अपन्हुति अलंकार

जहाँ उपमेय का निषेध कर असत्य उपमान का आरोप किया जाए, वहाँ अपन्हुति अलंकार होता है। 'अपन्हुति' शब्द का अर्थ है–छिपाना। इसमें उपमेय को निषेध कर छिपाया जाता है, जैसे –

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला। बंधु न होइ मोर यह काला।। (4/8/4)

(बालि से पिटकर व्याकुल हुआ सुग्रीव राम से बोला–हे ''कृपालु राम! मैंने पहले ही कहा था कि बालि मेरा भाई नहीं, काल है''।)

समन्वय–सच तो यह है कि सुग्रीव का बालि सगा भाई था, परन्तु यहाँ सुग्रीव कहता है कि बालि मेरा भाई नहीं, काल है। वास्तविक भाई को छिपाकर अवास्तविक काल माना है, अतः यहाँ अपन्हुति अलंकार की छटा है।

9. उल्लेख अलंकार

जहाँ एक वस्तु का अनेक प्रकार से वर्णन किया जाए, वहाँ उल्लेख अलंकार होता है, जैसे –

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी।।
देखहिं रूप महा रनधीरा। मनहुँ बीर रसु धरें सरीरा।।
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी। मनहुँ भयानक मूरति भारी।। (1/241/4–6)

(सीता के स्वयंवर में श्रीराम को लोगों ने अपनी भावना के अनुसार अलग–अलग रूपों में देखा। जिनकी जैसी भावना थी, उन्होंने राम को उसी रूप में देखा। वीर राजाओं ने राम को ऐसे रूप में देखा मानो वीररस ही शरीर धारण किए हो। कुटिल राजाओं ने प्रभु को भयानक रूप में देखा।)

समन्वय–यहाँ श्रीराम को कई रूपों में वर्णित किया गया है, अतः यहाँ उल्लेख अलंकार की छटा है।

10. विभावना अलंकार

'विभावना' शब्द का अर्थ है– विचित्र कल्पना, अतः जहाँ कारण और कार्य के संबंध में चमत्कार पूर्ण कल्पना की जाए, वहाँ विभावना अलंकार होता है, जैसे–

कोपेउ जबहिं बारिचरकेतू। छन महुँ मिटे सकल श्रुति सेतू।। (1/84/6)

(जिस समय मछली के चिह्न की ध्वजा वाले कामदेव ने कोप किया, उसी समय क्षणभर में ही वेदों की सारी मर्यादायें मिट गयीं।)

समन्वय–यहाँ कामदेव के क्रोध करते ही क्षणभर में वेदों की मर्यादायें मिटने की विचित्र कल्पना की गयी है, अतः यहाँ विभावना अलंकार की छटा है।

11. दृष्टांत अलंकार

जिस पद्य में पहले से एक बात का उल्लेख कर, फिर उसमें मिलती–जुलती दूसरी प्रसिद्ध बात पहली की पुष्टि में कही जाए, उसमें दृष्टांत अलंकार होता है, जैसे –

भरतहि होइ न राजमदु बिधि हरि हर पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ।। (2/231)

(जब चित्रकूट पर भरत भैया राम को मनाने आते हैं, तब लक्ष्मण यह समझकर कि भरत हमें एकाकी समझकर आक्रमण करने आया है तो क्रोध में आकर भरत से युद्ध करने को तैयार हो जाते हैं, तब रामजी लक्ष्मण को समझाते हुए कहते हैं–लक्ष्मण! भरत को राज्य का अभिमान नहीं हो सकता, चाहे उसे ब्रह्मा, विष्णु, शंकर का पद ही क्यों न मिल जाए। जिस प्रकार क्षीर सागर मट्ठा (छाछ) की बूँदों से नहीं फट सकता, उसी तरह राज्य पाकर भरत के हृदय में विकार नहीं आ सकता।)

समन्वय–यहाँ दो वाक्य हैं। पहले वाक्य में कहा गया है–ब्रह्मा, विष्णु और शिव का पद पाकर भी भरत को राजमद नहीं हो सकता। दूसरे वाक्य में इससे मिलती–जुलती यह बात कही है–क्या कभी काँजी (छाछ) की बूँदों से क्षीर समुद्र फट सकता है। दूसरे वाक्य में कही गयी बात पहले वाक्य में कही बात के उदाहरण (दृष्टांत) के रूप में कही है। दोनों का भाव एक ही है, अतः यहाँ दृष्टांत अलंकार की छटा है।

लेख के विस्तार भय से अब मैं उपसंहार की ओर बढ़ता हूँ। लेख के विस्तार भय के कारण ही अलंकारों के उदाहरण सीमित दिए हैं और कितने ही अलंकारों को छोड़ दिया है, उनका उल्लेख तक नहीं किया है। एक लघु खोज के रूप में मेरा यह प्रयास एक चींटी द्वारा समुद्र तल की खोज भर है। इस लेख के शीर्षक के अनुरूप मानस में अलंकारों की छटा की झलक दिखाने में लेखक का प्रयास कितना सार्थक रहा है। इसका आकलन तो पाठक ही कर सकते हैं। मेरे विचार से मानस पढ़ने वाला हर साहित्यिक व्यक्ति निःसंकोच निश्चित रूप से यह कह सकता है कि मानस में अलंकारों की छटा आकाश में झिलमिलाते तारों की तरह देदीप्यमान है।

श्रीरामचरितमानस में राजनीति, युद्धनीति एवं प्रबंधन कला

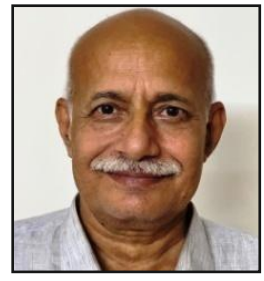

श्री सुरेश तिवारी, गाजियाबाद, फोन–9205500790

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस केवल एक धार्मिक ग्रंथ ही नहीं है, बल्कि यह राजनीति, युद्ध कला, रक्षा नीति, सामरिक विज्ञान तथा उत्कृष्ट समाजशास्त्र का एक अमूल्य खजाना है। इस महाकाव्य में भगवान राम के माध्यम से जो युद्ध तंत्र, रणनीति और सैन्य नेतृत्व के सिद्धांत प्रस्तुत किए गए हैं, वे आज भी आधुनिक सैन्य विज्ञान और रक्षा अध्ययन के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं। समाज एवं परिवार में किसके साथ कब और कैसा व्यवहार करना है, इसका इसमें विशद वर्णन है। तुलसीदासजी ने अपने इस महाकाव्य में धर्म और युद्ध का संतुलन स्थापित करते हुए यह दिखाया है कि एक सच्चा योद्धा वह है, जो धर्म की रक्षा के लिए लड़ता है। 'मानस' में वर्णित युद्ध नीति केवल शारीरिक बल पर आधारित नहीं है, बल्कि इसमें बुद्धि, कूटनीति, मनोविज्ञान और नैतिक शक्ति का समन्वय है, क्योंकि श्रीरामजी के समान नीति–प्रीति को समझने वाला दूसरा कोई नहीं है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

नीति प्रीति परमाथ स्वारथु । कोउ न राम सम जान जथारथु।। (2/254/5)

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष–इन चारों पुरुषार्थों में धर्म को सर्वोपरि माना गया है और युद्ध भी धर्म की स्थापना के लिए ही उचित है। श्रीराम–रावण युद्ध का उद्देश्य यही था। तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस में धर्मयुद्ध की अवधारणा को स्थापित किया है। यह केवल शक्ति प्रदर्शन या विजय प्राप्ति के लिए युद्ध नहीं है, बल्कि अधर्म के विनाश और धर्म की स्थापना के लिए किया गया संघर्ष है। भगवान के अवतार का एक हेतु यह भी है, यथा–

असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस राम जन्म कर हेतु।। (1/121)

श्रीराम के चरित्र में आदर्श सेनापति के गुण दिखाए गए हैं। वे अपने सैनिकों के साथ प्रियवत व्यवहार करते हैं, उनकी समस्याओं को सुनते हैं और समाधान प्रदान करते हैं। वे सभी से मिलकर सबकी कुशलता पूछकर, उनकी सराहना करके उसका साहस बढ़ाते हैं, यथा–

अस कपि एक न सेना माहीं। राम कुसल जेहि पूछी नाहीं।। (4/22/3)

तुलसीदासजी ने वानर सेना के संगठन में आधुनिक सैन्य संरचना के सिद्धांत दिखाए हैं। हर वानर योद्धा की अपनी विशेषता है और सबका अपना स्थान निर्धारित है।

श्रीराम ने अपनी सेना में विशेषज्ञता के आधार पर कार्य विभाजन किया। नल–नील में इंजीनियरिंग की कुशलता थी, हनुमान में गुप्तचर सेवा और दूतकर्म की क्षमता थी, अंगद भी दूतकर्म विशेषज्ञ थे। उनकी क्षमता के अनुसार श्रीरामजी ने उन्हें कार्य सौंपे। सर्वप्रथम कार्य अन्वेषण का होता है। सीताजी का पता लगाने हेतु श्रीरामजी ने इस कार्य में दक्ष श्रीहनुमानजी को भेजा। उनकी कार्यकुशलता इस प्रकार रही। छद्म वेश धारण करके शत्रु क्षेत्र में प्रवेश किया, जानकारी एकत्रित की और फिर सुरक्षित वापसी। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी।। (5/4/1)

इतने छोटे रूप में भी लंकिनी ने पकड़ लिया, तब उसे अपना बल दिखाया और उसका संहार करके आगे बढ़े। पूरी रात लंका–भ्रमण करते रहे, पर सीताजी का पता नहीं चला। प्रातःकाल रामभक्त विभीषणजी से मिलन होता है और उन्हीं की युक्ति से सीताजी तक पहुँचे। उन्हें संदेश देकर रावण की सैन्य शक्ति की समीक्षा करने हेतु फल खाने के बहाने से रावण की अशोक वाटिका को उजाड़ देते हैं। रावण–पुत्र मेघनाद उन्हें बंदी बनाकर ले जाता है और रावण दंड स्वरूप उनकी पूँछ में आग लगवाता है, पर वे तो नहीं जलते, लंका जलाकर सुरक्षित समाचार लेकर श्रीरामजी की सेवा में आ जाते हैं। उनकी प्रशंसा करते ही रीछपति श्रीजाम्ववान् श्रीरामजी से कहते हैं–

नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी। सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी।।
पवनतनय के चरित सुहाए। जामवंत रघुपतिहि सुनाए।। (5/30/5–6)

श्रीहनुमानजी ने लंका जाकर एक और बड़ा काम किया। सीताजी का पता लगाने के साथ–साथ उन्होंने विभीषणजी को श्रीराम की शरणागतवत्सलता बताई और कहा कि रामभक्त होकर तुम अनीति का साथ क्यों दे रहे हो। उनकी प्रेरणा से विभीषण अपने भाई रावण को हर प्रकार से समझाते हैं, पर वह समझना तो दूर, लात मारकर विभीषण को भगा देता है। तिरस्कृत विभीषण श्रीरामजी की शरण में आते हैं। श्रीरामजी उन्हें शरण में लेने से पूर्व **राजनीति** के अनुसार वानरराज सुग्रीव की सलाह लेते हैं, वे कहते हैं–

भेद हमार लेन सठ आवा। राखिअ बाँधि मोहि अस भावा।। (5/43/7)

श्रीरामजी कहते हैं कि हे सखा! तुमने अच्छी नीति/राजनीति बताई है, किंतु मेरा प्रण है शरणागत की रक्षा करना, अतः उसे आने दीजिए। यहाँ विचारणीय है कि श्रीरामजी ने सुग्रीव की सराहना भी कर दी और अपने प्रण के अनुसार शरणागत की रक्षा भी कर दी। वे जानते थे कि विभीषण रावण के सब भेद बताएगा जो रणभूमि में काम आएँगे। अब नीति प्रतिपालक श्रीरामजी सुग्रीव और विभीषण दोनों से पूछते हैं–

सुनु कपीस लंकापति बीरा। केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा।। (5/50/5)

अब सुग्रीव चुप रहते हैं, क्योंकि पिछली वार उनकी सलाह नहीं मानी गई थी। विभीषणजी समुद्र से मार्ग माँगने के लिए विनय करने का परामर्श देते हैं। इसका लक्ष्मणजी विरोध करते हैं। श्रीराम राजनीति के पक्ष से, सोचते हैं कि विभीषण की यह सलाह न मानी तो वे भी आगे से सुग्रीव की तरह चुप रहेंगे, कोई परामर्श नहीं देंगे, अतः उन्होंने भाई लक्ष्मण को एकांत में समझाकर कहा–

सुनत बिहसि बोले रघुबीरा। ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा।। (5/51/5)

तीन दिनों तक प्रार्थना करने पर भी जब समुद्र की ओर से कोई प्रतिक्रिया न हुई, तब श्रीरामजी ने यह कहा–

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।। (5/57)

श्रीरामजी का संदेश स्पष्ट है कि तीन बार के समझाने/विनय करने पर भी कोई न माने तो फिर दंड देना ही चाहिए। श्रीरामजी के बाण चढ़ाने पर समुद्र ब्राह्मण वेश में आकर श्रीरामजी से क्षमा प्रार्थना करके समुद्र पार करने की युक्ति बताता है, तदनुसार नल–नील की इंजीनियरी कुशलता और प्रभु प्रताप से समुद्र पर पुल निर्माण करके, समुद्रपार कर श्रीरामजी लंका में डेरा डाल देते हैं और युद्ध पूर्व अपनी सेना (वानर–भालू) को विश्राम कर फल–भक्षण का आदेश देते हैं, यथा–

सिंधु पार प्रभु डेरा कीन्हा। सकल कपिन्ह कहुँ आयसु दीन्हा।।
खाहु जाइ फल मूल सुहाए। सुनत भालु कपि जहँ तहँ धाए।। (6/5/3–4)

श्रीरामजी अपनी सेना के साथ विनोद करते हुए सबसे पूछते हैं कि चन्द्रमा में कालिमा किस कारण से है। सभी अपनी–अपनी भावना के अनुसार वर्णन करते हैं। अंत में श्रीहनुमानजी कहते हैं कि प्रभु! आपकी मूर्ति चंद्रमा में बस गई है, क्योंकि वह आपका दास है, इसीलिए उसमें स्यामता का आभास है। यह सुनकर श्रीरामजी मुसकुराते हैं–

कह हनुमंत सुनहु प्रभु ससि तुम्हार प्रिय दास।
तव मूरति बिधु उर बसति सोइ स्यामता अभास।। (6/12क)

श्रीरामजी सभी सचिवों को बुलाकर आगे की रणनीति पर विचार करते हैं। जाम्बवान् की सलाह पर रावण को अंतिम चेतावनी देने के उद्देश्य से अंगद को शांतिदूत के रूप में भेजा जाता है। रावण के दरबार में अंगद का पैर जमाना और चुनौती देना साइकोलॉजीकल वारफेयर का उत्तम तरीका है। सभी शांति प्रयास विफल हो जाने पर युद्ध प्रारंभ होता है। श्रीरामजी ने सभी सचिवों से विचार–विमर्श करके सेना को चार टुकड़ों में विभाजित करके लंका के चारों द्वारों पर तैनात कर दिया–

लंका बाँके चार दुआरा। केहि बिधि लागिअ करहु बिचारा।।
करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा। चारि अनी कपि कटकु बनावा।। (6/39/2 तथा 4)

युद्ध में निशाचरों ने छल किया, किंतु रामजी की सेना तथा स्वयं श्रीरामजी ने धर्म का आश्रय लिया। श्रीरामजी ने अपनी सेना का मनोबल बढ़ाने हेतु रावण तथा अन्य राक्षसों द्वारा की गई 'माया' (छल–कपट) को काटकर स्वयं आगे आकर युद्ध किया–

बहुरि राम सब तन चितइ बोले बचन गँभीर।
द्वंदजुद्ध देखहु सकल श्रमित भए अति बीर।। (6/89)

श्रीरामजी ने विभिन्न दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया। उनके द्वारा छोड़ा गया बाण लक्ष्य भेदकर पुनः उनके तरकस में प्रवेश कर जाता था। आधुनिक रक्षा प्रणाली में गाइडिड मिसाइल की प्रणाली इसी आधार पर विकसित की है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

छन महुँ प्रभु के सायकन्हि काटे बिकट पिसाच।
पुनि रघुबीर निषंग महुँ प्रबिसे सब नाराच।। (6/68)

रावण द्वारा तिरस्कृत विभीषण को श्रीरामजी ने शरण प्रदान की। अब उनकी शरणागतवत्सलता का दर्शन कीजिए। युद्ध में विभीषण पर रावण ने क्रुद्ध होकर एक भीषण शक्ति का प्रहार किया, पर श्रीरामजी ने विभीषण को तुरंत अपने पीछे कर लिया और उस शक्ति का प्रहार स्वयं झेला–

तुरत बिभीषन पाछें मेला। सन्मुख राम सहेउ सोइ सेला।। (6/94/2)

श्रीरामजी की प्रबंधकला में मेडीकल सपोर्ट और इमरजैंसी रेस्पॉन्स का उत्तम उदाहरण, लक्ष्मणजी को लगी शक्ति के समय दृष्टिगोचर होता है। श्रीहनुमानजी तुरंत लंका से सुषेण वैद्य को लाते हैं और रातोंरात हिमालय पर्वत से संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मणजी के प्राणों की रक्षा करते हैं–

तुरत बैद तब कीन्हि उपाई। उठि बैठे लछिमन हरषाई।। (6/62/2)

युद्धकाल में गुप्तचर विभाग का अति महत्वपूर्ण स्थान होता है। किसी एक सूचना के आधार पर उलट–फेर हो सकता है। रावण का गुप्तचर विभाग तो सजग था ही, पर विभीषण के गुप्तचर भी दिन–रात एक करके सूचनाएँ देते रहते थे। इस संदर्भ में निम्नांकित कुछ उदाहरण उल्लेखनीय हैं।

मेघनाद द्वारा लक्ष्मणजी को शक्ति लगने के पश्चात् हनुमानजी द्वारा संजीवनी बूटी लेने जाने की सूचना रावण को तुरंत मिल गई और वह कालनेमि राक्षस के घर स्वयं गया तथा उससे कहा कि अपनी माया से किसी तरह हनुमान को उलझाओ ताकि सुबह हो जाए, क्योंकि बूटी का प्रयोग सूर्योदय के पहले किया जाना था। कालनेमि ने रावण को समझाया कि जिसने आपके सामने ही आपकी लंका जला दी और आप कुछ नहीं कर सके, उसका मार्ग कौन रोक सकता है। जब रावण क्रोधित होकर उसे मारने के लिए उद्यत हो गया, तब उसने वह कार्य स्वीकार किया। कालनेमि ने विचार किया–

सुनि दसकंठ रिसान अति तेहिं मन कीन्ह बिचार।
राम दूत कर मरौं बरु यह खल रत मल भार।। (6/56)

कालनेमि की माया श्रीहनुमानजी को नहीं रोक सकी और वे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ गए तथा समय पर संजीवनी बूटी लाने में सफल हुए।

अब विभीषण के गुप्तचरों की सूचनाओं पर विचार करते हैं। मेघनाद पुनः युद्ध क्षेत्र में आता है और श्रीराम–लक्ष्मण को 'नागपाश' में बाँध देता है। श्रीहनुमानजी तुरंत नारदजी के पास जाकर उनसे प्रेरणा प्रदान कराके गरुड़जी को भेजते हैं, जो श्रीराम–लक्ष्मण को नागपाश से मुक्त कर देते हैं। इसी दिन के युद्ध में श्रीजाम्बवान् ने उसे मूर्छित करके इतने वेग से फेंका कि वह रावण की गोद में जा गिरा। मूर्छा विगत मेघनाद को लज्जा आई और फिर उसने 'अजय मख' करने का निश्चय करके एक कंदिरा में स्थित अपनी कुलदेवी के मंदिर में चला गया। तब विभीषणजी के गुप्तचरों ने तुरंत यह सूचना दी, जिसे प्राप्त कर विभीषण श्रीरामजी से कहते हैं–

मेघनाद मख करइ अपावन। खल मायावी देव सतावन।।
जौं प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि। नाथ बेगि पुनि जीति न जाइहि।। (6/75/4–5)

यह सुनकर श्रीरामजी वानर दल एवं विभीषण के साथ लक्ष्मणजी को भेजते हैं, जो मेघनाद का यज्ञ–विध्वंस कर देते हैं और अंततः लक्ष्मणजी उसका संहार करते हैं।

एक दिन के युद्ध में रावण को लक्ष्मणजी ने मूर्छित कर दिया, तब उसका सारथी उसे वापिस लंका ले गया। मूर्छा दूर होने पर रावण ने विजय हेतु मेघनाद की तरह 'अपावन यज्ञ' करने का निश्चय किया। विभीषणजी के गुप्तचरों ने तुरंत यह सूचना पहुँचाई, तब वे श्रीरामजी से कहते हैं–

नाथ करइ रावन एक जागा। सिद्ध भएँ नहिं मरिहि अभागा।।
पठवहु नाथ बेगि भट बंदर। करहिं बिधंस आव दसकंधर।। (6/85/2–3)

श्रीरामजी ने अंगद–हनुमानादि वीरों को भेजकर रावण का यज्ञ–विध्वंस करा दिया।

श्रीरामजी ने अनेक बार रावण के बाहु सिर काटे, पर काटते ही पुनः नए बाहु–सिर उग आते। जब अधिक श्रम हो गया और रावण नहीं मरा, तब रहस्य जानने के लिए श्रीरामजी ने विभीषण की ओर देखा–

मरइ न रिपु श्रम भयउ बिसेषा। राम बिभीषन तन तब देखा।। (6/102/2)

यहाँ यह विचारणीय है कि श्रीरामजी ने विभीषण की ओर देखा अर्थात् रावण के वध का रहस्य जानना चाहा, क्योंकि वे नरलीला कर रहे हैं और दूसरी बात यह है कि वे विभीषण की परीक्षा ले रहे थे–

उमा काल मर जाकीं ईछा। सो प्रभु जन कर प्रीति परीछा।। (6/102/3)

विभीषण ने बताया कि रावण की नाभि में अमृतकुण्ड है, जब तक वह नहीं सूखेगा, तब तक रावण नहीं मर सकता है। यह सुनकर श्रीरामजी ने एक बाण से उसके नाभिकुण्ड के अमृत को सुखा दिया और 30 बाणों से सिर–बाहु का छेदन करके, अंततः उसका वध

कर देते हैं। मरते समय रावण ने 'राम' कहा, इससे पूर्व उसने कभी राम नहीं कहा, श्रीरामजी को तपस्वी कहा करता था–

गर्जेउ मरत घोर रव भारी। कहाँ राम रन हतौं पचारी।। (6/103/4)

सारांश स्वरूप श्रीरामचरितमानस से सीखे जाने वाले मुख्य रक्षा सिद्धांत तथा प्रबन्धन कला के सूत्र इस प्रकार से हैं–

01. धर्मयुद्ध की अवधारणा – न्यायोचित कारण के लिए युद्ध
02. नेतृत्व का महत्त्व – प्रेरणादायक और न्यायप्रिय नेतृत्व
03. रणनीतिक योजना – व्यापक और गहन तैयारी
04. टीम वर्क – सामूहिक प्रयास का महत्त्व
05. इंटेलिजेंस – सूचना एकत्रण की अनिवार्यता
06. कूटनीति – युद्ध से पहले शांति प्रयास
07. मनोवैज्ञानिक युद्ध – मानसिक दबाव का प्रयोग
08. लॉजिस्टिक्स – संसाधन प्रबंधन
09. नैतिकता – युद्ध में भी धर्म का पालन
10. विजय के बाद उदारता – शत्रु के प्रति सम्मान।

रावण–वध के पश्चात् श्रीरामजी विभीषण को समझाते हुए कहते हैं कि अब इनका अंतिम संस्कार कीजिए, यह है श्रीरामजी की शत्रु के प्रति सम्मान भावना–

कीन्हि क्रिया प्रभु आयसु मानी। बिधिवत देस काल जियँ जानी।। (6/105/8)

हे राधे!

एक दिन रूक्मिणी ने भोजन के बाद श्रीकृष्ण को दूध पीने को दिया। दूध ज्यादा गरम होने के कारण श्रीकृष्ण के हृदय में लगा और उनके श्रीमुख से निकला–हे राधे! सुनते ही रूक्मिणी बोली–प्रभु! ऐसा क्या है राधाजी में, जो आपकी हर साँस पर उनका ही नाम होता है? मैं भी तो आपसे अपार प्रेम करती हूँ, फिर भी आप हमें नहीं पुकारते। श्रीकृष्ण ने कहा–देवी! आप कभी राधा से मिली हो। ऐसा कहकर मंद–मंद मुस्कराने लगे। अगले दिन रूक्मिणी राधाजी से मिलने उनके महल में पहुँची।

कक्ष में राधाजी को देखा–अत्यन्त रूपवान, तेजस्वि जिसका मुख सूर्य से भी तेज चमक रहा था। रूक्मिणी सहसा ही उनके चरणों में गिर पड़ी, पर, ये क्या राधाजी के पूरे शरीर पर तो छाले पड़े हुए हैं। रूक्मिणी ने पूछा–देवी आपके शरीर पर ये छाले कैसे? तब राधाजी ने कहा – देवी! कल आपने कृष्णजी को जो दूध दिया, वह ज्यादा गर्म था। इस कारण उनके हृदय पर छाले पड़ गए, क्योंकि उनके हृदय में तो सदैव मेरा ही वास है।

बैर न बिग्रह आस न त्रासा

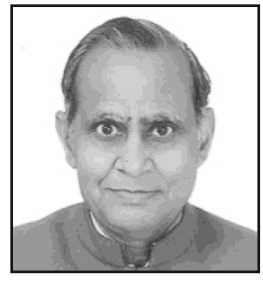

डॉ. भगवान दास पटैरया, नोएडा, फोनः 9899004263

एक कहावत है, **'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत'** अर्थात् मन की ही प्रधानता है। मन ही बन्ध–मोक्ष, स्वर्ग–नरक का कारण है, अतः मन, जो इंद्रियों को वश में रख सकता है, उसको वश में करना परम आवश्यक है। श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने मन को समझाते हुए इसे सठ मना कहा है, यथा–

सुख भवन संसय समन दमन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।। (5/60/छंद)

मन की स्थिति समझने के लिए हमें अपने शरीर का आध्यात्मिक विश्लेषण करके समझना होगा। हमारा शरीर पंच तत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु) से निर्मित है और ये सभी जड़ तत्व हैं। पन्द्रह और जड़ तत्व हैं–पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (नाक, कान, नेत्र, जीभ एवं त्वचा), पाँच कर्मेन्द्रियाँ (हाथ, पैर, मुख, एवं दो गुप्तांग) तथा पंच रस (सूँघना, सुनना, देखना, स्वाद लेना एवं स्पर्श), जिनका रसास्वादन इंद्रियाँ करती हैं। इस प्रकार इस बीस जड़ तत्वों के पिण्ड में समाहित हैं चार और जड़ तत्व–मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार। इस प्रकार ये सभी 24 जड़ तत्व हैं और इनको प्रकाशित कर रहा है ईश्वर का चेतन तत्व। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।। (1/117/5–6)

अर्थात् विषय, इन्द्रियाँ, इन्द्रियों के देवता और जीवात्मा–ये सब एक की सहायता से एक चेतन होते हैं। इन सबका जो परम प्रकाशक है (जिससे ये सभी प्रकाशित हैं), वही अनादि ब्रह्म अयोध्या नरेश श्रीरामचन्द्रजी हैं।

श्रीमद्भगवतगीता में भी जड़ प्रकृति एवं जीवरूपा चेतन प्रकृति का वर्णन इस प्रकार से किया गया है–

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृति विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।। (गीता 7/4–5)

अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार भी–इस प्रकार आठ प्रकार से विभाजित मेरी प्रकृति है। यह आठ प्रकार के भेदों वाली तो अपरा अर्थात् (मेरी) जड़ प्रकृति है और हे महाबाहो! इससे दूसरी को, जिससे यह संपूर्ण जगत धारण किया जाता है, मेरी जीवरूपा परा अर्थात् चेतन प्रकृति जान।

इस प्रकार मन की स्थिति समझकर हमें उस पर नियंत्रण रखना होगा। यह अत्यंत कठिन कार्य है। जब भगवान श्रीकृष्ण ने गीता के माध्यम से अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा कि मन पर नियंत्रण रखो, तब अर्जुन ने कहा–

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलदृढ़म्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।।
असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।। (गीता 6/34–35)

अर्थात् अर्जुन ने कहा–हे श्रीकृष्ण! यह मन बड़ा चंचल, प्रमथन स्वभाव वाला, बड़ा दृढ़ और बलवान है। इसलिए उसको वश में करना मैं वायु को रोकने की भाँति अत्यंत दुष्कर मानता हूँ। इस पर श्रीभगवान बोले–हे महाबाहो! निःसंदेह मन चंचल और कठिनता से वश में होने वाला है, परन्तु हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! यह अभ्यास और वैराग्य से वश में होता है।

इस प्रकार हमें अभ्यास और वैराग्य द्वारा मन पर नियंत्रण रखने का अभ्यास करना होगा। हम सभी कलियुग के प्राणी हैं और कलियुग में सर्वत्र मल–विक्षेप फैला हुआ है, फिर इस मन को कैसे वश में रखें। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कलि केवल मल मूल मलीना। पाप पयोनिधि जन मन मीना।। (1/27/4)

इस पाप पयोनिधि में जब हमारा मन मछली की तरह रह रहा है, तब हम पापों से कैसे बच सकते हैं। इसी प्रश्न के उत्तर में कलियुग में यह छूट है कि यदि हमारा मन कभी–कभार विषयों में चला भी जाए तो भी मानसिक पाप नहीं लगता, यथा–

कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहिं पापा।। (7/103/8)

भगवन्नाम मनन–चिंतन, जप–कीर्तन ही एक मात्र कलियुग में मन पर काबू करके प्रभु प्राप्ति का सुगम साधन है, यथा–

नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू।। (1/27/7)

इस प्रकार से यह स्पष्ट सिद्ध है कि हम भगवन्नाम का ही सदैव चिंतन करें तो हम मन पर नियंत्रण कर सकेंगे। अनंत ब्रह्माण्डनायक परब्रह्म परमात्मा के सगुण रूप श्रीरामजी का अयोध्यावासियों ने साक्षात् दर्शन किया, उनका सान्निध्य पाया, परंतु उन्हें भी श्रीरामजी द्वारा समझाया कि इस दुर्लभ मानव शरीर को प्राप्त कर यदि अपना आत्मोद्धार न कर सके तो फिर पछताने के अलावा कुछ नहीं रहेगा। दूसरी ओर अधम निशाचर जो

लंका के युद्ध में मारे गए थे, उन्हें परमगति प्राप्त हुई, क्योंकि श्रीरामजी कहते हैं, **बयरु भाव सुमिरत मोहि निसिचर' (6/45/4)।** मन जिसमें लग जाता है, जीव को उसी की प्राप्ति होती है। इस तथ्य को मानस में कई प्रसंगों में दुहराया गया है। एक उदाहरण लंकाकाण्ड का विशेष रूप से उल्लेखनीय है। श्रीरामजी के कहने पर इन्द्र ने रणांगण में सुधा वृष्टि की। यद्यपि सुधा वृष्टि दोनों दलों के मृतकों पर हुई, पर केवल वानर–भालू ही जीवित हुए। सभी राक्षस, जिनका मन श्रीरामजी में रम गया था, नहीं जिए, क्योंकि उन्हें परमधाम प्राप्त हो गया था, यथा–

सुधाबृष्टि भै दुहु दल ऊपर। जिए भालु कपि नहिं रजनीचर।।
रामाकार भए तिन्ह के मन। मुक्त भए छूटे भव बंधन।। (6/114/6–7)

यदि हमारा मन भगवान के नाम–रूप–लीला–धाम किसी एक में भी लग जाता है, तब हमें शरीर के सुख–दुख का भान नहीं होता है। जब राजा जनक श्रीसीताराम के दर्शनार्थ चित्रकूट की यात्रा करते हैं, उस समय उन्होंने तथा उनके साथ सभी लोगों ने मार्ग के श्रम का अनुभव ही नहीं किया, क्योंकि उनका मन तो वहाँ था, जहाँ रघुवर–वैदेही थीं, यथा–

गिरिबरु दीख जनकपति जबहीं। करि प्रनामु रथ त्यागेउ तबहीं।।
राम दरस लालसा उछाहू। पथ श्रम लेसु कलेसु न काहू।।
मन तहँ जहँ रघुबर बैदेही। बिनु मन तन दुख सुख सुधि केही।।
आवत जनकु चले एहि भाँती। सहित समाज प्रेम मति माती।। (2/275/2–5)

इस प्रकार से हमें भगवन्नाम का मनन–चिंतन करके ही मन को वश में रखकर अपने आत्म कल्याण के मार्ग पर अग्रसर होना चाहिए। श्रीरामचरितमानस भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार है और यह 'रामनाम' से ओत–प्रोत है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।। (1/10/1)

इस प्रकार से श्रीरामचरितमानस का पाठ तथा इसके प्रसंगों का मनन–चिंतन करना श्रीराम–नाम जप–चिंतन की तरह ही है।

मन की इस भूमिका के साथ श्रीरामजी द्वारा अयोध्यावासियों को उनके आत्मोद्धार हेतु जो उपदेश दिया गया, जिसे विद्वान 'श्रीरामगीता' के नाम से परिभाषित करते हैं, उस पर चर्चा करते हैं।

इस नश्वर शरीर की क्षणभंगुरता की ओर सचेत करते हुए श्रीराम ने अयोध्यावासियों को, जिनमें स्वयं उनके गुरु वसिष्ठजी, अन्य पूजनीय संत एवं जन सामान्य थे, कहा कि मानव शरीर प्राप्त करने का लक्ष्य भोग–विलास नहीं है, स्वर्ग के सुख भी अल्प समय के होते हैं और पतन होकर धराधाम पर किसी न किसी योनि में आना पड़ता है। इस प्रकार यह जीव चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता रहता है। ईश्वर परम कृपा करके

कभी–कभार इसे मानव शरीर देता है, अतः इस दुर्लभ मानव तन को पाकर परलोक सँवारना चाहिए। श्रीभगवत्गीता में भी यही उपदेश निहित है, यथा–

उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।। (गीता 6/5)

अर्थात् अपने आप ही अपना संसार–समुद्र से उद्धार करे और अपने को अधोगति में न डाले, क्योंकि यह मनुष्य आप ही तो अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।

ज्ञान एवं भक्ति दो साधन हैं आत्मकल्याण हेतु, पर अधिक कठिन होने के कारण ज्ञान उतना साध्य नहीं है, जितनी भक्ति–साधना। भक्ति पथ पर कोई विशेष प्रयास जैसे– योग–जप–तप–यज्ञ–उपवास कुछ भी नहीं करना होता है। भक्ति का एक सरल सूत्र है–मन की कुटिलता रहित सरल स्वभाव एवं प्रारब्धवश जो प्राप्त हो उसमें संतोष रखना। श्रीरामजी कहते हैं कि बहुत विस्तार से क्या कहूँ, मैं (भगवान) इस आचरण के वश में रहता हूँ–

बैर न बिग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा।।
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी।।
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृन सम बिषय स्वर्ग अपबर्गा।।
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई। दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई।।
मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ता कर सुख सोइ जानइ परानंद संदोह।। (7/46)

इस लेख में उपर्युक्त प्रथम चौपाई की अर्धाली **'बैर न विग्रह आस न त्रासा'** पर विचार प्रस्तुत हैं। इस अर्धाली में चार बिंदु अनुपालनार्थ कहे गए हैं–(1) किसी भी प्राणी मात्र से वैर न रखना (2) किसी से लड़ाई–झगड़ा न करना (3) किसी से कोई आस न रखना (ईश्वर के अतिरिक्त) और (4) किसी से भी भयभीत न होना। अब इन बिंदुओं पर विचार करते हैं।

काकभुशुंडिजी को समझाते हुए श्रीरामजी कहते हैं कि सभी मेरे द्वारा ही उत्पन्न किए गए हैं, अतः मुझे सभी प्यारे हैं।

सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।। (7/86/4)

गीता में भगवान श्रीकृष्णजी भी यही कहते हैं कि सभी जीवों को बीज प्रदान करने वाला पिता मैं ही हूँ, यथा–

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता।। (गीता 14/4)

अर्थात् हे अर्जुन! नाना प्रकार की सब योनियों में जितनी मूर्तियाँ हैं अर्थात् शरीरधारी प्राणी उत्पन्न होते हैं, प्रकृति तो उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है और मैं बीज को स्थापन करने वाला पिता हूँ।

इस प्रकार सभी प्राणी हमारे भाई–बहिन की तरह हैं, फिर हम उनसे वैर कैसे कर सकते हैं। इस भावना से व्यवहार करने पर किसी से भी वैर नहीं रहेगा और यदि किसी से वैर नहीं है तो फिर लड़ाई–झगड़े का प्रश्न ही नहीं उठता है। वास्तव में वैर–विग्रह हमारे अपने दोष के कारण होता है। अहंकारवश हम अपने को सदा निर्दोष मानते हुए केवल दूसरों पर ही दोषारोपण करते रहते हैं, यही वैर–विग्रह के मूल में है। इस पर संत कबीर कहते हैं–

बुरा जो देखन मैं चला बुरा न मिलिया कोय।
जो दिल खोजो आपना मुझसे बुरा न कोय।।

यदि हम विचार करके ऐसा व्यवहार करें कि यदि मेरे साथ कोई ऐसा व्यवहार करे तो मुझे कैसा लगेगा, तब भी वैर–विग्रह टल जाएगा। इस संदर्भ में 'कल्याण पत्रिका' के आदि सम्पादक नित्यलीलालीन श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार के विचार इस प्रकार से हैं–

समझो तुम जिन जिन बातों को अपने मन हित के प्रतिकूल।
उन्हें न बरतो कभी किसी से समझो यही धर्म का मूल।।

जहाँ तक किसी प्राणी–पदार्थ परिस्थिति से किसी प्रकार की आशा रखने की बात है, इस विषय में भी नित्यलीलालीन श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार का उपदेश है–

प्राणि पदार्थ परिस्थिति से तुम रखो कभी न कुछ भी आस।
आशा करो आत्मसुख की जो हर हालत में रहता पास।।

अब **'न त्रासा'** पर विचार करते हैं। त्रास अर्थात् भय। यह दो प्रकार से होता है एक तो यह कि हम भयभीत रहते हैं कि वर्तमान सुखमय स्थिति दुख में न बदल जाए और दूसरे हमें भय रहता है कि कहीं हमारे ऊपर महान विपत्ति न आ जाए। यदि हम ईश्वर के शरणागत हो जाते हैं तो फिर सदैव निर्भय रह सकते हैं। जिस प्रकार एक अबोध बालक अपनी माता के भरोसे और एक समर्थ स्वामी का सेवक अपने स्वामी के भरोसे सदा निर्भय–निश्चिंत रहता है, इसी प्रकार हम भी इस स्थिति को प्राप्त कर लें तो निर्भय हो जाएँगे। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें।। (4/3/4)

सीताहरण के पश्चात् विरह–लीला करते देखकर नारदजी को दुख हुआ कि मेरे शाप को अंगीकार करके प्रभु विरह–दुख भोग रहे हैं और सुअवसर पाकर वे पंपापुर सरोवर तट पर प्रसन्न मुद्रा में आसीन श्रीरामजी के पास जाते हैं–

बैठे परम प्रसन्न कृपाला। कहत अनुज सन कथा रसाला।। (3/41/4)

श्रीरामजी को परम प्रसन्न जानकर नारदजी प्रश्न करते हैं कि प्रभु जब आपकी माया ने ग्रसित किया था, तब मैं विवाह करना चाहता था, पर किस कारण से आपने नहीं करने दिया। उत्तरस्वरूप श्रीरामजी कहते हैं कि जिस प्रकार एक माँ अपने अबोध शिशु की रक्षा में तत्पर रहती है, उसी प्रकार मैं अपने भक्तों के कल्याण–साधन में रत रहता हूँ।

तुम जैसे त्यागी, वैरागी, भक्त साधक जो संसार की मोह–माया से दूर हो गए हैं, उनको पुनः माया में कैसे फँसाता। मेरा वचन है–

सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तज सकल भरोसा।। (3/43/4)
करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी।। (3/43/5)
मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी।। (3/43/ 8)

साधक के मन में यह प्रश्न उठ सकता है कि मैं पापी हूँ, मेरे पापों को देखकर भगवान मुझे शरण क्यों देंगे। इस पर श्रीरामजी की घोषणा है कि सच्चे मन से (छलछिद्ररहित) मेरी शरण में यदि कोई आता है तो चाहे उसे करोड़ों ब्राह्मण वध का पाप लगा हो, उसे भी शरण में ले लेता हूँ, यथा–

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहि ताहू।।
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।(5/44/1 तथा 5)

भगवान श्रीकृष्ण भी इसी प्रकार का आश्वासन देते हैं शरणागत के लिए, यथा–

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। (गीता 18/66)

अर्थात् सम्पूर्ण धर्मों अर्थात् सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मों को मुझमें समर्पण कर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान सर्वाधार परमेश्वर की शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर। गोस्वामी तुलसीदासजी हनुमान चालीसा में भी इसी प्रकार का उल्लेख करते हैं –

सब सुख लहै तुम्हारी सरना। तुम रक्षक काहू को डरना।।

भगवान के सभी सगुण स्वरूप (पूर्ण अवतार या अंश अवतार), उसी एक अनंत ब्रह्माण्डनायक परब्रह्म के हैं, पर अपनी रुचि के अनुसार किसी एक रूप को मन में बसाकर उसे अपना इष्टदेव बना लेना चाहिए और अन्य स्वरूपों में अपने इष्टदेव की ही झलक देखने का अनुभव करना चाहिए। एक इष्ट, एक मंत्र और एक ग्रंथ के सिद्धांत के अनुसार जिनके श्रीरामजी इष्टदेव हैं, उन्हें 'श्रीराम जय राम जय जय राम' इष्ट मंत्र अपनाना चाहिए और इष्ट ग्रंथ रामायण अर्थात् श्रीरामचरितमानस हो। जब गोस्वामी तुलसीदासजी भगवान श्रीकृष्ण के दर्शनार्थ मथुरा–बृंदावन गए, तब उन्होंने यह प्रार्थना की–

भली बनी छबि आपकी भले बने हो नाथ।
तुलसी मस्तक नमत है धनुष बान लो हाथ।।

लोगों का कहना है कि **"अपने भक्त के कारणे कृष्ण बने रघुनाथ।"**

इस प्रकार हमें सभी में अपने इष्टदेव के दर्शन करने का अभ्यास करना चाहिए और सदैव इस भाव में रहना चाहिए कि हम भगवत्शरण में हैं। श्रीरामजी के विजय मंत्र **'श्रीराम जय राम जय जय राम'** में भगवत्शरण होने का भाव इस प्रकार से है – 'श्रीराम अर्थात् हे राम!, जय राम अर्थात् आपकी जय हो और जय जय राम अर्थात् कि मैं आपकी

शरण में हूँ। शरण में होने के भाव के साथ–साथ यह विचार करें कि प्रभु श्रीराम सामने खड़े हैं और मैं लंका से अपने भाई से तिरस्कृत होकर आए विभीषण की तरह यह प्रार्थना करते हुए शरणागत हूँ–

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर।। (5/45)

शरणागति के संदर्भ में एक अनन्य शिवभक्त का कथन है कि जब मानव संसार के सभी सहारों से निराश हो जाता है, तब वह भगवान के शरणागत होकर आर्तस्वर से प्रार्थना करता है और तब अवश्य ही उसका संकट दूर हो जाता है। द्रौपदी के चीरहरण प्रसंग में यही हुआ। वह अपनी लज्जा बचाने हेतु भीष्म, द्रोणाचार्य, महाराज धृतराष्ट्र आदि से हाथ जोड़कर–गिड़गिड़ाकर विनती करती रही, पर जब उसकी प्रार्थना किसी ने नहीं सुनी, तब हारकर उसने भगवान कृष्ण को पुकारा और तत्क्षण प्रभु ने साड़ी इतनी बढ़ा दी कि एक कहावत बन गई, **'नारी बीच साड़ी है या साड़ी बीच नारी'।** इसे भक्तजनों ने भगवान के वस्त्रावतार से सम्बोधित किया है। स्वयं श्रीरामजी का कथन है कि मेरा दास कहलाकर जो किसी अन्य प्राणी से आशा रखता है, तो फिर मुझमें उसका विश्वास कहाँ रहा, यथा–

मोर दास कहाइ नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा।। (7/46/3)

इस संदर्भ में उन्हीं अनन्य शिवभक्त की प्रेरणा से रचित यह कीर्तन उल्लेखनीय है–

टूटे सभी सहारे आया शरण तेरी। बैल वाले गौरी प्यारे करो न देरी।। (भक्तिपु043)

श्रीहनुमानजी लंका में सीता माताजी के दर्शनोपरान्त जब रावण की सभा में जाते हैं, तो उसे भी भगवत्शरण में जाने का परामर्श देते हैं, यथा–

प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि।। (5/22)

इस संदर्भ में श्री देवेन्द्र शर्मा का लेख **'गएँ सरन प्रभु राखिहैं'** लेख उल्लेखनीय है। लेख कुछ विस्तार से है, अतः इसका कुछ भाग समिति की स्मारिका के वार्षिक अंक 32 में पृष्ठ 42 से 51 तक प्रकाशित किया गया है और शेष भाग इस अंक में है। यदि किसी के पास अंक 32 न हो तो समिति की Website: www.shriramcharit.com पर इसे पढ़ सकते हैं तथा डाउनलोड करके प्रिंट ले सकते हैं।

भगवत्शरण आ जाने के पश्चात् जीव उसी प्रकार सुखी रहता है जिस प्रकार अगाध जल में मछली, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकउ बाधा।। (4/17/1)

सारांश स्वरूप यह विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि भगवत्शरण हो जाने पर इहलोक और परलोक दोनों सुधर जाएँगे, अतः **हमें भगवान के इस कथन, 'वैर न बिग्रह आस न त्रासा' को अपने आचरण में उतारना चाहिए, इसी में हमारा कल्याण निहित है।**

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी

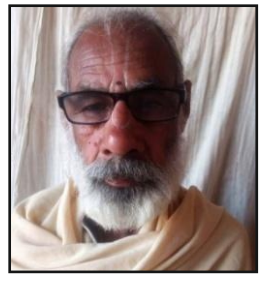

राधा माधव शरण–निम्बार्क वैष्णव, औरैया (उ0प्र0), फोनः 7078392376

पार्वतीजी को सती रूप में संदेह हो गया था कि निर्गुण निराकार ब्रह्म सगुण कैसे हो सकता है। उनका संदेह था–

ब्रह्म जो ब्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत बेद।। (1/50)

अब पार्वतीजी के रूप में उन्हें श्रीराम कथा पर श्रद्धा–विश्वास है, अतः वे शिवजी से प्रश्न करती हैं कि रामावतार का कारण क्या है? शिवजी कहते हैं कि रामावतार के कई कारण हैं और केवल यही एक कारण है यह नहीं कहा जा सकता। वे समझाते हैं कि श्रीरामजी मन–बुद्धि–वाणी से परे हैं, उन्हें हम तर्क के द्वारा नहीं समझ सकते हैं, यथा–

हरि अवतार हेतु जेहि होई। इदमित्थं कहि जाइ न सोई।।
राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। मत हमार अस सुनहि सयानी।। (1/121/2–3)

व्यावहारिक रूप में शिवजी के इस कथन का प्रमाण लंकाकाण्ड में मिलता है जब भगवान श्रीरामजी युद्ध में मेघनाद द्वारा नागपाश में स्वेच्छा से उसके अस्त्र का सम्मान करने के लिए बँध जाते हैं और गरुड़जी आकर उस नागपाश को काट देते हैं। उनके मन में भगवान की लीला न समझ पाने के कारण भगवान की भगवत्ता पर संदेह हो जाता है। गरुड़ यद्यपि भगवान के नित्य वाहन हैं जो वेद की ऋचाओं को धारण करते हैं, लेकिन भगवान की माया को समझ नहीं पाए, उनको ये नहीं मालूम था कि भगवान की एक व्यावहारिकी और एक वास्तवी लीला होती है। व्यावहारिकी लीला में वास्तवी लीला का प्रवेश नहीं होता, लेकिन बिना वास्तवी लीला के व्यावहारिकी लीला सम्पन्न नहीं हो सकती है। उन गरुड़जी को ये पता नहीं था कि बन्धन अध्यस्त में होता है, अधिष्ठान में नहीं। नाम रूप आकार में बन्धन होता है, निराकार अधिष्ठान में स्वयं प्रकाश में बन्धन नहीं होता, सो भगवान अपनी लीला से बँधे दिखाई पड़ते हैं, पर वास्तव में उनमें बन्धन नहीं है। इस प्रकार श्रीरामजी की वास्तवी लीला को न समझने के कारण जब गरुड़जी को मोह हो गया, तब आज के मनुष्यों को संदेह हो जाए तो कोई बड़ी बात नहीं है। उसका कारण मुख्य रूप से भौतिक सुख को परम पुरुषार्थ मान लेना है। दूसरे आज के रामायण के वक्ताओं ने भगवान श्रीरामजी की व्यावहारिकी लीला का ही गुणगान करके उनकी भगवत्ता

को गौड़ कर दिया है, जिसके कारण भगवान का वास्तविक स्वरूप लोगों के समझ में नहीं आता। इसी कारण अज्ञानी लोग भगवान के चरित्र पर अनेक प्रकार के तर्क–कुतर्क करने लगे हैं, अतः मैं उन श्रीराम कथा कहने वालों से प्रार्थना करता हूँ कि भगवान की वास्तवी लीला को उनके वास्तविक स्वरूप को समझकर भगवान की लीला–कथा कहें। भगवान श्रीशिवजी ने भगवान के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करते हुए माता पार्वतीजी से कहा है।

चरित राम के सगुन भवानी। तर्कि न जाहिं बुद्धि बल बानी।।
अस बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहि भजहिं तर्क सब त्यागी।। (6/74/1–2)

श्री शंकरजी कहते हैं कि हे भवानी! सगुण राम के जो चरित्र हैं वे बल बुद्धि और वाणी से तर्के नहीं जा सकते, वे तर्क के विषय नहीं होते, क्योंकि जो निर्गुण ब्रह्म है, वह तर्क का विषय होता है। जो कुछ अपने सिवाय उसके सिवाय मालूम पड़े उसका निषेध कर दो। निर्गुण ब्रह्म में तो बहुत हद तक तर्क की गति है। वाणी **तत्त्वमस्यादि महावाक्य** से वर्णन करते हैं। बल से समाधि करते हैं और बुद्धि से पदार्थ का शोधन करते हैं–विचार करते हैं। वहाँ तक तो तर्क की गति है, लेकिन ये जो सगुण साकार भगवान श्रीरामजी हैं ये तर्क के विषय नहीं हैं, ये श्रद्धा और प्रेम के विषय हैं। यदि कोई इन पर तर्क रहित श्रद्धा और विश्वास करे तो उसका कल्याण हो जाता है।

अस बिचारि ते तग्य बिरागी–इसी से जो तत्त्वज्ञ परमात्मा के तत्त्व जानने वाले अर्थात तत् पदार्थ को जानने वाले जो वैराग्यवान पुरुष हैं, वे ऐसा विचार करके सब तर्क छोड़ देते हैं और भगवान श्रीरामचन्द्रजी का भजन करते हैं। इस संदर्भ में सतीजी का प्रसंग पुनः दोहराना उचित होगा। शिवजी के साथ सतीजी कथा श्रवण हेतु कुंभज ऋषि के आश्रम में जाती हैं, पर कथा में मन नहीं लगा। रामकथा केवल शिवजी ने सुनी। गोस्वामीजी लिखते हैं–

रामकथा मुनिबर्ज बखानी। सुनी महेस परम सुखु मानी।। (1/48/3)

कुंभज ऋषि से विदा लेकर शिवजी सतीजी के साथ कैलाश पर्वत की ओर जाते हैं। उनके मन में इच्छा थी कि कथा तो सुन ली अब रामजी का साक्षात् दर्शन हो जाता तो परमानंद प्राप्त होता। यह विचार आते ही देखा कि सीताहरण के पश्चात् श्रीरामजी विरह–लीला कर रहे हैं। सीताहरण के पूर्व ही श्रीरामजी ने सीताजी से कहा था कि जब तक मैं नर–लीला करूँगा तुम तब तक अग्निदेव के पास रहो, यथा–

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करबि ललित नरलीला।।
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा।। (3/24/1–2)

यह रहस्य शिवजी को पता था, इसीलिए उन्हें विरह–लीला देखते हुए अत्यंत हर्ष हुआ और 'सच्चिदानंद' कहकर प्रणाम करके चल दिए, यथा–

संभु समय तेहि रामहि देखा। उपजा हियँ अति हरषु बिसेषा।।
भरि लोचन छबिसिंधु निहारी। कुसमय जानि न कीन्हि चिन्हारी।।
जय सच्चिदानंद जग पावन। अस कहि चलेउ मनोज नसावन।। (1/50/1–3)

रामजी को विरह–लीला करते हुए देखकर शिवजी ने तो 'सच्चिदानंद' कहकर प्रणाम किया, पर सतीजी को संदेह हो गया। इसका कारण यह था कि उन्होंने श्रीराम कथा मन से–ध्यान से नहीं सुनी, यदि सुनी होती तो वे समझ जातीं कि अब रामजी नर लीला कर रहे हैं। एक और महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि श्रीसीतारामजी एक ही हैं, वे देखने में दो, पर एक हैं, ठीक इसी प्रकार से जैसे वाणी और उसका अर्थ एवं जल और जल की लहर। वंदना प्रकरण में गोस्वामीजी ने लिखा है–

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न।। (1/18)

यदि सतीजी ने उपरि लिखित सिद्धांत सुना होता तो भी उनको संदेह न होता। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि श्रीरामचरितमानस की रचना करके शिवजी ने इसे अपने मन में ही रखा। सतीजी की श्रद्धा रामकथा पर संभवतः नहीं होगी, अतः उन्हें नहीं सुनाया। शिवजी ने सोचा होगा कि कुंभज ऋषि से कथा सुनने चलें, शायद वहाँ सती की श्रद्धा जाग्रत हो जाए, पर ऐसा नहीं हुआ। श्रीराम कथा मन से न सुनने से उन्हें सती शरीर त्यागना पड़ा और जब पार्वती के रूप में उनकी श्रद्धा जाग्रत हुई, तभी शिवजी ने उन्हें रामचरितमानस सुनाया, यथा–

रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।। (1/35/11)

अच्छी से अच्छी बात भी यदि सुसमय देखकर न कही जाए, तो उसका प्रभाव नहीं होता, अतः शिवजी ने 'सुसमय' देखकर अर्थात् पार्वतीजी की श्रद्धा एवं श्रीरामजी पर विश्वास देखकर कथा सुनाई। यदि सतीजी ने कुंभज ऋषि के आश्रम में कथा ध्यान से सुनी होती, तो यह भी सुना होता–**राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी'** और फिर संदेह नहीं होता और यदि संदेह न हुआ होता तो सती को शरीर त्यागना न पड़ता। इस प्रकार इस प्रसंग से यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि श्रीरामकथा (श्रीरामचरितमानस) ध्यान से मन लगाकर '**श्रवण–गायन–पठन–चिंतन'** करना चाहिए। गोस्वामी तुलसीदासजी भी अपने मन को समझाते हुए लिखते हैं–

तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना। (5/60/छंद)

बालमीकि आश्रम प्रभु आए

श्री प्रमोद कुमार शर्मा, गुरुग्राम, फोन–9910058938

वनवास काल में श्रीसीतारामजी, लक्ष्मणजी एवं गुह निषादराज के साथ सर्वप्रथम मुनि भरद्वाज के आश्रम में जाते हैं और उनसे विदा लेते समय पूछते हैं कि हम किस मार्ग से जाएँ। महर्षि भरद्वाज कहते हैं कि आप जिस मार्ग से जाएँ, वही आपके लिए सुगम हो जाएगा। मुनि श्रेष्ठ त्रिकालदर्शी हैं और वे जानते हैं कि श्रीरामजी वाल्मीकिजी से मिलेंगे और उनसे पूछेंगे कि वे कहाँ रहें। इसीलिए उन्होंने वाल्मीकिजी के आश्रम की ओर जाने का मार्ग बताने हेतु चार शिष्य भेज दिए। श्रीरामजी वन के बीहड़ मार्ग में चलते हैं। वनवासीजन उनकी सुंदरता देखकर इतने मोहित हो जाते हैं कि जो लोग दर्शन नहीं कर सके, विशेषकर नारियाँ, बालक एवं वृद्ध वे पछताते रह जाते हैं। कुछ लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार दौड़कर उनका दर्शन कर लेते हैं। इस प्रकार मार्ग के ग्रामवासी श्रीरामजानकी, लक्ष्मणजी के दर्शन पाकर आनंदित होते हैं, यथा–

गाँव गाँव अस होइ अनंदू। देखि भानुकुल कैरव चंदू।। (2/122/1)

इस प्रकार मगवासियों को आनंद प्रदान करते हुए आनंदसागर श्रीरामजी वाल्मीकि के आश्रम पहुँचते हैं–

देखत बन सर सैल सुहाए। बाल्मीकि आश्रम प्रभु आए।। (2/124/5)

श्रीरामजी ने महर्षि वाल्मीकि को दण्डवत् प्रणाम किया और उन्होंने हर्षित होकर आशीर्वाद दिया तथा ससम्मान आश्रम में लेकर आए। कंद मूल फल ग्रहण करके श्रीरामजी हाथ जोड़कर उनसे कहते हैं कि हे मुनिराज! कोई ऐसा स्थान बताइए कि जहाँ किसी मुनि–तापस को कष्ट न हो, ताकि मैं सीताजी और लक्ष्मण के साथ वहाँ पर्णकुटी बनाकर निवास कर सकूँ।

अब जहँ राउर आयसु होई। मुनि उदबेगु न पावै कोई।।
अस जियँ जानि कहिअ सोइ ठाऊँ। सिय सौमित्र सहित जहँ जाऊँ।। (2/126/2-5)

यह सुनकर त्रिकालदर्शी महर्षि वाल्मीकि उनके ब्रह्मत्व का बखान करते हुए कहते हैं कि आप पूछ रहे हैं कि कहाँ रहूँ, मैं पूँछता हूँ कि कोई एक ऐसा स्थान बता दीजिए कि जहाँ आप नहीं हैं, क्योंकि आप तो घट–घटवासी परब्रह्म हैं–

पूँछेहु मोहि कि रहौं कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ।। (2/127)

यह सुनकर श्रीरामजी को संकोच हुआ और मन ही मन मुसकुराएँ। तत्पश्चात् महर्षि वाल्मीकि ने प्रभु श्रीराम को चौदह स्थान बताए, जहाँ वे निवास करें। वे स्थान भक्तों के हृदय/मन हैं। विस्तारभय से केवल प्रथम एवं चौदहवें स्थान का वर्णन इस आलेख में प्रस्तुत है। प्रथम स्थान इस प्रकार से बताया है–

जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे।। (2/128/4–5)

अर्थात् जिन्ह के कान समुद्र की तरह हैं कि जिनमें आपकी कथा रूपी नदियाँ निरंतर समाती रहती हैं, पर वह कभी भरता नहीं है, उनके हृदय आपके लिए उचित निवास है। उत्तरकाण्ड में गोस्वामी तुलसीदासजी, इसी संदर्भ में लिखते हैं कि जो श्रीरामचरित सुनकर तृप्त हो गया, तो मानो उसने इसका विशेषरस पान ही नहीं किया है–

राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं।। (7/53/1)

भक्तिमती शबरी को नवधा भक्ति श्रवण कराते हुए श्रीरामजी कहते हैं कि इनमें से जिनमें एक भी भक्ति है, वे मुझे अतिशय प्रिय हैं। इस नवधा भक्ति में श्रीरामकथा श्रवण अर्थात् कथा में रति होना दूसरी भक्ति है, यथा–

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।। (3/35/8)

श्रीमद्भागवत में जो नवधा भक्ति वर्णित है, उसमें कथा श्रवण को प्रथम भक्ति के रूप में निरूपित किया है, यथा–

श्रवणं कीर्तनं विष्णोर्स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।।

श्रीरामचरितमानस में भी इसका सांकेतिक वर्णन उस समय किया गया है, जब श्रीरामजी पंचवटी प्रवास के समय लक्ष्मणजी को ज्ञान–भक्ति–वैराग्य आदि का उपदेश देते हैं, यथा–

श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं।। (3/16/8)

भगवत्कथा श्रवण करने का फल यह है कि मन से मोह एवं भ्रम दूर हो जाता है और यह दोष दूर होने पर ही भगवत्प्रेम की उत्पत्ति होती है अर्थात् भगवान के चरणों में अनुराग पैदा हो जाता है। राम–रावण युद्ध में मेघनाद द्वारा श्रीरामजी को नागपाश में बाँध दिया गया था, जिसे गरुड़जी ने ही काटा था। यह दृश्य देखकर उनके मन में मोह–संदेह–भ्रम पैदा हो गया था, तब शिवजी ने उन्हें इस प्रकार से समझाया था–

बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग।। (7/61)
मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किएँ जोग तप ग्यान बिरागा।। (7/62/1)

शिवजी ने उन्हें काकभुशुंडिजी के पास भेजा, जहाँ उन्हें निरंतर सत्संग मिला और उसमें श्रीरामकथा श्रवण की। सम्पूर्ण रामकथा श्रवण करने के पश्चात् गरुड़जी कहते हैं–

गयउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघुपति चरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक।। (7/68क)
मोहि भयउ अति मोह प्रभु बंधन रन महुँ निरखि।
चिदानंद संदोह राम बिकल कारन कवन।। (7/68ख)

वनवास काल में जब श्रीरामजी शृंगवेरपुर में निषादराज का आतिथ्य ग्रहण करते हैं, तब निषादराज उन्हें भूमिशयन करते देखकर अत्यंत दुखित हुए। उस समय लक्ष्मणजी ने उन्हें उपदेश दिया, जिसे लक्ष्मण–गीता के नाम से भक्तजन समझते हैं। निषादराज को समझाते हुए लक्ष्मणजी कहते हैं कि विवेक जाग्रत होने पर मोह और भ्रम दूर हो जाता है और तभी श्रीरघुनाथजी के चरणों में अनुराग उत्पन्न होता है।

होइ बिबेकु मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा।। (2/93/5)

यह मोह–भ्रम कथा श्रवण से दूर होता है जैसा कि गरुड़जी के साथ हुआ। श्रीरघुनाथजी के चरणकमलों में अनुराग उत्पन्न हो, इसके लिए श्रीरामकथा कथन–श्रवण–मनन ही साधन है। यह गोस्वामी तुलसीदासजी ने कथा प्रारंभ करने से पूर्व ही इस प्रकार से लिखा है–

जे एहि कथहि सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता।।
होइहहिं राम चरन अनुरागी। कलि मल रहित सुमंगल भागी।। (1/15/10–11)

श्रीरामकथा श्रवण करने से सुख की प्राप्ति और विश्राम (परमशान्ति) मिलता है, यथा–

रामचरितमानस एहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा।। (1/35/7)

भक्तिमती शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश देकर श्रीरामजी पंपापुर सरोवर के किनारे एक सुंदर तरुवर की छाया में प्रसन्नमुद्रा में आसीन थे, तभी देवर्षि नारद आकर उनसे कुछ प्रश्न पूछते हैं और तत्पश्चात् भक्तों के लक्षण बताने का निवेदन करते हैं। श्रीरामजी अन्य लक्षणों के साथ–साथ कथा गायन–श्रवण का विशेष रूप से उल्लेख करते हैं, यथा–

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला।। (3/46/7)

पंचवटी प्रवास के समय लक्ष्मणजी को भक्ति का उपदेश देते श्रीरामजी कहते हैं–

मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।।
काम आदि मद दंभ न जाकें। तात निरंतर बस मैं ताकें।। (3/16/11–12)

मानव का परम लक्ष्य भगवत्प्राप्ति ही है और वह बड़ी सहजता से बिना किसी जप–तप के केवल भगवत्कथा श्रवणमात्र से संभव है। जब सीतान्वेषण हेतु समुद्र पार लंका को जाने का किसी का साहस नहीं हो रहा था, तब श्रीजाम्बवान्जी ने श्रीहनुमानजी को उनकी शक्ति का स्मरण कराते हुए कहा–

राम काज लगि तव अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्वताकारा।। (4/30/6)

सिंहनाद करि बारहिं बारा। लीलहिं नाघउँ जलनिधि खारा।।
सहित सहाय रावनहि मारी। आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी।।
जामवंत मैं पूँछउँ तोही। उचित सिखावनु दीजहु मोही।। (4/30/8–10)

तब जाम्बवान्‌जी कहते हैं कि हे तात! तुम केवल सीताजी की सुधि लेकर आ जाओ। इसके पश्चात् श्रीरामजी हमारे साथ चलकर वंशसहित रावण का संहार करके सीताजी को ले आएँगे और यह कथा नारदादि मुनि गायन करेंगे जिसे सुनकर, गाकर, कहकर और समझकर (चिन्तन करके) मनुष्य भवसागर से पार हो जाएँगे।

कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहैं।
त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं।।
जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पावई।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई।। (4/30/छंद)

इस प्रकार से श्रद्धा–प्रेम सहित निरंतर श्रीरामकथा श्रवणमात्र से ही मानव बड़ी सहजता से भवसागर पार हो सकता है अर्थात् जन्म–मरण के चक्र से छूटकर परमानंद प्राप्त कर सकता है।

पार्वतीजी को सम्पूर्ण मानस श्रवण कराने के पश्चात् शिवजी कहते हैं कि जो कामना रखकर भी इस कथा को श्रवण–गान करेंगे, वे नाना प्रकार की सुख–सम्पत्ति प्राप्त करेंगे तथा अन्तकाल में रघुनाथजी के धाम को जाएँगे–

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख संपति नाना बिधि पावहिं।।
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं। अंतकाल रघुपति पुर जाहीं।। (7/15/3–4)

पार्वती के सभी प्रश्नों के उत्तर स्वरूप सम्पूर्ण रामकथा श्रवण कराने के पश्चात् कथा–श्रवण का महत्व बताते हुए शिवजी कहते हैं कि श्रीरामकथा विमल भक्ति प्रदान करने वाली है और भवसागर पार जाने हेतु सुदृढ़ नाव के समान है–

बिमल कथा हरि पद दायनी। भगति होइ सुनि अनपायनी।। (7/52/5)
भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ता कहँ दृढ़ नावा।। (7/53/3)

काकभुशुंडि–गरुड़ संवाद के वर्णन के पश्चात् श्रीरामकथा श्रवण का महत्व बताते हुए पुनः शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती! चाहे श्रीराम चरण में रति (अगाध प्रेम) की चाह हो या मोक्ष पद की इच्छा हो, श्रीराम कथा–श्रवण से वह कामना अवश्य पूर्ण होती है–

राम चरन रति जो चह अथवा पद निर्बान।
भाव सहित सो यह कथा करउ श्रवन पुट पान।। (7/128)

महर्षि वाल्मीकि ने चौदहवाँ स्थान बताते हुए श्रीरामजी से कहा कि आप उनके मन में निरंतर वास करें, जिन्हें आपसे कभी कुछ न चाहिए और आपसे उनका सहज स्नेह हो–

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु।। (2/131)

यहाँ दो शब्द विशेष रूप से विचारणीय हैं – **'चाहिअ'** तथा **सहज सनेहु**। हम सामान्यतया या तो सांसारिक सुख भोग चाहते हैं या फिर भगवान को। यदि सांसारिक भोग, केवल भगवान से पूर्ण श्रद्धा–विश्वास के साथ चाहें तो यह भी भक्त की श्रेणी में हैं। मानस तथा गीता दोनों में भक्त चार प्रकार के वर्णित हैं–आर्ती (दुख में स्मरण करने वाले), अर्थार्थी (धन–सम्पत्ति चाहने वाले), जिज्ञासु (भगवत्तत्व को जानने की चाह रखने वाले) एवं ज्ञानी। भगवान कहते हैं कि मेरा दास कहलाकर भी यदि किसी अन्य से आशा रखता है, तो कहो विश्वास कहाँ रहा–

मेर दास कहाइ नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा।। (7/46/3)

अब विचार करते हैं कि मानस में किस–किस ने भगवान श्रीराम से कुछ नहीं चाहा और फिर उनके कुछ न चाहते हुए भी भगवान ने उन्हें क्या दिया।

(1) सर्वप्रथम केवट जिसने श्रीसीताराम, लक्ष्मण एवं निषादराज को गंगा पार कराया, उस प्रसंग पर विचार करते हैं। गंगा पार कराने के पश्चात् श्रीरामजी केवट को उतराई के रूप में मणिजणित अँगूठी दे रहे थे, पर उसने कहा–

नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोष दुख दारिद दावा।।
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/5 तथा 7)

श्रीसीतारामजी एवं लक्ष्मणजी ने बहुत प्रयास किया कि केवट उतराई ग्रहण कर ले, किंतु जब उसने कुछ नहीं लिया, तब भगवान ने उसे **'विमल भक्ति'** का वरदान देकर विदा किया–

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ।। (2/102)

(2) मुनि सुतीक्ष्ण से भगवान ने वर माँगने को कहा, तब उन्होंने कहा कि प्रभु मुझे पता ही नहीं कि क्या सच्चा है और क्या झूठ है, अतः जो उचित समझें मुझे दे दीजिए। यह सुनकर श्रीरामजी ने यह वरदान दिया–

अबिरल भगति बिरति बिग्याना। होहु सकल गुन ग्यान निधाना।। (3/11/26)

अर्थात् मुनि द्वारा कुछ न माँगने पर भगवान ने उन्हें 'अविरल भक्ति' प्रदान की।

(3) काकभुशुंडिजी से जब प्रसन्न होकर भगवान ने कहा कि तुम मुझसे ज्ञान–विवेक, मुनि दुर्लभ गुण तथा मोक्ष, जो चाहिए सो माँग लो, तब वे विचार करते हैं–

प्रभु कह देन सकल सुख सही। भगति आपनी देन न कही।।
भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे।। (7/84/4–5)

तब सोच–विचारकर काकभुशुंडिजी ने कहा–

अबिरल भगति बिसुद्ध तव श्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि प्रभु प्रसाद कोउ पाव।। (7/84क)
भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।

सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम।। (7/84ख)

भक्ति का वरदान माँगने पर श्रीरामजी बहुत प्रसन्न हुए। 'एवमस्तु' कहकर भगवान ने काकभुशुंडिजी की प्रशंसा करते हुए कहा कि तुमने सब सुख खानि भक्ति माँगी है, तो अब मेरे प्रसाद से सभी सद्गुण तुम्हारे में निवास करेंगे और बिना किसी प्रयास के तुम ज्ञान–विज्ञान –वैराग्य आदि का रहस्य जान लोगे।

(4) रावण द्वारा तिरस्कृत विभीषण श्रीरामजी की शरण में आते हैं। प्रभु उनकी कुशल–क्षेम पूछते हैं। विभीषण कहते हैं प्रभु! पहले मेरे मन में कुछ वासना जाग्रत हुई थी, किंतु आपके चरणों में प्रीति हो जाने से वह दूर हो गई है। अब मुझे जो शिवजी के मन को भाने वाली भक्ति है, वह प्रदान कीजिए। यह सुनकर श्रीरामजी 'एवमस्तु' कहकर पुनः कहते हैं–

जदपि सखा तव इच्छा नाहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं।। (5/49/9)

ऐसा कहकर श्रीरामजी ने विभीषण का राजतिलक करके उन्हें लंकापति बना दिया।

इस प्रकार उपर्युक्त प्रसंगों से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी तरह हम भगवान से जुड़ जाएँ। श्रद्धा–विश्वासपूर्वक उनकी शरण में आ जाएँ तो सांसारिक सुखभोग की कामना भी पूर्ण हो जाती है और अंततः मुनि दुर्लभ भक्ति भी प्राप्त हो जाती है।

मानस के किष्किंधाकाण्ड में वर्णन आया है कि सभी स्वार्थवश प्रीति करते हैं, यथा–

सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।। (4/12/2)

हमारा स्वार्थ किसमें है, यह विचारणीय है। काकभुशुंडिजी रामकथा श्रवण कराते हुए गरुड़जी से कहते हैं कि जीव का सच्चा स्वार्थ मन–वचन–कर्म से श्रीरामजी के चरणों में स्नेह हो जाना है–

स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन क्रम बचन राम पद नेहा।। (7/96/1)

मानव का परम कर्तव्य है कि जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर ले और वह लक्ष्य केवल और केवल प्रभु चरणों में प्रीति उत्पन्न हो जाना है। यह प्रभु कृपा के बिना संभव नहीं है और प्रभु कृपा करते हैं मन–वचन–कर्म से, छल–कपट छोड़कर उनका भजन करने से–

मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।। (1/200/6)

कुछ लोग कहा करते हैं कि हम बहुत भजन करते हैं, पर भगवान की कृपा नहीं होती। इसमें दो बातें हैं–एक तो यह कि क्या हम छल–कपट छोड़कर भजन करते हैं और दूसरी यह कि क्या भगवत्कृपा को समझ पाते हैं। यदि हम कष्ट में हैं तो यह भी भगवत्कृपा समझना चाहिए, क्योंकि जिस प्रकार आग में तपाने से सोना चमकता है, उसी तरह भगवान हमें तपा रहे हैं, ऐसा विचार करके कृपा का अनुभव करना चाहिए।

वाल्मीकि द्वारा श्रीरामजी को बताए गए चौदहवें स्थान का सारांश यह है कि यदि हम भगवान से कुछ न मांगें और उन्हीं के ऊपर छोड़ दें कि आप जो उचित समझें दीजिए, **तब प्रभु अपनी भक्ति अवश्य प्रदान कर देंगे।**

भक्तों के हृदय/मन के चौदह स्थानों का वर्णन करने के पश्चात् महर्षि वाल्मीकि कहते हैं–

कह मुनि सुनहु भानुकुलनायक। आश्रम कहउँ समय सुखदायक।।
चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू।। (2/132/3–4)

यह सुनकर महर्षि से विदा लेकर श्रीसीतारामजी ने लक्ष्मण सहित चित्रकूट की ओर प्रस्थान किया।

चिंता नहीं, चिंतन कीजिए

हमारा मन बड़ा चंचल है। यह दिन–रात कुछ न कुछ चिंता या चिंतन करता ही रहता है। स्वप्न में यही कार्यरत होता है। अब विचार करें कि मन कुछ न कुछ तो सोचेगा ही, ऐसी स्थिति में हम क्या करें। गृहस्थाश्रम में तो चहुँ ओर कुछ न कुछ ऐसा घटित होता ही रहता है कि चिंता स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हो जाती है। अधिकतर संत–महात्मा भी इससे अछूते नहीं हैं, केवल वही इससे बचे हैं जिन्हें अनन्य भगवत्प्रेम है।

चिंता करने से तो कुछ होता नहीं है, पर फिर भी हम वही करते हैं। ईश्वर की प्रचण्ड माया का वर्णन करते हुए काकभुशुंडिजी कहते हैं–

चिंता साँपिनि को नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया।। (7/71/4)

इस चिंता से छुटकारा पाने के लिए केवल एक उपाय है–सदा भगवचिंतन। हम अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए, अपनी रुचि के अनुरूप, भगवान के किसी भी नाम–रूप का चिंतन करके चिंता से छुटकारा पाने के साथ–साथ जीवन का परम लक्ष्य भगवत्प्राप्ति भी कर सकते हैं, क्योंकि कलियुग में भगवन्नाम के अलावा परलोक सुधार का और कोई साधन है ही नहीं, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

नहिं कलि करम न धरम बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू।। (1/27/7)

बोलना एक कला है, परन्तु धैर्यपूर्वक सुनना उससे भी बड़ी कला है, क्योंकि जिस प्रकार सही अवसर पर खड़े होकर बोलना एक 'साहस' है, उसी प्रकार 'शान्त मन' से बैठकर सुनना भी एक 'दुर्लभ साहस' है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

बेद पुरान बशिष्ट बखानहिं। सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं।। (7/26/2)

बंदउँ नाम राम रघुबर को

पं0 रामनरेश तिवारी 'पिण्डीवासा', भरद्वाजपुरम, प्रयागराज–211006 फोनः 09415443173

राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं **'राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है'** अर्थात् भगवान राम का चरित इतना सर्वोपरि और महान है कि उसका यथा–विधि सम्यक् रूप से गुणगान करके कोई साधारण कवि भी महाकवि बन जाता है। उसे अपने चरित–नायक को महान बनाने के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता। ऐसे ही यशस्वी नायक के उदात्त और महान जीवन गाथा का गान श्रीरामचरितमानस में किया गया है। श्रीरामचरितमानस में तुलसी के राम–राघव हैं, राघवेन्द्र हैं, रघुवर हैं, रघुपति हैं, रघुनाथ हैं, अवधेश और कौशलेश हैं, कौसल्या नन्दन तथा सीतापति हैं। सुग्रीव सखा और रावणारि हैं, मर्यादापुरुषोत्तम, शरणागत रक्षक, करुणानिधान तथा भक्त–वत्सल हैं। वे दशरथ तनय और रघुकुलमणि होने के साथ ही भगवान शिव के शब्दों में 'पुरुष–प्रसिद्ध', 'प्रकाश निधि' प्रकट परावरनाथ हैं। सर्वव्यापक, सच्चिदानन्द ब्रह्म और शिव के स्वामी हैं–

राम सच्चिदानंद दिनेसा। नहिं तहँ मोह निसा लवलेसा।।
सहज प्रकासरूप भगवाना। नहिं तहँ पुनि बिग्यान बिहाना।। (1/116/5–6)
राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना।। (1/116/8)
पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि प्रगट परावर नाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ कहि सिवँ नायउ माथ।। (1/116)
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू।।
जासु सत्यता तें जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया।। (1/117/7–8)

जिसे तीनों लोकों में दशरथ तनय कहा जाता है, वे 'राम' समस्त प्राणियों के आधार हैं और योगियों के हृदय में रमण करते हैं–**रामनाम** के रूप में। कामना–शून्य योगियों के हृदय में तो केवल एक ही तत्व रमण करता है, वह तत्व है 'परब्रह्म'–वह ब्रह्म जो **'एकोऽहं बहुस्यामि'** की इच्छा करके अपनी क्रीड़ा के निमित्त ब्रह्माण्ड की सृष्टि करता है तथा ब्रह्माण्ड के कण–कण में व्याप्त है। उसी परब्रह्म का वाचक होने के करण दो अक्षरों का शब्द 'राम' तारक मंत्र है। प्रसिद्धि है कि भगवान श्रीविश्वनाथ काशी में मृत्यु पाने वाले प्राणियों को उनकी मुक्ति के लिए 'राम' नामरूपी तारक मंत्र का उपदेश देते हैं। उसी

रामनाम रूपी तारक मंत्र के स्मरण और ध्यान में ही समस्त जीवन व्यतीत कर देने वाले अनेक मुनियों के मुख से भी अन्तकाल में 'राम' नाम का उच्चारण नहीं हो पाता है।

जन्म–जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं।। (4/10/3)

अनेक जन्मों की तपस्या के पुण्य स्वरूप यह तारक मंत्र (राम नाम) अंतकाल में कुछ ही योगियों के मुख से उच्चारित हो पाता है और तब उनकी आत्मा पंच भौतिक शरीर का त्याग कर सदा–सर्वदा के लिए उस परम ज्योति में विलीन हो जाती है, जिस परम ज्योति का वे **रामनाम** के रूप में अनेक जन्मों से अहर्निश ध्यान करते रहे हैं। यह जग प्रकाश्य है और ब्रह्मरूप **राम** इसके प्रकाशक हैं। पंचभूत निर्मित यह ब्रह्माण्ड जड़ होने के कारण स्वयं प्रकाशित नहीं हो सकता। महाप्रलय की गहन तमिस्रा में विलोनीभूत ब्रह्माण्ड को यथापूर्व रूपाकार देखकर ब्रह्म रूप राम ने इसे प्रकाशित किया। अप्रकाश्य वस्तु को वही प्रकाशित कर सकता है जो स्वयं प्रकाश पुंज हो। ब्रह्म की इस प्रकाशवत्ता को रेखांकित करते हुए गोस्वामीजी ने उसे दिनेश, सहज प्रकाश और प्रकाश निधिकता कहा है। प्रकाश के तीन आधार या तीन रूप होते हैं, जिनके माध्यम से वह स्वयं को अभिव्यक्त करता है। प्रकाश के ये तीन आधार हैं– अग्नि, सूर्य और चन्द्र। ये तीनों प्रकाश के आधार **'राम' नाम** में समाहित हैं। दूसरे शब्दों में 'राम' नाम इन तीनों पुंजों का वाचक और अभिव्यंजक है। इसीलिए गोस्वामीजी ने 'राम' नाम की वंदना करते हुए लिखा है–

बंदउँ नाम राम रघुबर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को।। (1/19/1)

अर्थात् मैं रघुवर के उस रामनाम की वंदना करता हूँ, जो कृशानु (अग्नि), भानु (सूर्य) तथा हिमकर (चन्द्रमा) का हेतु है। इसीलिए दो अक्षर वाले इस राम नाम–मंत्र का महत्व बताते हुए महारामायण में कहा गया है–

जपतः सर्ववेदांश्च सर्व मंत्राश्च पार्वति। तस्यात्कोटि गुण पुण्यं रामनामेवलभ्येत।।

अर्थात् सभी वेदों का पाठ करने तथा सभी मंत्रों का जप करने से जो फल होता है, उससे करोड़ों गुना अधिक पुण्य की प्राप्ति **'राम' नाम** का जप करने से होती है। इसीलिए इस कलिकाल में, जब कि साधना के लिए ना तो अनुकूल वातावरण है और ना ही मनुष्यों में पहले के समान साधना शक्ति है, रामनाम को भवसागर से उतारने का एक मात्र आधार बताया गया है–

नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू।। (1/27/7)

समस्त मंत्रशास्त्रों में दो अक्षरों वाला यह तारक मंत्र (राम) ही एकमात्र ऐसा मंत्र है कि इसके घटक वर्णों को उलटा करके अर्थात् 'राम' को 'मरा' करके जपने से भी फलदायी होता है। इस उलटे नाम के जप की महिमा का निरूपण करते हुए गोस्वामीजी ने कहा है–

जान आदिकबि नाम प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू।। (1/19/5)

महर्षि वाल्मीकि की कथा सर्वविदित है। यथार्थ यह है कि सप्तर्षियों ने उन रत्नाकर डाकू को जानबूझकर रामनाम के घटक वर्णों को उलटा करके मरा–मरा जपने का उपदेश दिया था, जैसा कि अध्यात्म रामायण (अयोध्याकाण्ड सर्ग 6) में स्वयं महर्षि वाल्मीकि ने भगवान राम से कहा है कि हे राम! उन महर्षियों ने आपके नाम के अक्षरों को उलटा करके मुझसे कहा कि इसी स्थान पर रहकर एकाग्रचित से मरा–मरा का जप करो। आपके उसी राम नाम के प्रताप से, जो निरंतर जपने से मरा–मरा से स्वतः राम–राम हो गया, आज मैं इस अवस्था में हूँ।

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामीजी लिखते हैं कि यह सम्पूर्ण ग्रंथ रामनाममय है अर्थात् उदार श्रीरामजी का नाम जो कि अति पवित्र और वेद–पुराणों का सार है, इसमें स्पष्ट रूप से प्रकट है, यथा–

एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।। (1/10/1)

उल्लेखनीय है कि अपवाद स्वरूप कुछ गिनी–चुनी चौपाइयों को छोड़कर सम्पूर्ण **'मानस' में राम शब्द या रा और म दोनों अक्षरों अथवा रा या म का समावेश है**, अतः जब हम 'राम–नाम' के प्रभाव का वर्णन करते हैं तब 'मानस' के 'श्रवण–कथन–गायन–चिन्तन' में भी 'राम–नाम' का दर्शन करना चाहिए। वैसे तो चारों युगों में 'रामनाम' का प्रताप व्याप्त है, किंतु कलियुग में 'रामनाम/भगवत्गुण–गान के अलावा भवपार जाने का दूसरा उपाय है ही नहीं, यथा–

चहुँ जुग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ।। (1/22/8)

श्रीरामनाम की महिमा का वर्णन करते हुए गोस्वामीजी लिखते हैं कि 'राम–नाम', भक्तरूपी धान (फसल) के लिए भक्तिरूपी वर्षा ऋतु के सावन–भादों महीनों के समान हैं–

बरषा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि सुदास।
राम नाम बर बरन जुग सावन भादव मास।। (1/19)

यदि हम अपने अंदर और बाहर दोनों जगह ज्ञानरूपी प्रकाश चाहते हैं तो 'राम नाम' रूपी मणि को अपनी जीभ रूपी देहरी पर रखना चाहिए, यथा–

राम नाम मनिदीप धरु जीह देहरीं द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जौं चाहसि उजिआर।। (1/21)

ब्रह्म के दो स्वरूप हैं–निर्गुण और सगुण। तुलसीदासजी लिखते हैं कि उनके विचार से 'राम' नाम उन दोनों से बड़ा है, क्योंकि 'राम' नाम से दोनों को वश में किया जा सकता है। इस 'राम नाम' का जप–स्मरण–गान चाहे भाव से हो, कुभाव से हो, आलस्य या बुरे भाव से कैसे भी हो, दसों दिशाओं में कल्याण ही करने वाला है, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।।

मोरें मत बड़ नामु दुहू तें। किए जेहिं जुग निज बस निज बूतें।। (1/23/1–2)

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।। (1/28/1)

उत्तरकाण्ड में कलियुग का वर्णन करते हुए काकभुशुंडिजी कहते हैं कि सतयुग में ईश्वर के ध्यान से, त्रेता में यज्ञ से और द्वापर में भगवान के पूजन से मनुष्य भवसागर पार हो सकता है, किन्तु कलियुग में केवल और केवल भगवन्नाम का ही आधार है, यथा–

कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी।।

त्रेताँ बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहि समर्पि कर्म भव तरहीं।।

द्वापर करि रघुपति पद पूजा। नर भव तरहिं उपाय न दूजा।।

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा।।

कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना।। (7/103/1–5)

इसी संदर्भ में गोस्वामीजी अरण्यकाण्ड में लिखते हैं कि कलिकाल में योग, जप, ज्ञान आदि कोई संबल कारगर नहीं है, अतः सभी अन्य साधनों का भरोसा त्यागकर जो श्रीराम नाम का भजन करते हैं, वही बुद्धिमान नर हैं–

कठिन काल मल कोस धर्म न ग्यान न जोग जप।

परिहरि सकल भरोस रामहि भजहिं ते चतुर नर।। (3/6/ख)

'मानस' के समापन के पूर्व उत्तरकाण्ड में भी गोस्वामी तुलसीदासजी पुनः यही लिखते हैं कि इस कलिकाल में योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत, पूजा आदि कोई भी साधन सुगम नहीं है, अतः भवसागर पार जाने हेतु निरंतर **राम–नाम** का स्मरण और श्रीरामजी के गुणगान का श्रवण करते रहना चाहिए, यथा–

एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।। (7/130/5–6)

साथ में भोजन करने का महत्व

किशोर अवस्था में श्रीरामजी अपने भाइयों तथा सखाओं के साथ भोजन करते थे। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

अनुज सखा सँग भोजन करहीं। मातु पिता अग्या अनुसरहीं।। (1/205/4)

राजतिलक के पश्चात् श्रीरामजी अपने भाइयों के साथ भोजन करते थे, जिसे देखकर अर्थात् चारों भाइयों में आपसी प्रेम–सद्भाव से माताएँ सुख का अनुभव करती थीं, यथा–

अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं। देखि सकल जननीं सुख भरहीं।। (7/26/3)

परिवार के सदस्यों के एक साथ भोजन करने से आपसी प्रेम–सद्भाव बढ़ता है। हमें श्रीरामजी के इस आचरण का अनुसरण अवश्य करना चाहिए।

मानस में नारी–धर्म

श्रीमती कुसुम पटैरया, नोएडा, फोनः 9811201847

श्रीरामचरितमानस में ज्ञान–भक्ति–वैराग्य के साथ–साथ समाज के सभी वर्गों एवं परिवार के सभी सदस्यों के कर्तव्य–धर्म का आदर्श वर्णित है, जिसके आचरण से इहलोक और परलोक दोनों का सुधार संभव है। इस लेख में मानस में वर्णित **नारी–धर्म** पर कुछ विचार प्रस्तुत हैं। पार्वती–शिव विवाह के पश्चात् पार्वती की माता मैना नारी–धर्म की शिक्षा देती हैं। इसी तरह सीता–राम विवाह के पश्चात् विदा के समय सीताजी की माता सुनयना ने सीताजी को नारी–धर्म के शिक्षा दी। वनवास काल में जब श्रीरामजी अत्रि ऋषि के आश्रम में गए, तब सती अनसूयाजी ने सीताजी को नारी–धर्म की शिक्षा दी। इसके अलावा भी मानस में नारी–धर्म से संबंधित कुछ शिक्षाएँ वर्णित हैं। इन्हीं शिक्षाओं का संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है।

नारी–धर्म की सभी शिक्षाओं के मूल में है नारी का पातिव्रत धर्म, इसके अलावा नारी को इहलोक और परलोक सुधार के लिए और कुछ करने की आवश्यकता ही नहीं है, यथा–

एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पति पद प्रेमा।। (3/5/10)

पार्वती–शिव विवाह के पश्चात् पार्वतीजी की माता मैनाजी उन्हें शिक्षा देते हुए कहती हैं कि सदा शंकरजी की पूजा करना। नारी–धर्म में पति के अलावा और किसी देवता की पूजा का विधान नहीं है, यथा–

करेहु सदा संकर पद पूजा। नारिधरमु पति देउ न दूजा।। (1/102/3)

इसी प्रकार से सीताजी की माता सुनयना उन्हें शिक्षा देते हुए कहती हैं–

सासु ससुर गुर सेवा करेहू। पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू।। (1/334/5)

यहाँ पर यह विशेषरूप से उल्लेखनीय है कि माता मैनाजी ने केवल शंकरजी की पूजा–सेवा को कहा है, क्योंकि उनके परिवार में सेवा करने के उद्देश्य से और कोई सदस्य नहीं है, पर सीताजी की माता ने सास–ससुर–गुरु की सेवा का भी आदेश दिया और कहा कि पति का रुख (रुझान) अर्थात् उनकी इच्छा समझकर उनकी आज्ञा का पालन करना। सीताजी ने इसी शिक्षा को शिरोधार्य कर मूल मंत्र के रूप में अपनाया। श्रीरामजी पिता की आज्ञा पालन हेतु मुनि वेश में 14 वर्ष के लिए वन जाने को तैयार थे। व्याकुल

सीता भी वन जाने को उद्यत थीं। इस परिस्थिति में श्रीरामजी की इच्छा के साथ–साथ उनकी आज्ञा भी थी कि सीते! तुम घर में ही रहकर मेरी माता की सेवा करो। वे कहते हैं–

कहउँ सुभायँ सपथ सत मोही। सुमुखि मातु हित राखउँ तोही। (2/61/8)

इस उपदेश अथवा पति आज्ञा सुनकर भी सीताजी कहती हैं कि हे प्राणनाथ! आपके बिना देवलोक भी मुझे नरक के समान है। वे परिवार–धर्म के ऊपर पातिव्रत धर्म को महत्व देते हुए कहती हैं–

जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते। पिय बिनु तियहि तरनिहु ते ताते।।
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू। पति बिहीन सबु सोक समाजू।।
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।। (2/65/3–4 एवं 7)

वनवास काल में जब श्रीरामजी भार्या सीता एवं भाई लक्ष्मण के साथ चित्रकूट से दण्डकारण्य जाते हुए अत्रि ऋषि के आश्रम में जाते हैं, तब ऋषि पत्नी परमसती अनसूयाजी उन्हें पातिव्रत धर्म की शिक्षा देते हुए कहती हैं कि जगत में पतिव्रताएँ चार प्रकार की हैं, यथा–

<u>उत्तम</u> के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं।।
<u>मध्यम</u> पर पति देखइ कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसें।।
धर्म बिचारि समुझि कुल रहई। सो <u>निकिष्ट</u> त्रिय श्रुति अस कहई।।
बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु <u>अधम</u> नारि जग सोई।। (3/5/12–15)

नारी–धर्म की शिक्षा का और विस्तार करते हुए अनसूयाजी कहती हैं कि आपत्ति काल में ही नारी धर्म की असली परीक्षा होती है, यथा–

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।। (3/5/7)

यहाँ परमसती अनसूयाजी के संदर्भ में एक घटना का उल्लेख करना संगत होगा ताकि उनके पातिव्रतधर्म के प्रभाव से प्राप्त तपोबल का दिग्दर्शन हो सके। एक बार त्रिदेव, ब्रह्मा–विष्णु–महेश अनसूयाजी की परीक्षा लेने हेतु मुनि वेश में उनके आश्रम में गए और उनसे भिक्षा माँगने लगे। ऋषि–पत्नी गृहस्थाश्रम के अनुकूल जब उन्हें भिक्षा देने लगीं, तब कपट वेशधारी तीनों मुनियों ने कहा कि हम आपसे तभी भिक्षा ग्रहण करेंगे जब आप हमें निर्वस्त्र होकर भिक्षा देंगी। वे सोच में पड़ गईं और समझ गईं कि ये कोई और हैं सामान्य मुनिगण नहीं हैं। अपने पातिव्रतधर्म के तपोबल से उन्होंने रहस्य जानकर उनकी शर्त के अनुसार भिक्षा देना स्वीकार कर लिया। अब परमसती ने अपने पातिव्रतधर्म के प्रभाव से तीनों देवों को छः–छः माह के शिशु के रूप में परिवर्तित कर दिया और तीन

पालने डालकर उन्हें झुलाते हुए भिक्षास्वरूप अपना स्तनपान कराया। इस पर एक बुंदेलखण्डी कवि ने लिखा है–

सती अनुसुइया न डाल दिए पालना।
तीन देव झूल रहे बन करके लालना।।

इसकी सूचना जब त्रिदेवियों सरस्वती–लक्ष्मी–उमा को प्राप्त हुई, तो वे परमसती अनसूयाजी के आश्रम में आकर क्षमा माँगकर अपने पतियों को ले जाती हैं। उल्लेखनीय है कि इन त्रिदेवियों ने ही परमसती की परीक्षा लेने अपने–अपने पतियों को प्रेरित किया था।

बालि–वध के पश्चात् श्रीरामजी वर्षाकाल में प्रवर्षण पर्वत पर निवास करते हैं। उस समय वर्षा ऋतु का विशद वर्णन है, इसमें नारी–धर्म से संबंधित यह शिक्षा संनिहित है–

महाबृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भएँ बिगरहिं नारीं।। (4/15/7)

वर्तमान युग में यह शिक्षा विवादित हो सकती है, परन्तु यह सत्य है कि स्त्री की स्वच्छंदता उसके लिए ही हानिप्रद हो सकती है। यहाँ पर स्वतंत्रता और स्वच्छंदता में अंतर समझ लेना चाहिए। आज नारियाँ सभी क्षेत्रों में पुरुषों के समान कार्य कर रही हैं, इसमें कोई बुराई नहीं है, पर जब वह एक सीमा के बाहर स्वच्छंद विचरण करने लगती है, तभी संकट पैदा हो जाता है। इसका उदाहरण भी श्रीरामचरितमानस में उपलब्ध है। पंचवटी प्रवास के दौरान सीताजी के कहने पर जब श्रीरामजी मायारूपी स्वर्णमृग के पीछे चले जाते हैं और जब वह मरते समय लक्ष्मणजी की आवाज बनाकर सहायता के लिए पुकारता है, तब सीताजी लक्ष्मणजी को उन्हें अकेला छोड़कर जाने को विवश कर देती हैं। लक्ष्मणजी कवच स्वरूप एक रेखा खींचकर जाते हैं और कहकर गए कि माता किसी भी हालात में इस रेखा (लक्ष्मण रेखा) को पार न करना। सूनापन देखकर रावण यती के वेश में आकर भिक्षा माँगता है और लक्ष्मण रेखा से बाहर आने को सीताजी को विवश कर देता है। इस कारण सीताहरण हो जाता है। इस प्रसंग के उल्लेख का आशय यह है कि जब नारी एक सीमा रेखा (लक्ष्मण रेखा) को पार कर जाती है, तब फिर वह सुरक्षित नहीं है और उसका अहित ही होता है।

श्रीरामजी की वनवास यात्रा प्रारम्भ होते ही उनके विरह में व्याकुल राजा दशरथ अपने सखा के समान मंत्री सुमंत्र को बुलाकर कहते हैं कि रथ में बिठाकर राम–सीता–लक्ष्मण को दो–चार दिन वन–यात्रा एवं गंगास्नान कराके लौटा लाना। यदि दृढ़ संकल्पी दोनों भाई न लौटें तो तुम सीता को लौटा लाना, इससे मेरे प्राणों को कुछ आधार मिल जाएगा। गंगा पार करने से पूर्व जब श्रीरामजी ने मंत्री सुमंत्र से धर्म–नीति का विशद वर्णन

करते हुए अयोध्या लौटने को स्पष्ट मना कर दिया, तब सुमंत्र ने राजा दशरथ का आर्त्तमय संदेश सुनाया कि यदि सीता लौट आएँ तो महाराज के प्राण बच सकते हैं। इस संदेश को सुनकर श्रीरामजी यहाँ भी सीताजी को समझाकर अयोध्या लौट जाने को कहते हैं। इस पर पातिव्रतधर्म में दृढ़ निश्चयी सीताजी श्रीरामजी से यह कहती हैं–

प्रभु करुनामय परम बिबेकी। तनु तजि रहति छाँह किमि छेंकी।।
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई। कहँ चंद्रिका चंदु तजि जाई।। (2/97/5–6)

इसके पश्चात् वे मंत्री सुमंत्र से कहती हैं कि आप मेरे पिता एवं ससुर के समान हितकारी हैं, आपको उत्तर देना बहुत अनुचित है, किंतु आपत्तिकाल समझकर आपको बताना चाहती हूँ कि मैंने अपने पिता के वैभव और ससुरजी की प्रतिष्ठा–सम्मान को देखा है और फिर माता के समान मेरी सासूजी हैं, किंतु श्रीरघुनाथजी के चरणकमलों के अलावा मुझे स्वप्न में कोई सुखद नहीं लगा, यथा–

बिनु रघुपति पद पदुम परागा। मोहि केउ सपनेहुँ सुखद न लागा।। (2/98/6)

नारी के लिए सबसे बड़ा महत्वपूर्ण आशीर्वाद उसको 'सदा सुहागिन' होने का है। यह आशीर्वाद सीताजी को वनवास काल में वनवासी महिलाओं ने दिया, यथा–

अति सप्रेम सिय पायँ परि बहुबिधि देहिं असीस।
सदा सोहागिनि होहु तुम्ह जब लगि महि अहि सीस।। (2/117)

चित्रकूट में जब सीताजी अपनी तीनों सासुओं के प्रेम से चरण छूती हैं, तब वे भी उन्हें सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद देती हैं, यथा–

लागि लागि पग सबनि सिय भेंटति अति अनुराग।
हृदयँ असीसहिं पेम बस रहिअहु भरी सोहाग।। (2/246)

नारी का यह भी परमधर्म है कि आपत्तिकाल में अपने पति को धैर्यधारण करने का परामर्श दे। यदि पति धर्मपथ से बिचलित होता दिखाई दे तो बारम्बार उसे धर्मपथ पर लाने का प्रयास करे। महाराज दशरथ जब श्रीराम–विरह में अपने प्राण त्यागने को उद्यत थे, तब कौसल्याजी उनको धैर्यधारण कराते हुए कहती हैं–

नाथ समुझि मन करिअ बिचारू। राम बियोग पयोधि अपारू।। (2/154/5)
करनधार तुम्ह अवध जहाजू। चढ़ेउ सकल प्रिय पथिक समाजू।। (2/154/6)
धीरजु धरिअ त पाइअ पारू। नाहिं त बूड़िहि सबु परिवारू।। (2/154/7)
जौ जियँ धरिअ बिनय पिय मोरी। रामु लखनु सिय मिलहिं बहोरी।। (2/154/8)

सीताहरण के पश्चात् रानी मंदोदरी ने रावण को बारम्बार (चार बार) समझाया कि सीता को लौटाकर मेरे सुहाग की रक्षा कीजिए। मानस के अनुसार विवरण इस प्रकार से है।

(1) जब हनुमानजी लंका–दहन करके लौट जाते हैं, तब मंदोदरी इस प्रकार से समझाती हैं–

रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस पागी।।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें।।(5/36/5 तथा 10)

(2) जब श्रीरामजी समुद्र पर पुल बनाकर सेना सहित लंका में डेरा डाल देते हैं, तब मंदोदरी पुनः इस प्रकार रावण से विनती करती हैं–

मंदोदरीं सुन्यो प्रभु आयो। कौतुकहीं पाथोधि बँधायो।। (6/6/2)
जेहिं बलि बाँधि सहसभुज मारा। सोइ अवतरेउ हरन महि भारा।।
तासु बिरोध न कीजिअ नाथा। काल करम जिव जाकें हाथा।। (6/6/ 8–9)
रामहि सौंपि जानकी नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुँ राज समर्पि बन जाइ भजिअ रघुनाथ।। (6/6)

(3) जब श्रीरामजी ने रावण की रंगशाला में अपने एक तीर से, जो अदृश्य था, रंग में भंग करते हुए रावण के मुकुट और मंदोदरी के कर्णफूल गिरा दिए थे, तब भी मंदोदरी ने भगवान के विराट स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा कि–

अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर रूप राम भगवान।।
अस बिचारि सुनु प्रानपति प्रभु सन बयरु बिहाइ।
प्रीति करहु रघुबीर पद मम अहिवात न जाइ।। (6/15क तथा ख)

(4) जब श्रीरामजी के दूत के रूप में अंगद ने रावण की सभा में उसका मानमर्दन किया, तब उनके लौट जाने पर मंदोदरी अंतिम बार रावण को समझाते हुए कहती हैं–

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही। सोह न समर तुम्हहि रघुपतिही।। (6/36/1)
निकट काल जेहि आवत साईं। तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाईं।। (6/37/8)
दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिय देहु।
कृपासिंधु रघुनाथ भजि नाथ बिमल जसु लेहु।। (6/37)

जो नारी पातिव्रतधर्म का दृढ़ता से पालन करती है उसे कोई भी डिगा नहीं सकता है। इसका उदाहरण श्रीरामचरितमानस में धनुष–यज्ञ के प्रसंग में मिलता है। वहाँ पर द्वीप–द्वीप के राजा–महाराजा और यहाँ तक कि कपट वेश में सुर–असुर भी उपस्थित थे,

पर कोई भी धनुष को उठाना तो दूर, हिला तक नहीं सका। इस पर गोस्वामी तुलसीदासजी उपमा देते हैं कि धनुष इस प्रकार से नहीं डिग रहा है जैसे किसी कामी पुरुष के वचनों से एक सती का मन नहीं डिगता, यथा–

डगइ न संभु सरासनु कैसें। कामी बचन सती मनु जैसें।। (1/251/2)

उत्तरकाण्ड में जब श्रीरामकथा समापन की ओर थी, गोस्वामी तुलसीदासजी उन देश–काल–मानवों आदि का विवरण देते हैं जो 'धन्य' कहलाने योग्य हैं। उसी श्रेणी में वह नारी भी है जो पातिव्रतधर्म पर आरूढ़ हो, यथा–

धन्य देस सो जहँ सुरसरी। धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी।। (7/127/5)

मित्रता की लाज

एक बार की बात है, एक पिता और पुत्र एक साथ पार्क में घूम रहे थे और बातचीत करते हुए सुबह की हवा का आनंद ले रहे थे। वे दोनों पार्क में घूमते हुए काफी दूर तक चले गए थे कि अचानक पिता ने कहा, ''बेटा! रुको। क्या तुम उन बुजुर्ग को हमारी ओर आते हुए देख रहे हो? पिता ने सड़क की ओर इशारा करते हुए पूछा। ''हाँ, मैं उन्हें देख रहा हूँ। वे हमारी तरफ ही आ रहे हैं, बेटे ने उत्तर दिया। वे मेरे मित्र हैं, पिता ने कहा। उन्होंने मुझसे पैसे उधार लिए थे, लेकिन अब वह उसे वापस नहीं कर पा रहे हैं। जब भी वे मुझसे मिलते हैं तो मुझसे कहते हैं कि वे मुझे पैसे वापिस करने की पूरी कोशिश कर रहे हैं। अगर वे पैसों का इंतजाम नहीं कर पाए तो किसी और से पैसे उधार लेकर मुझे दे देंगे। जब भी वे मुझसे यह बात कहते हैं तो उनकी आँखें शर्म से झुक जाती हैं। यह सिलसिला बहुत लंबे समय से चल रहा है, लेकिन अब मैं अपने मित्र को और शर्मिन्दा नहीं करना चाहता हूँ। पिता ने आगे बताया कि मैं कह चुका हूँ कि मुझे पैसे वापिस नहीं चाहिए। तुम इन पैसों को एक उपहार के रूप में स्वीकार कर लो, लेकिन मेरी यह बात सुनकर मेरा मित्र एकदम बौखला गया था।'' उसने बहुत ही दुःखी और भारी मन से मुझसे कहा, ''मैं भिखारी नहीं हूँ। मैं तुम्हारा मित्र हूँ। जब मुझे जरूरत थी, तुमने मुझे पैसे दिए और अब जब भी मेरे पास पैसे आएँगे मैं तुमको पैसे वापिस कर दूँगा। मैं तुम्हारा मित्र बनकर रहना चाहता हूँ। भिखारी बनकर नहीं।''

धन्य है दोनों की करुणामयी भावना एवं देने वाले की 'मित्रता की लाज'

आदिदेव सूर्यशिष्य श्रीहनुमानजी

श्रीमती ज्योत्सना प्रसाद, वाराणसी, फोनः 8939413700

हिन्दू–धर्म को जो भी समझता या मान सम्मान देता है, वह यह भी जानता है कि हिन्दू–धर्म में मूर्ति–पूजन, भजन–कीर्तन इत्यादि का अत्यधिक महत्व है, सबसे अधिक व सबसे बड़ा पूज्य श्रद्धा–विश्वास ही धर्म है। इस आलेख में श्रीहनुमानजी के शिक्षा गुरु के संदर्भ में वर्णन किया जा रहा है। श्रीहनुमानजी का जपेय वैदिक मंत्र **ऊँ हं हनुमते नमः** है।

श्रीहनुमानजी में श्रद्धा–विश्वास, उन्हें कलियुग के देवता तथा श्री भगवान आशुतोष के ग्यारहवें रुद्र के रूप में सब जानते हैं। हनुमानजी मानव का कल्याण करने वाले तथा संसार का भार हरने वाले वानर रूप में साक्षात् शिव स्वरूप हैं। जगत पूज्य ज्ञानियों में अग्रगण्य हैं और विश्वभर में आप शूरवीर सम्राट हैं। सामवेद के ज्ञान एवं कामदेव को जीतने वालों में श्रेष्ठ हैं।

"अगस्त्य संहिता" में श्रीहनुमानजी की अवतरण–तिथि और घड़ी आदि का स्पष्ट वर्णन करते हुए उन्हें शिव अवतार कहा गया है, यथा–

ऊर्जे कृष्ण चतुर्दश्यां भौमेस्वात्यां कपीश्वरः।
मेषलग्नेऽञ्जनागर्भात् प्रादुर्भुतः स्वयं शिवः।।

कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी, भौमवार, स्वाती नक्षत्र एवं मेष लग्न में माता अंजनी के गर्भ से स्वयं शिवजी ने कपीश्वर हनुमान के रूप में अवतार ग्रहण किया। बाल्यकाल से ही वे अतिबुद्धिमान, बलवान तथा अद्भुत क्षमता वाले थे, किंतु फिर भी माता अंजना को चिन्ता हुई कि बालक को शिक्षा ग्रहण करानी चाहिए, पर अद्वितीय पराक्रमी और बुद्धिमान श्रीहनुमानजी को शिक्षा देने वाला भी तो अद्वितीय होना चाहिए। जब हनुमानजी की आयु विद्याध्ययन के योग्य हो गयी, तब माता–पिता ने श्रीहनुमानजी को ज्ञानोपलब्धि हेतु गुरु–गृह भेजने का निर्णय लिया। बड़े उल्लास और विधि पूर्वक उनका उपनयन संस्कार कराया और विद्यार्जन हेतु गुरु–चरणों की शरण में जाने का स्नेहिल आदेश दिया, पर चिन्ता इस बात की थी कि वे सर्वगुण सम्पन्न किस आदर्श गुरु के शिष्य बनें। माता अंजना ने प्रेमपूर्वक कहा पुत्र! सभी देवताओं में आदिदेव भगवान सूर्य को ही कहा जाता है। वे विश्व के अंधकार को विध्वस्त करके सम्पूर्ण विश्व को आलोकित करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा

विश्व के समस्त देवता असुर, गंधर्व, सर्प, दैत्य, पक्षी सभी के आदिकारण भगवान भास्कर हैं। हे बालक हनुमान! तुम उन्हीं की शरण में जाकर श्रद्धा–भक्ति पूर्वक शिक्षार्जन करो।

कछनी, काछें एवं मूंज का यज्ञोपवीत धारण किए पलाशदण्ड एवं मृगचर्म लिए ब्रह्मचारी श्रीहनुमानजी ने सूर्यदेव को देखा और विचार करने लगे। अंजना माता ऋषियों के शाप से अवगत थीं और इसीलिए उन्होंने तुरन्त कहा, पुत्र हनुमान! तुम्हारी सामर्थ्य असीम है। बालकाल्य में इन्हें तुमने अरुण फल समझ कर निगल लिया था। इस ब्रह्माण्ड में ऐसा कोई कार्य नहीं है, जिसे तुम पूर्ण न कर सको। तुम्हारे शारीरिक, मानसिक और आत्मीय बल की किसी से कोई तुलना नहीं है। तुम देव–दानव और मानव आदि के लिए अजेय हो। माँ के ये वचन सुनकर उत्साह के साथ माता–पिता के श्रीचरणों में प्रणाम करके आकाश में उछले और सूर्यदेव के पास पहुँचकर उनके चरणों को स्पर्श करते हुए दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम किया। भगवान सूर्यदेव ने प्रेम से पूछा, पुत्र कैसे आना हुआ? हनुमानजी विनम्र स्वर में बोले, भगवन! मेरा यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हो गया और माता–पिता ने आपके चरणों में विद्या प्राप्त करने हेतु भेजा है। सूर्यदेव ने कहा कि मुझे तुमको शिष्य बनाने में अति प्रसन्नता होगी, पर तुम मेरी परिस्थिति से परिचित हो कि मैं बिना रुके निरन्तर दौड़ता रहता हूँ और इससे वार्तालाप करने की भी स्थिति में भी नहीं हूँ। श्रीहनुमानजी ने उत्तर दिया कि भगवन वेगपूर्वक चलते हुए आपका रथ मेरे अध्ययन को बाधित नहीं कर सकेगा। मैं आपके सम्मुख आपके रथ के वेग के साथ ही निरन्तर चलता रहूँगा। हे सूर्यदेव! मैं आपको किसी प्रकार की असुविधा नहीं होने दूँगा।

भानुसों पढ़न हनुमान गये भानुमन,
अनमानि सिसुकेलि कियो फेरफार सो।
पाछिले पगनि गम गगन मगन–मन
क्रम कान भ्रम कपि बालक विहार सो।।

भगवान भास्कर यह देखकर आश्चर्यचकित नहीं हुए, क्योंकि वे पवनपुत्र के पराक्रम से परिचित थे। हनुमानजी तो स्वयं ज्ञानिनामग्रगण्य हैं। श्रीरामचरितमानस के सुंदरकाण्ड के मंगलाचरण के श्लोक क्रमांक 3 में श्रीहनुमानजी की वंदना में तुलसीदासजी लिखते हैं–

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यं।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।

श्रीहनुमानजी शास्त्र की मर्यादा को रखने तथा सूर्यदेव को गौरव देने हेतु उनके शिष्य बने। भगवान सूर्यदेव जो–जो शब्द उच्चारण करते थे सम्पूर्ण एकाग्रता के साथ हनुमानजी समस्त वेदादि शास्त्रों एवं सांगोपांग रहस्य शीघ्रता से ग्रहण करते गए। हनुमानजी

ने कुछ ही समय में सारे शास्त्र, उपशास्त्र एवं समस्त विद्याएँ, उपविद्याएँ और वेदादि शास्त्र सब कुछ सीख लिया। पवनपुत्र में स्वतः सकल विद्याएँ अधिवास करती थीं, केवल गुरुपरंपरा का सम्मान करते हुए अब वे सकल शास्त्र पारंगत हो गए। उल्लेखनीय है कि अखिल ब्रह्माण्डनायक भगवान श्रीरामजी भी तो सकल विद्याओं के ज्ञाता होते हुए भी गुरुपरंपरा के पालनार्थ गुरुकुल गए और अल्पकाल में ही सभी विद्याओं के ज्ञाता हो गए। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

गुरुगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई।। (1/204/4)

रामरहस्योपनिषद् में हनुमानजी ब्रह्मज्ञानियों के मूर्धन्य माने गए हैं।

ऋषिगण, प्रह्लाद आदि विष्णु भक्त तथा योगियों एवं ज्ञानियों में श्रेष्ठ सनकादि भी श्रीहनुमानजी के पास जाकर जिज्ञासापूर्वक प्रश्न करते हैं – महाबाहु वायुपुत्र, 18 पुराणों, 18 स्मृतियों, चारों वेदों, छहों शास्त्रों, सभी विद्याओं तथा आध्यात्मिक शास्त्रों में ब्रह्मवादियों का तत्व क्या है? सम्पूर्ण विद्याओं के दान में गणेश, सूर्य, शिव और शक्ति इनमें यथार्थ तत्व क्या हैं? इस प्रकार सनकादिक जैसे ब्रह्मज्ञानियों को पवनपुत्र से तत्त्व विषयक प्रश्न करना तथा उनके द्वारा उपदेश दिया जाना उनकी तत्वदर्शिता का ज्वलंत प्रमाण है।

विद्यार्जन समाप्त होने के बाद हनुमानजी ने दण्डवत् प्रणाम करते हुए सूर्यदेव से निवेदन किया कि दक्षिणा कैसे व किस विधि से आपको सप्रेम भेट दूँ, तब सूर्य देवता ने कहा कि तुम मेरे अंश से प्रकट कपिराज बालि के अनुज सुग्रीव की सदैव सेवा/रक्षा करते रहना। यही मेरी दक्षिणा है। श्रीरामचरितमानस के किष्किन्धाकाण्ड में वर्णन आता है कि सुग्रीव अपने भाई बालि के भय से ऋष्यमूक पर्वत पर अपने मंत्रियों के साथ निवास करते थे, पर सदा भयभीत रहते थे कि कहीं बालि किसी अन्य महाबली को भेजकर उनका वध न करा दे। जब सीताजी की खोज में श्रीराम–लक्ष्मण ऋष्यमूक पर्वत की तराई में दिखाई पड़े, तब सुग्रीव ने श्रीहनुमानजी से यह कहा–

अति सभीत कह सुनु हनुमाना। पुरुष जुगल बल रूप निधाना।।
धरि बटु रूप देखु तैं जाई। कहेसु जानि जियँ सयन बुझाई।। (4/1/3–4)

श्रीराम राज्याभिषेक के पश्चात् जब सुग्रीव श्रीरामजी से विदा लेकर अपनी राजधानी लौटने लगे, तब श्रीहनुमानजी ने यह कहा–

तब सुग्रीव चरन गहि नाना। भाँति बिनय कीन्हे हनुमाना।।
दिन दस करि रघुपति पद सेवा। पुनि तव चरन देखिहउँ देवा।। (7/19/7–8)

इस प्रकार सदैव श्रीहनुमानजी ने गुरुदक्षिणास्वरूप सुग्रीव की सेवा/रक्षा की।

तीनों काल जिसके रथ चक्र की नाभियाँ हैं, ऐसे आदिदेव सूर्यदेव का आशीर्वाद पाकर परम विद्वान पवनकुमार गन्धमादन पर्वत पर लौट आए और माता–पिता के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया। **इस प्रकार सूर्यदेव द्वारा हनुमानजी का शिक्षार्जन हुआ और वे हनुमानजी के गुरु कहलाए।**

मैंने तुम्हें भुलाया

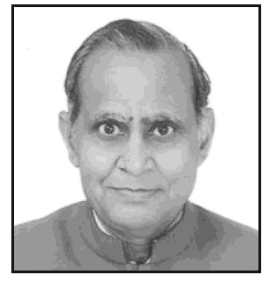

डॉ. भगवान दास पटैरया, नोएडा, फोनः 9899004263

भगवन मैंने तुम्हें भुलाया,
प्रभुजी मैंने तुम्हें भुलाया।
इसीलिए भवजाल में फँसकर,
अब तक दुःख उठाया।।
भगवन मैंने तुम्हें भुलाया।। (1)

मैं तो जीव ग्रसित माया में,
तन मन से लिपटाया।
तुम तो अन्तर्यामी स्वामी,
क्यों नहिं आन बचाया।।
भगवन मैंने तुम्हें भुलाया।। (2)

यह माया बलवती तुम्हारी,
हरदम मुझे नचाया।
हार थका जब इससे रघुबर,
तब दर तेरे आया।।
भगवन मैंने तुम्हें भुलाया।। (3)

बहुतक भटक्यो जनम जनम में,
प्रेम न दिल में समाया।
तभी तो जब से बिछुड़ा तुमसे,
कभी चैन न पाया।।
भगवन मैंने तुम्हें भुलाया।। (4)

करुणामय कर करुणा प्यारे,
करो दास पै दाया।
जल्द दिखा दो अनुपम झाँकी,
धन्य बने ये काया।।
भगवन मैंने तुम्हें भुलाया।। (5)

भगवन्लीला में लक्ष्मणजी की भूमिका

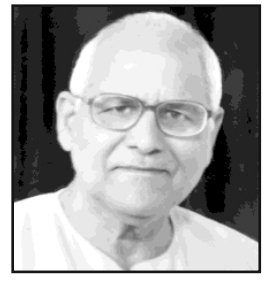

श्री राम जन्म सिंह, ग्राम–पो0 दामा, जिला–आजमगढ़ (उ.प्र.), फोनः 9839453851

गोस्वामी तुलसीदासजी श्रीलक्ष्मणजी की वंदना करते हुए लिखते हैं –

बंदउँ लछिमन पद जल जाता। सीतल सुभग भगत सुख दाता।।
रघुपति कीरति बिमल पताका। दंड समान भयउ जस जाका।।
सेष सहस्रसीस जग कारन। जो अवतरेउ भूमि भय टारन।।
सदा सो सानुकूल रह मो पर। कृपासिंधु सौमित्रि गुनाकर।। (1/17/5–8)

लक्ष्मणजी की वंदना में चार पंक्तियों का उपयोग किया गया है, जबकि भरत की वंदना में दो पंक्ति लिखी गयी हैं और शत्रुघ्न की वंदना में एक पंक्ति। श्रीरामजी की वंदना भी दो पंक्तियों में की गयी है।

राम–लक्ष्मण का परस्पर सम्बन्ध यह है–यदि एक पताका है तो दूसरा उसे फहराने वाले दंड के समान है। यह कितनी सार्थक उपमा है, पताका कोमल है, पर दंड कठोर। ईश्वर और शक्ति के मध्य में काल की भूमिका। काल को शेष (शेषनाग) कहकर पुकारा जाता है अर्थात् लक्ष्मणजी शेष हैं।

श्रीराम के साथ लक्ष्मणजी की आवश्यकता को सर्वप्रथम महर्षि विश्वामित्र ने समझा। वे राजा दशरथ से राम को माँगते हुए कहते हैं–

अनुज समेत देहु रघुनाथा। निसिचर बध मैं होब सनाथा।। (1/207/8)

वे लक्ष्मण की माँग कर रहे हैं। श्रीराम को विश्व के संघर्षमय लोक रंगमंच पर लाने वाले विश्वामित्र हैं, न कि वसिष्ठ। वसिष्ठ को रावण के अत्याचार की चिंता नहीं है। दोनों ऋषियों में आपसी सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। वसिष्ठ ब्रह्मर्षि होने के कारण जगत पूज्य हैं। विश्वामित्र ने क्षत्रिय से ब्राह्मण बनने की चेष्टा की, वे अपनी तपस्या–साधना के बल पर ब्रह्मर्षि बन गए, पर ब्रह्मर्षि बनने से भी विश्वामित्र की समस्या का समाधान नहीं हुआ। विश्वामित्र शस्त्र त्याग चुके थे, यज्ञ के समय राक्षस विघ्न डाल रहे थे, इसलिए विश्वामित्र को लगा कि–

गाधितनय मन चिंता ब्यापी। हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी।। (1/206/5)

विश्वामित्र श्रीराम को लाने की योजना बनाते हैं। अयोध्या में प्रभु का अवतार हो चुका था, प्रभु को पाने के लिए उन्हें राजा दशरथ के पास जाना पड़ा। उनके आचार्य वसिष्ठजी हैं। दोनों ऋषियों में टकराव है। राम के दोनों गुरु थे। बाल्यावस्था में राम ने

वसिष्ठ से शिक्षा प्राप्त की थी और जब विश्वामित्रजी उन्हें ले गए तब उनको उन्होंने शिक्षा दी। विश्वामित्र आकर दोनों भाइयों की माँग करते हैं। यहाँ पर यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि यद्यपि दोनों ऋषियों में आपसी मतभेद था, परन्तु जनकल्याण भावना से वसिष्ठजी श्रीराम–लक्ष्मण को भेजने का समर्थन करते हैं, यथा–

देहु भूप मन हरषित तजहु मोह अग्यान।
धर्म सुजस प्रभु तुम्ह कौं इन्ह कहँ अति कल्यान।। (1/207)

अब मानस के विभिन्न प्रसंगों में लक्ष्मणजी की भूमिका पर विचार करते हैं।

1. **पुष्प वाटिका में लक्ष्मणजी की भूमिका–** यहाँ शक्ति और ब्रह्म का मिलन स्थल है। इस वाटिका में राम, सीता को देखने नहीं आए थे, गुरु आज्ञा से पूजन हेतु पुष्प लेने आए थे। सीता भी राम की खोज में नहीं आयी थीं मंदिर में पूजन के लिए आयी थीं। पुष्प वाटिका में जब सीता के नूपुरों की ध्वनि सुनाई पड़ती है, तब श्रीराम कह उठते हैं–

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हृदयँ गुनि।।
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही। मनसा बिस्व बिजय कहँ कीन्ही।। (1/230/1–2)

श्रीराम कहते हैं–लक्ष्मण! लगता है कामदेव नगाड़ा बजाता हुआ आ रहा है और फिर सीता का शृंगार देख राम बोल उठते हैं–

सब उपमा कबि रहे जुठारी। केहिं पटतरौं बिदेहकुमारी।। (1/230/8)

शृंगार रस का वर्णन विदेह नगर में है, पर यहाँ शृंगार रस के साथ–साथ भक्ति रस के दिव्य रस की भी पराकाष्ठा है, इसीलिए गोस्वामीजी लिखते हैं–

प्रीति पुरातन लखइ न कोई।। (1/229/8)। वाटिका में मयूर नृत्य कर रहा था, उसका एक पंख गिरा, उसे लक्ष्मणजी प्रभु के माथे पर लगा देते हैं और उन्हें फूलों की कलियों से भी सजा दिया–

मोरपंख सिर सोहत नीके। गुच्छ बीच बिच कुसुम कली के।। (1/233/2)

यहाँ पर यह विशेषरूप से उल्लेखनीय है कि मोर पंख 'कामरहित' हो जाने का प्रतीक है, क्योंकि मोर के नृत्य के समय उसके मुख से एक विशेष प्रकार का पदार्थ निकलता है, जिसका पान करके ही मोरनी गर्भवती हो जाती है। भगवान श्रीकृष्णजी भी गोपियों संग रास लीला में मोर पंख धारण करते रहे। आज तक ब्रह्म निष्पक्ष था, अब पक्षधर हो गया। बिरागी ब्रह्म अनुरागी हो गया। पुष्प वाटिका में काम की स्वीकृति है, धनुष यज्ञ में क्रोध की, विवाह में लोभ की, तथापि गोस्वामीजी मानते हैं कि–

जहाँ राम तहँ काम नहिं जहाँ काम नहिं राम।

लक्ष्मणजी हैं शेष, नारायण शेष की शैया पर सोते हैं। इस प्रकार शैया ही शृंगार रस में मूक साक्षी बनी।

2. **परशुराम–लक्ष्मण संवाद**–इस वीरता के प्रसंग में लक्ष्मणजी की भूमिका गर्जना की है। परम ज्ञानी जनक चिंतित हैं कि धनुष क्यों नहीं टूट रहा है और महान तपस्वी योद्धा परशुरामजी क्रोधित हैं कि धनुष क्यों तोड़ा गया। धनुष न टूटने पर जनकजी ने कहा–

अब जनि कोउ माखै भट मानी। बीर बिहीन मही मैं जानी।।
तजहु आस निज निज गृह जाहू। लिखा न बिधि बैदेहि बिबाहू।। (1/252/3–4)

राजा जनक की यह बात सुन लक्ष्मणजी बौखला उठे और बोले–

रघुबंसिन्ह महुँ जहँ कोउ होई। तेहिं समाज अस कहइ न कोई।।
कही जनक जसि अनुचित बानी। बिद्यमान रघुकुलमनि जानी।। (1/253/1–2)

आवेश में आकर क्रोधित लक्ष्मणजी के वचनों की यह प्रतिक्रिया हुई–

लखन सकोप बचन जे बोले। डगमगानि महि दिग्गज डोले।। (1/254/1)

विश्व काँप उठा, केवल दो अडिग रहे धनुष एवं श्रीराम। अब विश्वामित्रजी शुभ मुहूर्त जानकर श्रीरामजी से कहते हैं–हे राम! उठो, अब शिवजी का धनुष तोड़कर राजा जनक का संताप दूर करो। जैसे ही श्रीराम मस्त हाथी की चाल से धीरे–धीरे धनुष की ओर बढ़ते हैं, जनकपुरवासी इस प्रकार से प्रार्थना करते हुए अपने पुण्य को याद करते हैं–

बंदि पितर सुर सुकृत सँभारे। जौं कछु पुन्य प्रभाउ हमारे।।
तौ सिवधनु मृनाल की नाईं। तोरहुँ रामु गनेस गोसाईं।। (1/255/7–8)

इधर सीताजी भी गणेशजी, गौरी एवं धनुष से प्रार्थना करती हैं कि श्रीरामजी आसानी से धनुष तोड़ सकें। देवों में गणेश का चुनाव कितना सुन्दर है। तोड़ने का काम आसानी से हाथी ही कर सकता है। धनुष टूटने पर यदि शिव रुष्ट हों, तो कह देंगे कि आपके बेटे ने ही तुड़वाया है। प्रार्थनाएँ सार्थक हुईं और श्रीराम ने –

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़ें। काहुँ न लखा देख सबु ठाढ़ें।। (1/261/7)

धनुष भंग की भयंकर ध्वनि सुनकर शिवभक्त परशुरामजी की समाधि टूटी और वे सीधे जनकपुर में आयोजित धनुष यज्ञ स्थल पर पहुँच गए। परशुरामजी अति क्रोधी हैं, लक्ष्मणजी का उत्तर भी उसी शैली में देखकर–

थर थर काँपहिं पुर नर नारी। छोट कुमार खोट बड़ भारी।। (1/278/5)

लक्ष्मणजी पुनः कहते हैं–

मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े। द्विज देवता घरहि के बाढ़े।। (1/276/7)
जौं पै कृपाँ जरिहिं मुनि गाता। क्रोध भएँ तनु राख बिधाता।। (1/280/5)

जब श्रीरामजी ने देखा कि लक्ष्मण और परशुरामजी के बीच बात बहुत बढ़ गई है, तब परशुरामजी को शान्त करते हुए बोले कि आपका तो 'परशु' सहित नाम भी मुझ 'राम' से बड़ा है और फिर–

बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहि डेराई।। (1/284/5)

श्रीराम के इन गूढ़ बचनों को सुनकर उनके ईश्वरत्व की परीक्षा लेने के लिए परशुराम कहते हैं–

राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू।।
देत चापु आपुहिं चलि गयऊ। परसुराम मन बिसमय भयऊ।। (1/284/7–8)

परशुरामजी का संदेह दूर हो गया और जाते–जाते श्रीराम को प्रणाम–वंदना, स्तुति के साथ लक्ष्मणजी को भी नमन किया, और बोले–

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।। (1/285/6)

3. क्रोधित लक्ष्मण का सुग्रीव से मिलन– बालि–वध के पश्चात् श्रीराम चौमासे (वर्षाकाल) में प्रवर्षण नामक पहाड़ पर रहे और वहाँ जाने से पूर्व सुग्रीव से कह गए कि वर्षाकाल के बाद तुरंत आकर मिलना ताकि सीता की खोज कर सकें, पर जब सुग्रीव नहीं आए, तब श्रीरामजी क्रोधित होकर कहते हैं–

सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी। पावा राज कोस पुर नारी।।
जेहिं सायक मारा मैं बाली। तेहिं सर हतौं मूढ़ कहँ काली।। (4/18/4– 5)

यहाँ पर यह विशेषरूप से उल्लेखनीय है कि श्रीराम क्रोध में तो हैं, पर कहते हैं अभी नहीं सुग्रीव को कल मारूँगा। संदेश यह है कि क्रोध आने पर उसकी प्रतिक्रिया को कल के लिए टाल दिया जाए। हो सकता है कि कल स्थिति बदल जाए। प्रभु को क्रोधित जानकर लक्ष्मणजी धनुष पर बाण चढ़ा लेते हैं, तब श्रीराम कहते हैं–

तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुना सींव।
भय देखाइ लै आवहु तात सखा सग्रीव।। (4/18)

इस प्रकार की शिक्षा प्राप्तकर लक्ष्मणजी सुग्रीव को लेने जाते हैं। लक्ष्मणजी के आने का समाचार सुन सुग्रीव भय से काँपने लगता है, सामने जाने का साहस नहीं करता। वे हनुमानजी से कहते हैं–

सुनु हनुमंत संग लै तारा। करि बिनती समझाउ कुमारा।।
तारा सहित जाइ हनुमाना। चरन बंदि प्रभु सुजस बखाना।। (4/20/3–4)

पहले मित्र बनाकर बाद में दण्ड देना शोभनीय नहीं है। हनुमानजी पहले प्रभु के यश का बखान करते हैं, तब लक्ष्मण का क्रोध शान्त हो जाता है। गोस्वामीजी यहाँ एक बड़ा प्रतीकात्मक वाक्य लिखते हैं–

करि बिनती मंदिर लै आए। चरन पखारि पलँग बैठाए।। (4/20/5)

श्रीलक्ष्मण का पलंग से क्या सम्बन्ध है? पलंग तो बैठने की नहीं सोने की जगह है। लक्ष्मणजी ने न सोने का व्रत लिया है। काल सोता नहीं। लक्ष्मणजी को यदि बिठाना ही था, तो मृगचर्म, बाघम्बर, कुशासन आदि बिछा देते। इसमें हनुमानजी की संकेतात्मक भाषा पर ध्यान दें। वे बताना चाहते हैं कि यहाँ तो सोने वाले ही जीव हैं, तभी तो प्रभु का

कार्य भूल गए। लक्ष्मणजी को पलंग पर बैठाना इसलिए आवश्यक है कि जीव की नींद टूट जाए। साँप को देखकर नींद कहाँ आएगी। यदि हजार फन वाला साँप बैठा हो, तो क्या कोई सो सकेगा। इसके बाद सुग्रीव के जीवन में आलस्य–प्रमाद का कोई प्रसंग नहीं आता है। लक्ष्मणजी सुग्रीव को लेकर श्रीराम के पास आते हैं और मैत्री का सूत्र मजबूत हो जाता है।

रावण–अंगद–संवाद में रावण कहता है कि मेरा कुम्भकर्ण जैसा भाई है, उसके रहते मुझे चिंता नहीं। यह समाचार सुनकर प्रभु को हँसी आ गयी, क्यों? रावण को छह महीने सोने वाले भाई पर गर्व है, तो मुझे अपने भाई पर कितना गर्व होना चाहिए, जो सोता ही नहीं। यही है, लक्ष्मणजी की भूमिका।

4. **शूर्पणखा–विवाह का प्रस्ताव–** जब शूर्पणखा विवाह का प्रस्ताव लेकर श्रीराम के पास आती है, तो प्रभु कह देते हैं–

सीतहि चितइ कही प्रभु बाता। अहइ कुआर मोर लघु भ्राता।। (3/17/11)

श्रीरामजी ने छोटे भाई के साथ कैसा विनोद किया। लक्ष्मणजी भी प्रभु के मन की बात समझ विनोद का विस्तार कर रहे हैं, वे कहते हैं–

सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा। पराधीन नहिं तोर सुपासा।। (3/17/13)

शूर्पणखा बड़ी प्रसन्न हुई, क्योंकि उसे सुन्दरी कहा गया। लक्ष्मणजी अपने को दास बताकर कहते हैं श्रीराम के पास जाओ। वे राजा हैं, राजा कई विवाह कर सकते हैं, तब शूर्पणखा श्रीराम के पास जाती है, नकारात्मक उत्तर पाकर क्रुद्ध होकर सीता पर आक्रमण कर देती है। यहाँ लक्ष्मणजी की भूमिका बदल जाती है और वे प्रभु का संकेत पाकर शूर्पणखा के नाक–कान काट लेते हैं।

5. **रावण के दो गुप्तचरों का प्रसंग–** जब श्रीराम समुद्र के किनारे आ गए, तब रावण अपने दो गुप्तचर भेजता है। रावण की व्यवस्था पर विचार करें, वहाँ एक मच्छर भी लंका में प्रवेश नहीं कर सकता। हनुमानजी मच्छर की तरह छोटे रूप में जाते हैं, फिर भी लंकिनी द्वारा पकड़ लिए गए। रावण के गुप्तचर श्रीराम की सेना में आकर कई दिन रहे। एक दिन वे आपस में श्रीरामजी के सुयश का वर्णन करते हुए राम–रावण की तुलना कर रहे थे कि प्रेमवश अपने को भूलकर अपने असली रूप (राक्षस) में आ गए, तब पास के बंदरों ने उन्हें पहचान लिया और सुग्रीव के पास ले गए। लक्ष्मणजी यह दृश्य देख रहे थे।

सुनि लछिमन सब निकट बोलाए। दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए।। (5/52/7)

फिर लक्ष्मणजी ने गुप्तचरों को एक पत्र दिया और कहा इसे रावण को दे देना। यह रावण के नाम काल का संदेश था। रावण काल (शेषनाग) के संदेश की उपेक्षा करता है और इसीलिए विनाश को प्राप्त होता है।

मानस में भरतजी का चरित्र समुद्र की तरह है, जिसकी गहराई समझना कठिन है और लक्ष्मणजी का चरित्र आकाश की तरह है जिसमें सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि साफ–साफ

दिखाई देते हैं। अंक की दृष्टि से श्रीराम एक की संख्या हैं तो भरत नौ की, पर लक्ष्मणजी तो हैं शून्य की तरह पर जिसके आगे जुड़ते हैं, उसका मूल्य दस गुना बढ़ा देते हैं। यही उनका अनोखापन है। लक्ष्मण श्रीराम की प्रत्येक परिस्थिति और क्रियाकलाप में सर्वत्र दृष्टिगोचर हैं।

श्रीराम के साथ वन जाते समय माँ सुमित्रा ने लक्ष्मण को बताया था–

तात तुम्हारि मातु बैदेही। पिता रामु सब भाँति सनेही।।
अवध तहाँ जहँ राम निवासू। तहँइँ दिवसु जहँ भानु प्रकासू।। (2/74/2–3)

माता–पुत्र के मिलन को देखकर कहना कठिन हो जाता है कि महान कौन है। लक्ष्मण ऐसे पात्र हैं जो स्वयं को मिटाकर रामराज्य की स्थापना में नींव की ईंट की तरह काम किए। ये दिखाई नहीं देते, पर इनके त्याग के आधार पर ही रामराज्य का निर्माण हुआ। वे श्रद्धा के पात्र हैं, गोस्वामीजी की मान्यता है कि प्रभु राम की कीर्ति पताका इस लक्ष्मण दंड के अभाव में नहीं फहरा सकती।

जब हनुमानजी लंका से लौटने लगे तो माँ जानकी से पूछा, कोई और संदेश भी ले जाना है। माँ ने कहा, प्रभु के साथ पहले लक्ष्मण को मेरा प्रणाम कहना–

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना। दीन बंधु प्रनतारति हरना।। (5/31/3)

यह सुनकर हनुमानजी चौंक पड़े। असमंजस में पड़ गए। सोचने लगे माँ तो पुत्र को आशीर्वाद देती है। सीता स्मरण दिलाती हैं कि वन पथ पर लक्ष्मण का ध्यान प्रभु के चरण छोड़ कहीं नहीं गया, पर मेरी दृष्टि भटककर स्वर्ण मृग की ओर चली गयी, इसीलिए मेरा पथ बदल गया। **धन्य हैं लक्ष्मण और उनकी दृष्टि कि प्रभु के चरण छोड़ कहीं जाती ही नहीं। वंदनीय हैं ऐसे लक्ष्मणजी के चरण।**

कैसी बोलें वाणी

वाणी में धार नहीं आधार होना चाहिए अर्थात् अप्रिय नहीं, प्रियता होनी चाहिए। इसलिए संत कबीर ने कहा है–

ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करै आपहुँ शीतल होय।।

श्रीरामचरितमानस में भी यही उपदेश है कि सत्य, प्रिय एवं विचार कर बोलना चाहिए, यथा–

कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। (2/130/4)

अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता

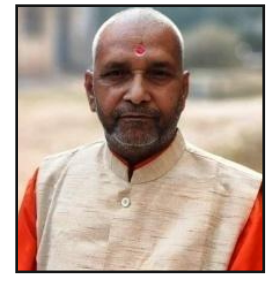

श्री राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी (उ.प्र.), फोनः 9451131195

सीतान्वेषण के समय जब श्रीहनुमानजी ने अशोक वाटिका में माता सीताजी के दर्शन करके उन्हें श्रीरामचरित सुनाकर कुशल समाचार दिया, तब उन्होंने प्रसन्न होकर 'गुणनिधि' होने का वरदान दिया। **अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।। (5/17/3),** गुणनिधि में सभी सिद्धियों की प्राप्ति भी शामिल है, अतः हनुमान चालीसा में इसका स्पष्ट उल्लेख है–

अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता। अस बर दीन जानकी माता।। (हनुमान चालीसा)

अनन्त ब्रह्माण्डनायक परात्पर परब्रह्म भगवान श्रीराम के प्रिय भक्त हनुमानजी अष्ट सिद्धि नौ निधियों के प्रदाता हैं। इस लेख में अष्ट सिद्धियों के वर्णन के साथ यह दर्शाने का प्रयास किया गया है कि श्रीरामचरितमानस में इनका उपयोग हनुमानजी ने कब–कब किया है। शास्त्रों के अनुसार अष्ट सिद्धियाँ इस प्रकार हैं–

अणिमा महिमा चैव लघिमा गरिमा तथा।
प्राप्तिः प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्ट सिद्धयः।।

अर्थात् अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व ये सिद्धियाँ ''अष्टसिद्धि'' कहलाती हैं। अनिच्छित होते हुए भी सच्चे साधक की सेवा के लिए ये सभी सिद्धियाँ अपने–आप सदैव तैयार रहती हैं। इन अष्ट सिद्धियों ने राम कार्य सम्पादन में हनुमानजी को सहायता देने के उद्देश्य से होड़ लगा रखी थी। लघुरूप धारण करने में अणिमा, विशाल रूप धारण करने में महिमा, गुरू (अधिक भारवाला) बनने में गरिमा, विशाल होते हुए भी हलकापन लाने में लघिमा, अलभ्य वस्तु उपलब्ध करने–कराने में प्राप्ति, राम–कार्य के लक्ष्य को पूरा करने में प्राकाम्य, निर्भयता लाने में ईशित्व तथा विपक्षी को भी वश में कर लेने में वशित्व–नाम की सिद्धियों ने हनुमानजी की स्वतः सहायता की।

1. अणिमाः–अणु से भी सूक्ष्म बन जाने की शक्ति इस सिद्धि में है। सागर को पारकर लंका की द्वारपालिका 'लंकिनी' निशाचरी को सद्गति देने के पश्चात् जनकनन्दिनी के अन्वेषणक्रम में श्रीहनुमानजी मच्छर के समान सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप धारण कर रात्रि में सारी लंका नगरी का निरीक्षण कर लेते हैं, किन्तु अत्यंत अणु रूप होने के कारण वहाँ के

निवासियों को उनका कुछ पता तक नहीं चला। हनुमानजी शत्रुओं के लिए सर्वथा अदृश्य हो गए थे।

ततो जगाम हनुमान् लंकां परमशोभनाम्।
रात्रौ सूक्ष्मतनुर्भूत्वा बभ्राम परितः पुरीम्।। (अध्यात्म रामायण 5/2/1)

श्रीरामचरितमानस में उल्लेख है कि श्रीहनुमानजी ने अनेक बार इस सिद्धि का प्रयोग किया है और उन्होंने अपने शरीर को अनेक बार छोटा तथा परम छोटा, विशाल किया। कुछ उदाहरण इस प्रकार से हैं–

सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ। तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ।।
जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा।।
सत जोजन तेहि आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवन सुत लीन्हा।। (5/2/8–10)
पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पइसार।। (5/3)
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना। पैठा नगर सुमिरि भगवाना।। (5/5/4)
कनक भूधराकार सरीरा। समर भयंकर अतिबल बीरा।।
सीता मन भरोस तब भयऊ। पुनि लघु रूप पवनसुत लयऊ।। (5/16/8–9)
पावक जरत देखि हनुमंता। भयउ परम लघु रूप तुरंता।। (5/25/8)
पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघु रूप बहोरि।
जनकसुता कें आगे ठाढ़ भयउ कर जोरि।। (5/26)
धरि लघु रूप गयउ हनुमंता। आनेउ भवन समेत तुरंता।। (6/55/8)

2. महिमाः. इस सिद्धि में विराट रूप धारण करने की शक्ति है। सागर को पार करने के समय परीक्षाकारिणी सुरसा के साथ प्रतियोगिता में मारुतिजी ने अपने शरीर को क्रमशः अनेक योजनों तक विस्तृत किया था।

वक्त्रं चकार हनुमांस्त्रिंशद्योजनसम्मितम्।। (अध्यात्म रामायण 5/1/20)

सीताजी द्वारा ऐसा संदेह कि तुम बहुत छोटे आकार के हो और राक्षस तो विशालकाय हैं, व्यक्त किए जाने पर महावीर मारुतिनंदन ने उन्हें आश्वस्त कराते हुए अपने को स्वर्ण–शैल के समान विशाल बनाकर अपनी अतुल शक्ति का परिचय दिया।

श्रुत्वा तद्वचनं देव्यै पूर्वरूपमदर्शयत्।
मेरुमन्दरसंकाशं रक्षोगणविभीषणम्।। (अध्यात्म रामायण 5/3/64)

इन दोनों ही अवसरों पर इनका क्रमिक वर्धमान शरीर विशालता के कारण अनन्त आकाश में मानो समावेश नहीं हो पा रहा था। इन प्रसंगों में हनुमानजी में महिमा सिद्धि के प्रतिष्ठित रूप का स्पष्ट दर्शन मिलता है।

3. गरिमाः. इस सिद्धि में अत्यधिक भारी हो जाने की शक्ति है। एक बार हनुमानजी गंधमादन के एक भाग में अपनी पूँछ फैलाकर स्वच्छन्द पड़े थे। उसी समय बलगर्वित भीमसेन को आते देख वे मन में हँसते हुए उनसे बोले 'अनघ! बुढ़ापे के कारण मैं स्वयं उठने में असमर्थ हूँ, कृपया आप ही मेरी इस पूँछ को हटाकर आगे बढ़ जाइये।' भीमसेन अवज्ञा के साथ हँसते हुए बायें हाथ से उन महाकपि की पूँछ हटाने लगे, पर वह टस–से मस न हुई। तब वे अपने दोनों हाथों से जोर लगाने लगे, फिर भी वह पूँछ उनके द्वारा टस से मस नहीं हुई।

विज्ञाय तं बलोन्मतं बाहुवीर्येण दर्पितम्।
हृदयेनावहस्यैनं हनूमान् वाक्यमब्रवीत्।।
प्रसीद नास्ति में शक्तिरुत्थातुं जरयानघ।
ममानुकम्पया त्वेतत् पुच्छमुत्सार्य गम्यताम्।। (महाभारत 3/147/15–16)
सावज्ञमथ वामेन स्मयज्नग्राह पाणिना न।
चाशकच्चालयितुं भीमः पुच्छं महाकपेः।।
उच्चिक्षेप पुनर्दोमिन्द्रायुधमिवोच्छ्रतम्।
नौद्धर्तुमशकद् भीमो दोयमपि महाबलः।। (महाभारत 3/147/19–20)

इस अनपेक्षित पराभव के करण भीमसेन ने उन्हें पहचान कर लज्जावनतमुख हो उन कपिशार्दूल से क्षमा माँगी। इस विवरण से मारुतिनंदन में 'गरिमा' सिद्धि का पूर्ण प्रस्फुटितरूप प्रत्यक्ष उपस्थित हो जाता है।

4. लघिमाः– इस सिद्धि में अत्यंत हल्का बना लेने की शक्ति है। इस सिद्धि को प्राप्त करने के पश्चात् साधक लघु अथवा अत्यंत हल्का बन सकता है। सागरलंघन की प्रथम परीक्षा में अहि माता के मुख में प्रवेश कर बाहर आने के लिए उनको इस सिद्धि ने सहायता दी।

लंका–दहन करते समय शरीर तो बहुत विशाल था, लेकिन राक्षसों के घरों पर चढ़कर इधर–उधर भाग रहे थे। जिनके चरण रखने से पर्वत भी धंसकर पाताल में चले गए, उन हनुमानजी ने लघिमा सिद्धि से अपना शरीर इतना हल्का बना लिया कि वे घरों पर घूमते रहे।

जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता। चलेउ सो गा पाताल तुरंता।। (5/1/7)

उन्हीं हनुमानजी ने अपने विशाल शरीर को इतना हल्का कर लिया कि–

देह बिसाल परम हरुआई। मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई।। (5/26/1)

5. प्राप्तिः– इस सिद्धि में जो उपलब्ध न हो, इच्छानुरूप उसे भी प्राप्त कर लेने की शक्ति है। प्राप्ति–सिद्धि के प्रतिष्ठित होने पर साधक को इच्छित–वांछित पदार्थ स्वतः मिल जाता है। श्रीसीताजी के अन्वेषणक्रम में अनेकों वानर–भालू भी चारों दिशाओं में भेजे गए थे, उनमें मारुतिनंदन अद्वितीय थे। इनमें एकमात्र निष्कपट और भक्तिपूर्ण वांछा थी, भक्ति स्वरूपा सीता माता के दर्शन की। परिणामतः लंका में पहुँचने के कुछ ही क्षणोपरान्त अशोक वाटिका में जनकनन्दिनी माताजी का दर्शन इन्हें प्राप्त हुआ और ये कृतकृत्य हो गए।

अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ बिख्याता।। (5/17/6)

त्रिजटा ने अपने स्वप्न की जो बात सीताजी को बताई कि–**'सपनें बानर लंका जारी।' (5/11/3),** यह बात हनुमानजी भी अशोक वृक्ष के ऊपर बैठकर सुन रहे थे, परन्तु यहाँ लंका जलाने की कोई सामग्री, घी, तेल, वस्त्र, रुई आदि तो है नहीं, फिर लंका जलेगी कैसे? इस सिद्धि ने श्रीमारुतिनंदन की लंका को जलाने की इच्छा पूरी की। सरस्वतीजी ने रावण की जिह्वा पर बैठकर बोल दिया कि बंदर की पूँछ में आग लगा दो। इस तथ्य को स्वयं हनुमानजी ने प्रकट किया, यथा–

भइ सहाय सारद मैं जाना।। (5/25/3)

6. प्राकाम्यः– इस सिद्धि में भी इच्छाओं को पूर्ण करने की शक्ति है। इसकी प्रतिष्ठा होने पर साधक जिस वस्तु की इच्छा करता है, वह उसे अचिर उपलब्ध हो जाती है। भक्त हनुमानजी की आन्तरिक आकांक्षा श्रीरामजी की अनपायिनी भक्ति की उपलब्धि थी और तदनुसार सर्वान्तर्यामी भगवान श्रीराम ने भक्तवर को वह वर देकर भी अपने को पूर्ण कृतार्थ नहीं समझा, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं।। (5/32/7)

नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी।।

सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी। एवमस्तु तब कहेउ भवानी।। (5/34/1–2)

इस प्रकार प्राकाम्य सिद्धि ने उनकी अनपायिनी भक्ति की चाहत सहज ही पूर्ण कर दी।

7. ईशित्वः– इस सिद्धि में ईश्वर के समान नियंत्रण रखने की शक्ति होती है। इसका दो प्रकार से वर्णन मिलता है।

(क) **ईश्वर रूप से पूजित होनाः** पाताल लोक में अहिरावण द्वारा हनुमानजी की पूजा की गई थी। उस समय हनुमानजी ने नरसिंह, गरुड़, वराह और हयग्रीव के चेहरे को

प्राप्त करते हुए पंचमुखी हनुमान का रूप धारण किया था। हनुमान त्रसरेणु के समान छोटा रूप धारण करके देवालय में घुस गए तथा अन्दर जाकर चुपचाप खड़े हो गए। उसी समय मारुतिनंदन ने भीतर से देवी के जैसा स्वर बनाकर कहा, आज तुम लोग झरोखे से ही मेरी पूजा कर लो, यथा–

ततस्तौ पूजनं दैत्यौ गवाक्षेणैव चक्रतुः।
पक्वान्नपायसादीनां राशींस्तौ प्रमुमोचतुः।।

(अध्यात्म रामायण, सारकाण्ड 11/99)

अहिरावण तथा महिरावण दोनों दैत्यों ने समझ लिया कि आज देवी भलीभाँति हम पर प्रसन्न हुई है। दोनों ने गवाक्षमार्ग से ही देवी (हनुमानजी) का पूजन किया। बताशे, मिठाई, मालपुए तथा खीर आदि भी भीतर डाल दिया। इस प्रकार से इस सिद्धि ने हुनमानजी का ईश्वर की तरह पूजन कराया।

(ख) **साधक को सभी पर शासन करने योग्य बनानाः** इस सिद्धि को प्राप्त करने पर साधक सब पर शासन करने के योग्य हो सकता है। हनुमानजी भगवान श्रीराम की वानर–भालुओं की सेना का सम्यक् संचालन करने वाले सफल सेनानायक थे और साथ ही परम भक्त भी। अतः 'ईशित्व'–सिद्धि का भी प्रतिष्ठित रूप महावीर हनुमानजी में साक्षात् दृष्टिगोचर होता है। इसके 2 उदाहरण इस प्रकार से हैं –

(1) सीताजी की खोज में द्विविद, मयंद, नील, नल, अंगद और जाम्बवंत जैसे परम सुभटों के बाद भी स्वयंप्रभा की गुफा में प्रवेश करने का साहस किसी ने नहीं किया। तब जो सबसे पीछे थे, वे हनुमानजी ही सबके लिए सहायक सिद्ध हुए और सभी ने–

आगें कै हनुमंतहि लीन्हा। पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा।। (4/24/8)

(2) जब रावण की सभा में श्रीहनुमानजी पहुँचे तो उन्होंने देखा –

दसमुख सभा दीखि कपि जाई। कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई।।
कर जोरें सुर दिसिप बिनीता। भुकृटि बिलोकत सकल सभीता।।
देखि प्रताप न कपि मन संका। जिमि अहिगन महुँ गरुड़ असंका।। (5/20/6–8)

इस प्रकार ईशित्व सिद्धि ने उनको निर्भीक बनाकर सभी पर शासन करने योग्य बना दिया।

8. वशित्वः– इस सिद्धि के प्रतिष्ठित हो जाने पर व्यक्ति में आत्म–जयित्व स्वतः सिद्ध हो जाता है। श्रीहनुमानजी अखण्ड ब्रह्मचारी एवं पूर्ण जितेन्द्रिय हैं, अतः अतुलित बलधामता उनमें निरंतर विद्यमान रहती है।

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।

वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।। (रामरक्षास्तोत्र 33)

श्रीहनुमानजी को यह सिद्धि प्राप्त थी, अतः उन्होंने परब्रह्म परमात्मा श्रीरामजी को अपने वश में करके रखा, श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)

आज भी जहाँ–जहाँ श्रीरघुनाथ की कथा–कीर्तन का आयोजन होता है, श्रीहनुमानजी वहाँ उपस्थित हो भाव विभोर होकर कथा–कीर्तन श्रवण करते हैं, यथा–

यत्र यत्र रघुनाथ कीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम्।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्।।

राम–स्मरण

राम के नाम में मुक्ति का स्रोत है, राम–नाम जपना निश्चित मोक्ष है।
राम स्व नाम को सार्थक कर रहे, राम का नाम अपने में सर्वोच्च है।।

राम की शक्ति में वृद्धि हर ओर है, राम की भक्ति में सिद्धि का जोर है।
राम की कीर्ति अनुपम अमित रूप में, राम की नीति कल्याण का छोर है।।

राम का राज्य उत्कृष्ट आदर्श है, राम का कार्य उत्तम अनासक्त है।
राम भ्राता, तनय, मित्र, पति भी हैं, राम का भाव अपनत्व से व्यक्त है।।

राम में चित्त लगना, शुद्धता की परख, राम में रम्यता, मुग्धता की चरम।
राम से भी बड़ा नाम है राम का, राम–नाम से मित्रता, भव रुग्णता ही खतम।।

राम का वन–गमन और वन में भ्रमण, राम का बाण–धनु, दुष्टता का हनन।
राम का स्मरण, ऋषि मुनि का हवन, राम का संचरण, शिष्टता का मनन।।

राम का नाम सबका खजाना बना, राम का नाम सबका सुहावना बना।
राम ही राम जीवन के हर क्षेत्र में, राम को जप कर जीवन सयाना बना।।

राम का ध्यान करना, परम धाम है, राम का नाम भजना, सरल काम है।
राम से हो विमुख, जीव सुख से परे, राम सुख राशि हैं, राम सुख धाम हैं।।

राम एकात्म हैं, राम साकार हैं राम ही आत्मा, राम आधार हैं।
राम निर्गुण–सगुण बुद्धि से परे, राम सर्वांग सुन्दर गुणागार हैं।।

राम सुंदर हैं, राम कोमल हैं, राम उद्भव हैं, राम ओझल भी हैं।
राम–नाम महिमा से भरपूर आनन्दघन, राम संयम भी हैं, राम पोषक भी हैं।।

राम तारक हैं, राम धारक हैं, राम नर रूप धारी नारायण ही हैं।
राम का नाम भज भव सागर तरे, राम भवसागर नाव के चालक भी हैं।।

प्रस्तुतिः राम किंकर सिंह

बताओ तब क्या होगा?

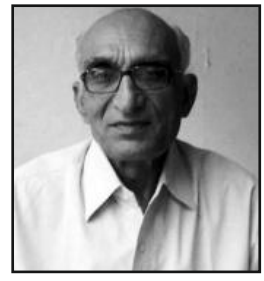

पं. राधा कृष्ण पाठक (अतीत), भांडेर, दतिया (म.प्र.), फोनः 8770436182

नीम की छाँव में, अपने गाँव में, बिछौने पर सोने वाले,
ऐ.सी. के नीचे, नकली बिछौनों पर भी करवटें बदल रहे हैं,
बताओ तब क्या होगा? ।। 1।।

सीमित साधनों के सहारे, आदतों के मारे, दबे जा रहे कर्ज में,
बताओ तब क्या होगा? ।। 2।।

न स्वयं सीखा न सिखाया संतानों को, दे रहे हैं दोष दूसरों को,
बताओ तब क्या होगा? ।। 3।।

थोड़ा तो समय के साथ, भयाभय भविष्य के लिए, सहनशक्ति बढ़ायें,
वरना पछतावे की आग में जल जाओगे,
बताओ तब क्या होगा? ।। 4।।

प्रज्ञा बुद्धि मिली है, व्यवहार में लाओ,
ऋषि मुनियों की परंपराओं को अभ्यास में लाओ,
बचा लो प्रकृति को, पर्यावरण बिगड़ जाएगा,
बताओ तब क्या होगा? ।। 5।।

बारूद के ढेर पर सजे सपने, हो रहे नेस्तनाबूद,
दिखता अब भी नहीं,
बताओ तब क्या होगा? ।। 6।।

इतनी समझ मुझ में कहाँ, न जाने कौन लिखवाता है,
मानव कल्याण का रास्ता भी वही दिखाता है।
यदि उसी को भूल जाओगे,
बताओ तब क्या होगा? ।। 7।।

मूँदकर आँखों को बैठे हम, कौन आएगा बचाने तब,
जब तुम्हारी चीख को सुनने वाला न कोई होगा,
बताओ तब क्या होगा? ।। 8।।

पाकर देव–दुर्लभ मानव तन, न किया भजन न दान–पुण्य,
गवाँया भोग–विलास में सारा जीवन,
आ जाएँगे अंत समय जम के दूत जब,
बताओ तब क्या होगा? ।। 9।।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

स्थानीय कार्यालय : ए–447, सेक्टर–47, नोएडा–201 301

दूरभाष : 0120–3274619, 9811056467

वित्तीय वर्ष 2024–25 का आय–व्यय विवरण (राशि भारतीय रुपयों में)

क्र0 सं0	आय विवरण	2023–24	2024–25	क्र0 सं0	व्यय विवरण	2023–24	2024–25
1)	वर्ष के प्रथम दिन की स्थिति			1)	स्मारिका छपाई व्यय	58,543.00	92,568.00
	क) मियादी जमा खाता	2,30,000.00	4,10,000.00				
	ख) बैंक में चालू खाता	2,02,335.07	43,744.91				
	ग) नकद राशि	12,372.00	13,105.80				
2)	स्मारिका में विज्ञापन से प्राप्त राशि	54,900.00	51,000.00	2)	कुल आयकर भुगतान	3,501.00	3,788.00
3)	दान/आरती–मानस पाठ एवं सदस्यता शुल्क से प्राप्त राशि	1,07,128.00	1,80,136.00	3)	श्रीरामनवमी उत्सव एवं श्रीराम कथा आयोजन पर व्यय	39,100.00	1,10,774.00
4)	अन्य प्राप्तियाँ, आयकर रिफण्ड, बैंक ब्याज आदि	–	8,749.00	4)	टेलीफोन बिलों का भुगतान	9,738.36	3,662.00
5)	आयकर वापसी आवेदित (Applied for)	–	–	5)	विविध व्यय (बैंक चार्ज, डाक खर्च, वैबसाइट रखरखाव, संदेशवाहक पर खर्च आदि)	29,002.00	9,769.00
6)	प्रतिभूति वापसी (Security Refund)	–	–	6)	दान (Charity)	–	11,000.00
				7)	प्रतिभूति जमा	–	–
				8)	वर्ष के अंतिम दिन की स्थिति		
					क) मियादी जमा खाता	4,10,000.00	4,42,000.00
					ख) बैंक में चालू खाता	43.744.91	14,031.91
					ग) नकद राशि	13,105.80	19,142.80
	कुल योग	**6,06,735.07**	**7,06,735.71**		**कुल योग**	**6,06,735.07**	**7,06,735.71**

श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र

श्रीरामचरितमानस एक महाकाव्य ही नहीं, बल्कि अखिलब्रह्माण्डनायक भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे आदि सशक्त मंत्रों का संकलन है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे, सोरठे सभी सरल मंत्र हैं। संस्कृत के मंत्र कठिन होते हैं, इससे हर एक को उनके उच्चारण में सुगमता नहीं होती, इसलिये जापक का मन उनमें पूरा नहीं लगता। साबर–मंत्र रूखे और कठिन शब्दावली से भरे होते हैं। उनमें भी मन नहीं लगता, परन्तु श्रीरामचरितमानस के ये मंत्र सरल, सरस और सार्थक हैं। जापक इनमें तन्मय हो जाता है। इच्छाशक्ति तल्लीन हो जाती है। इससे मनवांछित फल शीघ्र प्राप्त होता है।

रक्षा–रेखा :

मन्त्र सिद्ध करने के लिये या किसी संकटपूर्ण जगह पर रात्रि व्यतीत करने के लिये अपने चारों ओर रक्षा की रेखा खींच लेनी चाहिए। लक्ष्मणजी ने सीताजी की कुटी के आसपास जो रक्षा रेखा खींची थी, उसी लक्ष्य पर निम्नांकित रक्षा–मन्त्र बनाया गया है। इसे एक सौ आठ आहुति द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिए।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक।। (6/115/छंद)

इन मंत्रों को सिद्ध करके उनका जप करना अथवा मानस पाठ करते समय दोहा/सोरठा एवं चौपाइयों के बीच संपुट लगाने से इष्ट फल की अवश्य ही प्राप्ति होती है। मंत्र सिद्ध करने के लिए उपयुक्त मुहूर्त में रात्रि 10 बजे के बाद अष्टांग हवन सामग्री से इष्ट चौपाई अथवा दोहा/सोरठा से 108 आहुतियाँ देनी चाहिए। अष्टांग हवन सामग्री में चन्दन का बुरादा, तिल, शुद्ध घी, शक्कर, अगर, तगर, कपूर, शुद्ध केशर, नागर **मोथा**, पंच मेवा, जौ और चावल आते हैं। एक दिन हवन करने से मंत्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मंत्र (दोहा/चौपाई आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिए, पर किसी भी स्थिति में 21 बार से कम जप न हो, इसका ध्यान रखें। सामान्यतया सवा लाख जप किया जाता है, पर इससे पहले ही यदि कार्य सिद्ध हो जाए तब भी अनुष्ठान पूरा करना चाहिए और जीवन पर्यन्त उस मंत्र को रोज स्मरण कर लेना चाहिए, ताकि मंत्र सिद्ध रहे।

इस सम्बन्ध में निम्नांकित नियम महत्त्वपूर्ण हैं :

1. पूर्ण श्रद्धा–विश्वास एवं समर्पण भाव से जप करें।
2. वाराणसी में भगवान शंकरजी ने मानस की चौपाइयों को मन्त्र शक्ति प्रदान की है, इसलिये वाराणसी की ओर मुख करके शंकरजी को साक्षी मानकर श्रद्धा से जप करना चाहिये।
3. जिस उद्देश्य के लिये जो चौपाई, दोहा या सोरठा जप करना बताया गया है, उसको सिद्ध करने के लिये अष्टांग हवन की सामग्री से उसी चौपाई, दोहे या सोरठे के द्वारा 108 आहुतियाँ देनी चाहिये। यह हवन केवल एक ही दिन करना है। शुद्ध मिट्टी की वेदी बनाकर उस पर

अग्नि स्थापित करके उसमें आहुति देनी चाहिये। प्रत्येक आहुति के साथ चौपाई, दोहा, सोरठा आदि के अन्त में 'स्वाहा' बोलना चाहिये।

4. प्रत्येक आहुति लगभग 10 ग्राम की (सब चीजें मिलाकर) होनी चाहिये। इस हिसाब से 108 आहुति के लिये लगभग एक किलोग्राम सामग्री सब चीजें मिलाकर बना लेनी चाहिये। कोई चीज कम–ज्यादा हो तो कुछ आपत्ति नहीं। पंचमेवा में पिस्ता, बादाम, किशमिश (द्राक्षा), अखरोट और काजू ले सकते हैं। इनमें से कोई चीज न मिले तो उसके बदले में मिस्री मिला सकते हैं। केसर शुद्ध 3 ग्राम ही डालने से काम चल जायेगा, अधिक की आवश्यकता नहीं है।

5. हवन करते समय माला रखने की आवश्यकता एक सौ आठ की संख्या गिनने भर के लिये है। माला रखने में असुविधा हो तो गेहूँ, जौ या चावल आदि के 108 दाने रखकर उनसे गिनती की जा सकती है। करमाला का भी उपयोग कर सकते हैं।

6. बैठने के लिये आसन ऊन का अथवा कुशा का होना चाहिये।

7. मन्त्र सिद्ध करने के लिये यदि लंकाकाण्ड की चौपाई या दोहा हो तो उसका हवन शनिवार को करना चाहिये। दूसरे काण्डों के चौपाई–दोहे किसी भी दिन उपयुक्त मुहूर्त में हवन करके सिद्ध किये जा सकते हैं।

8. एक दिन हवन करने से ही मन्त्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मन्त्र (चौपाई–दोहे आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को, जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिये, अधिक कर सकें तो अधिक उत्तम। आप चाहें तो नियमित जप के अलावा भी दिनभर चलते–फिरते हुए उस चौपाई या दोहे का जप कर सकते हैं। जितना अधिक जप हो, उतना ही उत्तम है।

9. कोई दो तीन कार्यों के लिये दो तीन मन्त्रों का अनुष्ठान एक साथ करना चाहें तो कर सकते हैं, पर उन मन्त्रों को पहले अलग–अलग हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये। हवन के द्वारा एक ही दिन में दो या तीन मंत्रों को सिद्ध कर सकते हैं।

10. स्त्रियाँ भी इस अनुष्ठान को कर सकती हैं, परन्तु रजस्वला होने की स्थिति में मानसिक जप किया जा सकता है, पर इस अवस्था में हवन नहीं करना चाहिये।

11. जप करते समय मन में यह विश्वास अवश्य रखना चाहिये कि भगवान श्रीसीताराम की अहैतुकी कृपा से मेरा कार्य अवश्य सफल होगा। विश्वासपूर्वक जप करने पर सफलता निश्चित रूप से प्राप्त होगी।

12. अधिकांश मंत्र तथा उपर्युक्त नियम कल्याण के मासिक अंकों से लिए गए हैं।

13. जप करते समय यदि निम्नांकित बिन्दुओं का पालन करें तो सफलता शीघ्रता से प्राप्त होगी

(क) जप सूर्योदय से पूर्व करें।
(ख) पूर्व की ओर अथवा वाराणसी की ओर मुँह करके जप करें।
(ग) ऊन के आसन पर बैठें।

(घ) अपने सामने श्रीरामदरबार का चित्र रखें। एक लोटा जल अपने बाईं ओर रखें जिसे जप के पश्चात् किसी पौधे में डाल दें या सूर्य को अर्घ्य दें।

(ङ) अपने दाईं ओर घी का दीपक जलाकर रखें।

विभिन्न कामनाओं की प्राप्ति हेतु मानस के कुछ सिद्ध मंत्र इस प्रकार हैं–

1. असमंजस की स्थिति में परम कल्याण हेतु

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)

हे नाथ! जिस तरह मेरा हित हो, आप वही शीघ्र कीजिए। मैं आपका दास हूँ।

2. शरणागत होकर संकट निवारणार्थ

मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।। (1/132/2)

श्रीहरि के समान मेरा हितू भी कोई नहीं है, इसलिए इस समय वे ही मेरे सहायक हैं।

3. सर्व मंगल कामना हेतु

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)

मंगल के धाम, अमंगल के हरने वाले और श्रीदशरथ के आँगन में खेलने वाले वे (बालरूप) श्रीरामचन्द्रजी मुझ पर कृपा करें।

4. श्रेष्ठ भक्ति की कामना

अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/7)

हे नाथ! हे दीनदयालु! आपकी कृपा से अब मुझे कुछ नहीं चाहिए।

5. मानस का गायत्री मन्त्र

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।

ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।। (1/18/7–8)

राजा जनक की पुत्री, जगत की माता और करुणानिधान श्रीरामजी की प्रियतमा श्रीजानकीजी के दोनों चरण कमलों को मैं मनाता हूँ, जिनकी कृपा से निर्मल बुद्धि पाऊँ।

6. संकट नाश के लिए

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)

दीनों पर दया करना आपका विरद है (और मैं दीन हूँ), अतः उस विरद को याद करके, हे नाथ! मेरे भारी संकट को दूर कीजिए।

7. जीविका प्राप्ति के लिए

बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। (1/197/7)

जो संसार का भरण–पोषण करते हैं, उनका (आपके दूसरे पुत्र) नाम 'भरत' होगा।

8. लक्ष्मी प्राप्ति हेतु

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।

तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।। (1/294/2–3)

जैसे नदियाँ समुद्र में जाती हैं, यद्यपि समुद्र को नदी की कामना नहीं होती। वैसे ही सुख और सम्पत्ति बिना ही बुलाए स्वाभाविक ही धर्मात्मा पुरुष के पास जाती हैं।

9. शत्रुता नाश के लिए

बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई।। (7/20/8)

कोई किसी से वैर नहीं करता। श्रीरामचन्द्रजी के प्रताप से सबकी विषमता (आन्तरिक भेदभाव) मिट गए।

10. यात्रा की सफलता के लिए

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)

अयोध्यापुरी के राजा श्रीरघुनाथजी को हृदय में रखे हुए नगर में प्रवेश करके सब काम कीजिए।

11. परीक्षा में पास होने के लिए

जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कबि उर अजिर नचावहिं बानी।। (1/105/6)

मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)

अपना भक्त जानकर जिस कवि पर वे कृपा करते हैं, उसके हृदयरूपी आँगन में सरस्वती को वे नचाया करते हैं। वे (श्रीरामजी) मेरी (बिगड़ी) सब तरह से सुधार लेंगे, जिनकी कृपा, कृपा करने से नहीं अघाती।

12. विद्या प्राप्ति के लिए

गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई।। (1/204/4)

श्रीरघुनाथजी (भाइयों सहित) गुरु के घर में विद्या पढ़ने गए और थोड़े ही समय में सब विद्याएँ आ गयीं।

13. आपसी सद्भाव (प्रेम) बढ़ाने के लिए

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)

सब मनुष्य परस्पर प्रेम करते हैं और वेदों में बतायी हुई नीति (मर्यादा) में तत्पर रहकर अपने–अपने धर्म का पालन करते हैं।

14. विविध रोगों एवं उपद्रवों की शांति के लिए

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)

राज राज्य में दैहिक, दैविक और भौतिक ताप किसी को नहीं व्यापते।

15. ईश्वर से अपराध क्षमा कराने के लिए

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।। **(1/285/6)**

मैंने अनजाने में आपको बहुत से अनुचित वचन कहे। हे क्षमा के मंदिर दोनों भाई! मुझे क्षमा कीजिए।

16. मन पसन्द वर की प्राप्ति हेतु

सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।। **(1/236/7)**

हे सीता! हमारी सच्ची आशीष सुनो, तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

17. मन पसन्द वधू की प्राप्ति हेतु

सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।। **(1/237/4)**

मुनि ने दोनों भाइयों को आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे मनोरथ सफल हों। यह सुनकर श्रीराम–लक्ष्मण सुखी हुए।

18. अपने इष्ट की प्राप्ति हेतु

जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। **(1/259/6)**

जिसका जिस पर सच्चा स्नेह होता है, वह उसे मिलता ही है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

19. विपत्ति नाश हेतु

राजिवनयन धरें धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुखदायक।। **(1/18/10)**

कमल नयन, धनुष–बाणधारी, भक्तों की विपत्ति का नाश करने वाले और उन्हें सुख देने वाले चरण–कमलों की वंदना करता हूँ।

20. भूत–प्रेत भगाने हेतु

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।

जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। **(1/17)**

मैं पवनकुमार श्रीहनुमानजी को प्रणाम करता हूँ, जो दुष्टरूपी वन को भस्म करने के लिए अग्निरूप हैं, जो ज्ञान की घनमूर्ति हैं और जिनके हृदयरूपी भवन में धनुष–बाण धारण किए श्रीरामजी निवास करते हैं।

21. दरिद्रता नाश के लिए

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दबारि के।। **(1/32/8)**

शिवजी के पूज्य और प्रियतम अतिथि हैं और दरिद्रता रूपी दावानल को बुझाने के लिए कामना पूर्ण करने वाले मेघ हैं।

22. सन्तान प्राप्ति के लिए

दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद समाना।। **(1/193/3)**

प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।

सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान।। **(1/200)**

राजा दशरथजी पुत्र का जन्म कानों से सुनकर मानो ब्रह्मानन्द में समा गए। प्रेम में मग्न कौसल्याजी रात और दिन का बीतना नहीं जानती थीं। पुत्र के स्नेहवश माता उनके बाल चरित्रों का गान किया करतीं।

23. सुख सम्पत्ति प्राप्ति हेतु

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख सम्पति नाना बिधि पावहिं।। **(7/15/3)**

जो मनुष्य सकाम भाव से सुनते और जो गाते हैं, वे अनेक प्रकार के सुख और सम्पत्ति पाते हैं।

24. मुकदमा जीतने के लिए

पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। **(4/30/4)**

तुम पवन के पुत्र हो और बल में पवन के समान हो। तुम बुद्धि–विवेक और विज्ञान की खान हो।

25. शत्रु को मित्र बनाने हेतु

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। **(5/5/2)**

श्रीराम कृपा से उसके लिए विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्रता करने लगते हैं, समुद्र गाय के खुर के बराबर हो जाता है और अग्नि में शीतलता आ जाती है।

26. निन्दा निवृत्ति के लिए

रामकृपाँ अवरेब सुधारी। बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी।। **(2/317/3)**

श्रीरामजी की कृपा ने सारी उलझन सुधार दी। देवताओं की सेना जो लूटने आयी थी, वही गुणदायक (हितकारी) और रक्षक बन गयी।

27. विघ्न विनाश के लिए

सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपाँ बिलोकहिं जेही।। **(1/39/5)**

सारे विघ्न उसको नहीं व्यापते (बाधा नहीं देते) जिसे श्रीरामचन्द्रजी सुन्दर कृपा की दृष्टि से देखते हैं।

28. अकाल मृत्यु के निवारण हेतु

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।

लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।। **(5/30)**

हनुमानजी ने कहा–आपका नाम दिन–रात पहरा देने वाला है, आपका ध्यान ही किवाड़ है। नेत्रों को अपने चरणों में लगाए रहती हैं, यही ताला है, फिर प्राण जाएँ तो किस मार्ग से?

29. नजर झाड़ने के लिए

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी।। (1/198/5)

श्याम और गौर शरीर वाली दोनों सुन्दर जोड़ियों की शोभा देखकर माताएँ तृण तोड़ती हैं (जिसमें दीठ न लग जाए)।

30. खोयी हुई चीज पुनः प्राप्त करने के लिए

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।। (1/13/7)

प्रभु श्रीरघुनाथजी गयी हुयी वस्तु को फिर प्राप्त कराने वाले, गरीब निवास (दीनबन्धु), सरल स्वभाव, सर्वशक्तिमान और सबके स्वामी हैं।

31. ऋद्धि–सिद्धि प्राप्त करने के लिए

साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।। (1/22/4)

साधक लौ लगाकर नाम का जप करते हैं और अणिमादि (आठों) सिद्धियों को पाकर सिद्ध हो जाते हैं।

32. उत्सव के अवसर प्राप्त करने के लिए

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु।। (1/361)

श्रीसीताजी और श्रीरघुनाथजी के विवाह–प्रसंगों को जो लोग प्रेमपूर्वक गाएँगे–सुनेंगे, उनके लिए सदा उत्साह (आनन्द) ही उत्साह है, क्योंकि श्रीरामचन्द्रजी का यश मंगलधाम है।

33. मंगलमय विदेश यात्रा हेतु

चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई। चले हृदयँ अवधहिं सिरु नाई।। (2/83/2)

सीताजी सहित दोनों भाई रथ पर चढ़कर हृदय से अयोध्या को सिर नवाकर चले।

34. विरक्ति तथा श्रीसीताराम चरणों में प्रेम प्राप्ति के लिए

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति।। (2/326)

तुलसीदासजी कहते हैं–जो कोई भरतजी के चरित्र को नियम से आदरपूर्वक सुनेंगे, उनको अवश्य ही श्रीसीतारामजी के चरणों में प्रेम होगा और सांसारिक विषय–रस से वैराग्य होगा।

35. ज्ञान प्राप्ति के लिए

छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।। (4/11/4)

पृथ्वी, अग्नि, जल, आकाश और वायु इन पाँचों तत्त्वों से यह अत्यंत अधम शरीर रचा है।

36. भक्ति की प्राप्ति के लिए

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।

सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम।। **(7/84 ख)**

हे भक्तों के (मन–इच्छित फल देने वाले) कल्प वृक्ष! हे शरणागत के हितकारी! हे कृपासागर! हे सुखधाम श्रीरामजी! दया करके मुझे अपनी वही भक्ति दीजिए।

37. श्रीहनुमानजी को प्रसन्न करने के लिए

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। **(1/26/6)**

हनुमानजी ने पवित्र नाम का स्मरण करके श्रीरामजी को अपने वश में कर रखा है।

38. श्रीसीतारामजी के दर्शन के लिए

नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।। **(1/146)**

भगवान के नीले कमल, नीलमणि और नीले (जलयुक्त) मेघ के समान (कोमल प्रकाशमय और सरस) श्यामवर्ण (चिन्मय) शरीर की शोभा देखकर करोड़ों कामदेव भी लजा जाते हैं।

39. सहज स्वरूप दर्शन के लिए

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।। **(1/146/8)**

भक्तवत्सल, कृपानिधान, सम्पूर्ण विश्व के निवास स्थान (या समस्त विश्व में व्यापक), सर्वसमर्थ भवान प्रकट हो गए।

40. भगवत्स्मरण करते हुए आराम से शरीर त्याग करने के लिए

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।। **(4/10)**

श्रीरामजी के चरणों में दृढ़ प्रीति करके बालि ने शरीर को वैसे ही (आसानी से) त्याग दिया जैसे हाथी अपने गले से फूलों की माला का गिरना न जाने।

41. संशय निवृत्ति के लिए

रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। **(1/114/1)**

श्रीरामचन्द्रजी की कथा हाथ की सुन्दर ताली है, जो संदेह रूपी पक्षियों को उड़ा देती है।

42. प्रभु–प्रेम में निरन्तर वृद्धि के लिए

सीता रामचरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। **(2/205/2)**

श्रीसीतारामजी के चरणों में मेरा प्रेम आपकी कृपा से दिन–दिन बढ़ता ही रहे।

43. सुखद एवं ऐश्वर्यपूर्ण यात्रा के लिए

चलत बिमान कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई। **(6/119/3)**

विमान से चलते समय बड़ा शोर हो रहा है। सभी श्रीरघुवीर की जय कह रहे हैं।

जब जीव कीर्ति व तन से ऊपर उठ जाता है, तब होता है 'कीर्तन'

श्रीरामशलाका–प्रश्नावली

मानसानुरागी महानुभावों को श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का विशेष परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती, उसकी महत्ता एवं उपयोगिता से प्रायः सभी मानस प्रेमी परिचित होंगे। अतः नीचे उसका स्वरूपमात्र अंकित करके उससे प्रश्नोत्तर निकालने की विधि तथा उसके उत्तर–फलों का उल्लेख कर दिया जाता हैं। श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का स्वरूप इस प्रकार है–

सु	प्र	उ	बि	हो	मु	ग	ब	सु	नु	बि	घ	धि	इ	द
र	रु	फ	सि	सि	रहिं	बस	ही	मं	ल	न	ल	य	न	अं
सुज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	इ	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	रा	य
पु	सु	थ	सी	जे	इ	ग	म*	सं	क	रे	हो	स	स	नि
त	र	त	र	स	हुँ	ह	ब	ब	प	चि	स	हिं	स	तु
म	का	ा	र	र	म	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	ा
ता	रा	रे	री	ह्व	का	फ	खा	जू	ई	र	रा	पू	द	ल
नि	को	जो	गो	न	मु	जि	यँ	ने	मनि	क	ज	प	स	ल
हि	रा	मि	स	रि	ग	द	न्मु	ख	म	खि	जि	म	त	जं
सिं	ख	नु	न	को	मि	निज	र्क	ग	धु	ध	सु	का	स	र
गु	ब	म	अ	रि	नि	म	ल	ा	न	ढ़	ती	न	क	भ
ना	पु	व	अ	ा	र	ल	ा	ए	तु	र	न	नु	वै	थ
सि	हुँ	सु	म्ह	रा	र	स	स	र	त	न	ख	ा	ज	ा
र	ा	ा	ला	धी	ा	री	ा	हू	हीं	खा	जू	ई	रा	रे

इस रामशलाका–प्रश्नावली के द्वारा जिस किसी को जब कभी अपने अभीष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम उस व्यक्ति को भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान करना चाहिये।

तदनन्तर श्रद्धा–विश्वास पूर्वक मन से अभीष्ट प्रश्न का चिन्तन करते हुए प्रश्नावली के मनचाहे कोष्ठक में अंगुली या कोई शलाका रख देनी चाहिये और उस कोष्ठक में जो अक्षर हो उसे अलग किसी कोरे कागज या स्लेट पर लिख लेना चाहिये। प्रश्नावली के कोष्ठक पर भी ऐसा कोई निशान लगा देना चाहिये जिससे न तो प्रश्नावली गंदी हो और न प्रश्नोत्तर प्राप्त होने तक वह कोष्ठक भूल जाये। यह ध्यान रखें कि यदि शलाका किसी अक्षर में न पड़े और कोष्ठक की लाइन पर पड़े तो कुछ समय बाद प्रश्न का उत्तर खोजें। उस समय शलाका न रखें। अब जिस कोष्ठक का अक्षर लिख लिया गया है, उससे आगे बढ़ना चाहिये तथा उसके नवें कोष्ठक में जो अक्षर पड़े, उसे भी लिख लेना चाहिये। इस प्रकार प्रति नवें अक्षर को क्रम से लिखते जाना चाहिये और तब तक लिखते जाना चाहिये, जब तक उसी पहले कोष्ठक के अक्षर तक अंगुली अथवा शलाका न पहुँच जाये। पहले कोष्ठक का अक्षर जिस कोष्ठक के अक्षर से नवाँ पड़ेगा, वहाँ तक पहुँचते–पहुँचते एक चौपाई पूरी हो जायेगी, ये प्रश्नकर्ता के अभीष्ट प्रश्न का उत्तर होगा। यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि किसी–किसी कोष्ठक में केवल 'आ' की मात्रा (ा) और किसी–किसी कोष्ठक में दो–दो अक्षर हैं। अतः गिनते समय न तो मात्रा वाले कोष्ठक को छोड़ देना चाहिये और न दो अक्षरों वाले कोष्ठक को दो बार गिनना चाहिये। जहाँ मात्रा का कोष्ठक आवे, वहाँ पूर्वलिखित अक्षर के आगे मात्रा लिख लेना चाहिये और जहाँ दो अक्षरों वाला कोष्ठक आवे, वहाँ दोनों अक्षर एक साथ लिख लेना चाहिये।

अब उदाहरण के तौर पर इस रामशलाका प्रश्नावली से किसी प्रश्न के उत्तर में एक चौपाई निकाल दी जाती है। पाठक ध्यान से देखें। किसी ने भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान और अपने प्रश्न का चिन्तन करते हुए यदि प्रश्नावली के * इस चिह्न से संयुक्त 'म' वाले कोष्ठक में अँगुली या शलाका रखी और वह ऊपर बताये क्रम के अनुसार अक्षरों को गिन–गिनकर लिखता गया तो उत्तर स्वरूप निम्नांकित चौपाई बन जायेगी–

हो इ है सो ई जो रा म * र चि रा खा । को क रि त र क ब ढ़ा व हिं सा षा ।।

यह चौपाई बालकाण्डान्तर्गत शिव और पार्वती के संवाद में है। प्रश्नकर्ता को इस उत्तर स्वरूप चौपाई से यह आशय निकालना चाहिये कि कार्य होने में संदेह है, अतः उसे भगवान् पर छोड़ देना श्रेयष्कर है।

1. सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में श्री सीताजी के गौरीपूजन के प्रसंग में है। गौरी जी ने श्रीसीता जी को आशीर्वाद दिया है।

फल– प्रश्नकर्ता का प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा।

2. प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।।

स्थान– यह चौपाई सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– भगवान का स्मरण करके कार्यारम्भ करो, सफलता मिलेगी।

3. उधरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड के आरम्भ में सत्संग वर्णन के प्रसंग में है।

फल– इस कार्य में भलाई नहीं है। कार्य की सफलता में संदेह है।

4. बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।

स्थान– यह चौपाई भी बालकाण्ड के आरम्भ में ही सत्संग वर्णन के प्रसंग की है।

फल– खोटे मनुष्यों का संग छोड़ दो। कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

5. मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में संत–समाज रूपी तीर्थ के वर्णन में है।

फल– प्रश्न उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

6. गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।

स्थान– यह चौपाई श्रीहनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– प्रश्न बहुत श्रेष्ठ है। कार्य सफल होगा।

7. बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा।।

स्थान– यह चौपाई लंकाकाण्ड में रावण की मृत्यु के पश्चात् मन्दोदरी के विलाप के प्रसंग में है।

फल–कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

8. सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में पुष्प वाटिका से पुष्प लाने पर विश्वामित्रजी का आशीर्वाद है।

फल– प्रश्न बहुत उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

इस प्रकार रामशलाका–प्रश्नावली से कुल नौ चौपाइयाँ बनती हैं; जिनमें सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तराशय संन्निहित हैं।

अहंकार में तीनों गए धन, वैभव और वंश

विश्वास न हो तो देख लें कथा रावण, कौरव और कंस।

संस्कार ही अपराध रोक सकते हैं, सरकार नहीं।

विक्रम संवत् 2083 (सन् 2026–27) की प्रमुख तिथियाँ : एक दृष्टि में

मास / पक्ष	गणेशचतुर्थी	एकादशीव्रत (स्मार्त)	प्रदोषव्रत	मास शिवरात्रि	अमावस्या	व्रत की पूर्णिमा	संक्रान्ति
चैत्र शुक्ल		29.03.26	30.03.26			01.04.26	
वैशाख कृष्ण	05.04.26	13.04.26	15.04.26	15.04.26	17.04.26		14.04.26
वैशाख शुक्ल		27.04.26	29.04.26			01.05.26	
ज्येष्ठ कृष्ण	05.05.26	13.05.26	14.05.26	15.05.26	16.05.26		15.05.26
ज्येष्ठ शुक्ल		27.05.26	28.05.26			30.05.26	
ज्येष्ठ कृष्ण (द्वि0)	04.06.26	11.06.26	12.06.26	13.06.26	15.06.26		15.06.26
ज्येष्ठ शुक्ल		25.06.26	27.06.26			29.06.26	
आषाढ़ कृष्ण	03.07.26	10.07.26	12.07.26	12.07.26	14.07.26		
आषाढ़ शुक्ल		25.07.26	26.07.26			29.07.26	16.07.26
श्रावण कृष्ण	02.08.26	09.08.26	10.08.26	11.08.26	12.08.26		
श्रावण शुक्ल	16.08.26	23.08.26	25.08.26			27.08.26	17.08.26
भाद्रपद कृष्ण	31.08.26	07.09.26	08.09.26	09.09.26	11.09.26		
भाद्रपद शुक्ल	14.09.26	22.09.26	24.09.26			26.09.26	17.09.26
आश्विन कृष्ण	29.09.26	06.10.26	08.10.26	08.10.26	10.10.26		
आश्विन शुक्ल		22.10.26	23.10.26			25.10.26	17.10.26
कार्तिक कृष्ण	29.10.26	05.11.26	06.11.26	07.11.26	09.11.26		
कार्तिक शुक्ल		20.11.26	22.11.26			24.11.26	16.11.26
मार्गशीर्ष कृष्ण	27.11.26	04.12.26	06.12.26	07.12.26	08.12.26		
मार्गशीर्ष शुक्ल	13.12.26	20.12.26	21.12.26			23.12.26	16.12.26
पौष कृष्ण	26.12.26	03.01.27	05.01.27	05.01.27	07.01.27		
पौष शुक्ल		19.01.27	20.01.27			22.01.27	14.01.27
माघ कृष्ण	25.01.27	02.02.27	03.02.27	04.02.27	06.02.27		
माघ शुक्ल	10.02.27	17.02.27	18.02.27			20.02.27	13.02.27
फाल्गुन कृष्ण	24.02.27	04.03.27	05.03.27	06.03.27	08.03.27		
फाल्गुन शुक्ल		18.03.27	20.03.27			21.03.27	15.03.27
चैत्र कृष्ण	25.03.27	02.04.27	04.04.27	05.04.27	06.04.27		

विक्रम संवत् 2083 वर्ष के व्रत एवं त्योहारों की सूची

शुभ संवत् 2083 शाके 1948 राजा गुरु मन्त्री मंगल समय वास मालकार गृहे वाहन रोहिणी का निवास समुद्रः,रौद्र नाम संवत्सर

20 मार्च से 2 अप्रैल 2026 तक (चैत्रमासे शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	19.03.2026	प्रतिपदा का क्षय गुडी पड़वा नवरात्रारम्भ कलश स्थापना 6.52 उपरान्त गुडी पड़वा, गौतम जयन्ती
द्वितीया	शुक्रवार	20.03.2026	पंचक समाप्त 26.27, चन्द्रदर्शन सिंधारा 2, श्रीझूलेलाल जयन्ती
तृतीया	शनिवार	21.03.2026	गणगौरपूजन, श्रीमत्स्य जयंती, सरहुल (बिहार)
चतुर्थी	रविवार	22.03.2026	दमनक चतुर्थी व्रत
पंचमी	सोमवार	23.03.2026	श्रीपंचमी, श्रीरामजन्मोत्सवारंभ, शहीद दिवस, भक्त मीराबाई जयन्ती, ह्यव्रत पंचमी, पर्यूषणपर्व
षष्ठी	मंगलवार	24.03.2026	स्कन्दषष्ठी, यमुनाषष्ठी, रोहिणी व्रत
सप्तमी	बुधवार	25.03.2026	नवपदओलीप्रा. जैन,
अष्टमी	गुरुवार	26.03.2026	अशोकाष्टमी, श्रीदुर्गाष्टमी व्रत, श्रीरामनवमीव्रतोत्सव, मेला मनसादेवी, अन्नपूर्णा पूजा
नवमी	शुक्रवार	27.03.2026	नवरात्रसमाप्त, श्रीरामचरितमानस जयन्ती
दशमी	शनिवार	28.03.2026	धर्मराजदशमी
एकादशी	रविवार	29.03.2026	कामदाएकादशीव्रतसर्वे, लक्ष्मीकान्तडोलोत्सव, फूलडोल ग्यारस
द्वादशी	सोमवार	30.03.2026	श्रीविष्णुद्वादशी, हरिदमनोत्सव, प्रदोषव्रत, अनंगत्रयोदशी
त्रयोदशी	मंगलवार	31.03.2026	श्रीमहावीर जयन्ती जैन
चतुर्दशी	बुधवार	01.04.2026	सत्यव्रत, श्रीशिवदमनक चतुर्दशी, बालासुन्दरीदेवी मे.देवबंद
पूर्णिमा	गुरुवार	02.04.2026	ओली समाप्त, वैशाखस्नान प्रारम्भ, श्रीहनुमानजयंती, संतपीपाजयन्ती, सिद्धाचलयात्रा

03 अप्रैल से 17 अप्रैल 2026 तक (वैशाख कृष्ण पक्ष) वसंत ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	शुक्रवार	03.04.2026	गुड फ्राइडे
तृतीया	रविवार	05.04.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.54, ईस्टर सन्डे
पंचमी	मंगलवार	07.04.2026	गुरुतेगबहादुरजयंती, विश्व स्वास्थ्य दिवस
षष्ठी	बुधवार	08.04.2026	जलसंसाधनदिवस, रवियोग
सप्तमी	गुरुवार	09.04.2026	गुरुअर्जुनदेव जयंती, सौर्यदिवस
अष्टमी	शुक्रवार	10.04.2026	श्रीशीतलापूजा, बूढ़ाबसोड़ा कालाष्टमीव्रत, रेल सप्ताह प्रारम्भ
नवमी	शनिवार	11.04.2026	श्रीचण्डिकानवमी
दशमी	रविवार	12.04.2026	पंचम प्रारंभ 27.38
एकादशी	सोमवार	13.04.2026	वरूथिनीएकादशीव्रतस्मार्त
द्वादशी	मंगलवार	14.04.2026	वैशाखी पर्व, खरमास समाप्त, डॉ0 अम्बेडकर जयन्ती
त्रयोदशी	बुधवार	15.04.2026	प्रदोषव्रत, मासशिवरात्रिव्रत
अमावस्या	शुक्रवार	17.04.2026	पंचक समाप्त 12.01, देवपितृकार्येऽमापुण्यः, श्रीशुकदेवमुनिजयन्ती
18 अप्रैल से 01 मई 2026 तक (वैशाख शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	18.04.2026	देवदामोदरतिथि असम, पुरातत्त्वरक्षण दिवस, ऋषिपाराशर जयन्ती
द्वितीया	रविवार	19.04.2026	श्रीशिवाजी जयंती, श्रीपरशुराम जयन्ती, अक्ष्यतृतीया
तृतीया	सोमवार	20.04.2026	वर्षीतपपारण जैन, चन्दनयात्रा, रोहिणी व्रत
पंचमी	मंगलवार	21.04.2026	आदिशंकराचार्य जयन्ती, श्रीसूरदास जयन्ती
षष्ठी	बुधवार	22.04.2026	श्रीरामानुजाचार्य जयन्ती, वसुन्धरारक्षण दिवस
सप्तमी	गुरुवार	23.04.2026	श्रीगंगासप्तमी, बाबूकुंवरसिंह जयन्ती
अष्टमी	शुक्रवार	24.04.2026	देवीबगलामुखी जयन्ती
नवमी	शनिवार	25.04.2026	श्रीजानकीनवमी
दशमी	रविवार	26.04.2026	श्रीमहावीरकेवलज्ञान जैन, अगस्ततारा अस्त
एकादशी	सोमवार	27.04.2026	मोहिनीएकादशीव्रतसर्वे
त्रयोदशी	बुधवार	29.04.2026	प्रदोषव्रत, देवीछिन्नमस्ता जयन्ती
चतुर्दशी	गुरुवार	30.04.2026	श्रीनृसिंह जयंती, गुरुअमरदास जयंती
पूर्णिमा	शुक्रवार	01.05.2026	बुद्धजयन्ती, कूर्मजयंती, सत्यव्रत, बुद्धपूर्णिमा, श्रमिक दिवस

02 मई से 16 मई 2026 तक (प्रथम ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	02.05.2026	जिनवरव्रतारम्भ (जैन)
द्वितीया	रविवार	03.05.2026	श्रीनारद जयन्ती, वीणादान, वनविहार, सौरऊर्जादिवस
चतुर्थी	मंगलवार	05.05.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.30, बुढ़वामंगल
सप्तमी	शनिवार	09.05.2026	कालाष्टमीव्रत, कविटैगोरजयन्ती
अष्टमी	रविवार	10.05.2026	पंचक प्रारम्भ 12.06, मदर्सडे, संतदादूदयाल पुण्यः
एकादशी	बुधवार	13.05.2026	अपराएकादशीव्रत (सर्वे), एकता दिवस
द्वादशी	गुरुवार	14.05.2026	पंचक समाप्त 22.33, प्रदोषव्रत, सावित्रीव्रत प्रारम्भ
अमावस्या	शनिवार	16.05.2026	अन्वा देवपितृकार्ये, भावुका 30 सावित्रीव्रत, वट पूजन, श्रीशनिजयन्ती, डेंगूदिवस, फलाहारिणी कालिकापूजा

17 मई से 31 मई 2026 तक (प्रथम ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	17.05.2026	पुरुषोत्तम (अधिक) मासारम्भ, सौभाग्यसूचक, रोहिणी व्रत
द्वितीया	सोमवार	18.05.2026	चन्द्रदर्शन, बाबा जयगुरुदेव पुण्यः
दशमी	सोमवार	25.05.2026	श्रीगंगादशहरा, तपनकाल प्रारम्भ
एकादशी	बुधवार	27.05.2026	कमला पुरुषोत्तमा एकादशीव्रत (सर्वे) एकादशी सठियागई
द्वादशी	गुरूवार	28.05.2026	प्रदोषव्रत, वीरसावरकर जयंती
चतुर्दशी	शनिवार	30.05.2026	सत्यव्रत
पूर्णिमा	रविवार	31.05.2024	अन्वाधाम, स्नानादि उदयापूर्णिमा पुण्यः, तम्बाकूनिषेध दिवस

01 जून से 15 जून 2026 तक (द्वितीय ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
द्वितीया	मंगलवार	02.06.2026	बाबा बालकनाथ जयन्ती
चतुर्थी	गुरुवार	04.06.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.39
पंचमी	शुक्रवार	05.06.2026	विश्व पर्यावरण दिवस
षष्ठी	शनिवार	06.06.2026	पंचक प्रारम्भ 18.58
अष्टमी	सोमवार	08.06.2026	कालाष्टमी व्रत, वायुप्रवहणकाल
एकादशी	गुरुवार	11.06.2026	पंचक समाप्त 8.15, कमलापुरुषोत्तमाएकादशीव्रत
द्वादशी	शुक्रवार	12.06.2026	कमला पुरुषोत्तमा एकादशीव्रत, निम्बार्क, प्रदोषव्रत, बालश्रम निषेधदिवस
त्रयोदशी	शनिवार	13.06.2026	मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	रविवार	14.06.2026	अन्वा, सौभाग्य सूचक, रोहिणीव्रत, पितृकार्ये अमावस्या, रक्तदान दिवस
अमावस्या	सोमवार	15.06.2026	देवकार्ये अमावस्या, पुरुषोत्तममास समाप्त, दशाश्व–मेधघाट स्नान प्रारम्भ (काशी)
16 जून से 29 जून 2026 तक (द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
द्वितीया	मंगलवार	16.06.2026	चन्द्रदर्शन, बुढ़वामंगल
तृतीया	बुधवार	17.06.2026	रम्भातीजव्रत, श्रीमहाराणाप्रतापजयन्ती 487वीं
चतुर्थी	गुरुवार	18.06.2026	शहीदी गुरुअर्जुनदेव, रानीझांसीपुण्य
पंचमी	शुक्रवार	19.06.2026	श्रुतिपंचमी जैन
षष्ठी	शनिवार	20.06.2026	अरण्यषष्ठी, विन्ध्यवासिनीपूजा
सप्तमी	रविवार	21.06.2026	विश्वयोगदिवस, बड़पूजा (भिंड)
अष्टमी	सोमवार	22.06.2026	श्रीदुर्गाष्टमी, देवीधूमावती जयन्ती, मेला क्षीरभवानी
नवमी	मंगलवार	23.06.2026	श्रीमहेशनवमी, दहीचूड़ामहोत्सव प्रारम्भ
दशमी	बुधवार	24.06.2026	श्रीगंगादशहरा, श्रीरामेश्वरप्रतिष्ठादिवस, बटुकभैरवजयंती
एकादशी	गुरुवार	25.06.2026	निर्जलाएकादशीव्रतसर्वे, भीमसैनीग्यारस
द्वादशी	शुक्रवार	26.06.2026	चम्पकद्वादशी, नशाविरोधदिवस, अहिल्याबाईहोलकर जं0
त्रयोदशी	शनिवार	27.06.2026	शनिप्रदोषव्रत, सावित्रीव्रतारम्भ
पूर्णिमा	सोमवार	29.06.2026	पूर्णिमाव्रत, संतकबीरजयंती, वटसावित्रीव्रतपूर्ण

30 जून से 14 जुलाई 2026 तक (आषाढ़ कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	30.06.2026	गुरुगोविन्दसिंहजयंती
प्रतिपदा	बुधवार	01.07.2026	डॉक्टर्स डे
तृतीया	शुक्रवार	03.07.2026	पंचम प्रारम्भ 24.44, चतुर्थी चन्द्रोदय 21.49
चतुर्थी	शनिवार	04.07.2026	श्रीविवेकानंद पुण्यः
सप्तमी	मंगलवार	07.07.2026	कालाष्टमी व्रत
अष्टमी	बुधवार	08.07.2026	पंचक समाप्त 15.59
नवमी	गुरुवार	09.07.2026	गुरुहरकिशनजयंती
दशमी	शुक्रवार	10.07.2026	योगिनीएकादशीव्रतस्मार्त, बाबादेवरहा पुण्यः
द्वादशी	शनिवार	11.07.2026	योगिनी एकादशीव्रत वैष्णव, जनसंख्यादिवस, रोहिणी व्रत
त्रयोदशी	रविवार	12.07.2026	प्रदोषव्रत, मासशिवरात्रिव्रत
चतुर्दशी	सोमवार	13.07.2026	स्वामीकल्याणदेव पुण्यः (शुक्रताल)
अमावस्या	मंगलवार	14.07.2026	अन्वा, देवपितृकार्य अमापुण्यः
15 जुलाई से 29 जुलाई 2026 तक (आषाढ़ शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	15.07.2026	चन्द्रदर्शन, गुप्तनवरात्रविधान प्रा0
द्वितीया	गुरुवार	16.07.2026	श्रीजगन्नाथजी रथयात्रा पुरी, मनोरथ 2
तृतीया	शुक्रवार	17.07.2026	गुडीचा उत्सव (पुरी), श्री बल्लभाचार्यपुण्यः, स्वामी विवेकानंदपुण्यः
पंचमी	शनिवार	18.07.2026	हेरा पंचमी (उड़ीसा), द्वारिकाधीश पाटोत्सव
षष्ठी	रविवार	19.07.2026	कौमारिका षष्ठी, महावीर स्वामी गर्भकल्याणक जैन
सप्तमी	सोमवार	20.07.2026	विवस्वतसप्तमी सूर्यपूजा
नवमी	बुधवार	22.07.2026	अष्ट्राह्निका जैन, भड्डली नवमी, मेलाशरीफभवानी
नवमी	गुरुवार	23.07.2026	श्रीतिलक–चन्द्रशेखरआजादजयंती
दशमी	शुक्रवार	24.07.2026	उल्टारथ (पुरी) बहुडायात्रापुरी
एकादशी	शनिवार	25.07.2026	शयनीएकादशीव्रतसर्वे, देवशयनोत्सव, यमनियमादि प्रा0
द्वादशी	रविवार	26.07.2026	प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	मंगलवार	28.07.2026	चौमासी चौदश, जैनमुनिनांचातुर्मास प्रा0
पूर्णिमा	बुधवार	29.07.2026	गुरुपूर्णिमा, व्यासपूजा, शिवश्यनोत्सव

30 जुलाई से 12 अगस्त 2026 तक (श्रावण कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
द्वितीया	शुक्रवार	31.07.2026	पंचक प्रारम्भ 6.34, अशून्यश्यनव्रतारम्भः
तृतीया	शनिवार	01.08.2026	श्रीतिलकपुण्यः
चतुर्थी	रविवार	02.08.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.22, फ्रेंडशिपडे
पंचमी	सोमवार	03.08.2026	नागपंचमी
षष्ठी	मंगलवार	04.08.2026	पंचक समाप्त 21.53
अष्टमी	गुरुवार	06.08.2026	कालाष्टमीव्रत
नवमी	शुक्रवार	07.08.2026	रोहिणीव्रत, गुरुहरकिशनजयंती, टैगोरपुण्यः
एकादशी	रविवार	09.08.2026	कामिकाएकादशीव्रतसर्वे, भारतीयक्रान्तिदिवस
द्वादशी	सोमवार	10.08.2026	प्रदोषव्रत, शेरदिवस
चतुर्दशी	मंगलवार	11.08.2026	मासशिवरात्रिव्रत, मेलारामतीर्थमंदिर जगन्नाथपुर झारखण्ड
अमावस्या	बुधवार	12.08.2026	हरियाली अमावस्या
13 अगस्त से 28 अगस्त 2026 तक (श्रावण शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	13.08.2026	नक्तव्रतारम्भ
द्वितीया	शुक्रवार	14.08.2026	चन्द्रदर्शन, सिंधारादूज, स्वामीकरपात्रीजी जयंती
तृतीया	शनिवार	15.08.2026	हरियाली तीज, मधुश्रवातीज, स्वर्ण गौरीव्रत
चतुर्थी	रविवार	16.08.2026	विनायक चतुर्थी, वरद ४, श्रवणतप जैन
पंचमी	सोमवार	17.08.2026	नागपंचमी देशाचारे, श्रीअमरनाथजी छड़ीयात्रा, श्रीकल्की जयंती
सप्तमी	बुधवार	19.08.2026	श्रीतुलसीदासजयंती
अष्टमी	गुरुवार	20.08.2026	श्री दुर्गाष्टमीमेला सिंध, मेलानयनादेवी चिंतपूणी (हि0प्र0)
नवमी	शुक्रवार	21.08.2026	बुजुर्गदिवस
एकादशी	रविवार	23.08.2026	पवित्रा एकादशीव्रतस्मार्त
द्वादशी	सोमवार	24.08.2026	दधित्यागव्रतारम्भ
द्वादशी	मंगलवार	25.08.2026	भौमप्रदोषव्रत
त्रयोदशी	बुधवार	26.08.2026	ह्यग्रीवोत्पत्तिदर्शन, भदैनी मंदिर में पूजादर्शन, ओनम (केरल)
चतुर्दशी	गुरुवार	27.08.2026	पंचक प्रारम्भ 13.31, सत्यव्रत
पूर्णिमा	शुक्रवार	28.08.2026	पूर्णिमा, रक्षाबंधन, ऋषितर्पण, श्रीगायत्री जयंती, अमरनाथदर्शन, कोकिलाव्रत, संस्कृतदिवस

29 अगस्त से 11 सितम्बर 2026 तक (भाद्रपद कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	29.08.2026	श्रवणतप पूर्ण, अगस्त तारा उदय
द्वितीया	रविवार	30.08.2026	अशून्यशयनव्रतपूर्ण, श्रीभीमचण्डी विन्ध्याजयन्ती
तृतीया	सोमवार	31.08.2026	पंचक समाप्त 27.23 कज्जली 3,बहुलाचतुर्थीव्रत
चतुर्थी	मंगलवार	01.09.2026	रक्षापंचमी (उड़ीसा)
पंचमी	बुधवार	02.09.2026	चन्दनषष्ठीव्रत चन्द्रोदय 21.43, ललहीछटि,
सप्तमी	गुरुवार	03.09.2026	द्रोणमेलादनकौर प्रारम्भ
अष्टमी	शुक्रवार	04.09.2026	श्रीकृष्णजन्माष्टमीव्रतोत्सव, चन्द्रोदय 23.26, संतज्ञानेश्वर जयन्ती
नवमी	शनिवार	05.09.2026	गोगानवमी, नन्दोत्सवः नन्दगाँव–बरसाना, शिक्षकदिवस, डॉ0 राधाकृष्णजयंती
एकादशी	सोमवार	07.09.2026	अजाएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	मंगलवार	08.09.2026	प्रदोषव्रत, गोवत्सपूजा, बछबारस, विश्वसाक्षरतादिवस, स्वामीशिवानन्द जयंती
त्रयोदशी	बुधवार	09.09.2026	श्रीकृष्णजी छटीपूजन, पन्तजयंती, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	गुरुवार	10.09.2026	अघोरा चौदस, कैलाशयात्रा कश्मीर, पितृकार्ये अमावस्या, पिठोरी अमावस्या
अमावस्या	शुक्रवार	11.09.2026	स्नानादिदेवकार्ये अमावस्या, , मेला सुथरेशाह दिल्ली, विनोबा जयन्ती, सतीपूजाअग्रवंसे, कल्पसूत्रपाठ जैन

12 सितम्बर से 26 सितम्बर 2026 तक (भाद्रपद शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	12.09.2026	नक्तव्रत पूर्ण, चन्द्रदर्शन
द्वितीया	रविवार	13.09.2026	सामवेदीयउपाकर्म, देवतिथि असम, श्रीवाराहजयंती
तृतीया	सोमवार	14.09.2026	हरितालिकातीज व्रत, श्रीगणेशजयंती, पत्थर चौथ, कलंकचौथ, चन्द्रदर्शन निषेध, हिन्दीदिवस
चतुर्थी	मंगलवार	15.09.2026	शिवाचतुर्थी, ऋषिपंचमी, जैनसंवत्सरी, पर्यूषणपर्वारम्भ
षष्ठी	गुरुवार	17.09.2026	सूर्यषष्ठीव्रत, बलदेवछटि, वाराणसी महालक्ष्मीव्रतारम्भ
सप्तमी	शुक्रवार	18.09.2026	मुक्ताभरण संतान सप्तमी
अष्टमी	शनिवार	19.09.2026	महालक्ष्मीव्रत समाप्त, श्रीराधाष्टमी व्रतोत्सव, श्रीदधीचजयन्ती,
नवमी	रविवार	20.09.2026	श्रीचन्दनवमी, श्रीमद्भागवत् सप्ताह प्रा0
दशमी	सोमवार	21.09.2026	श्रीनवलदुर्गमेला रामदेवजी
एकादशी	मंगलवार	22.09.2026	जलझूलनीएकादशीव्रत सर्वे, फूलडोलमेला
द्वादशी	बुधवार	23.09.2026	पंचक प्रारम्भ 21.51, श्रीवामन जयन्ती, दधित्याग व्रत पूर्ण
त्रयोदशी	गुरुवार	24.09.2026	प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	शुक्रवार	25.09.2026	अनन्त चतुर्दशी, श्रीगणेशविसर्जन
पूर्णिमा	शनिवार	26.09.2026	प्रौष्ठपदीपूर्णिमा, महालयारम्भश्राद्ध प्रारम्भ, कुमारीसंध्या पूजनारम्भ

27 सितम्बर से 10 अक्टूबर 2026 तक (आश्विन कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	27.09.2026	पितृपक्षारम्भः, प्रतिपदा श्राद्धं
द्वितीया	सोमवार	28.09.2026	पंचक समाप्त 10.15, द्वितीया श्राद्धं, भगतसिंह जयंती
तृतीया	मंगलवार	29.09.2026	तृतीया श्राद्ध, चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 19.42
चतुर्थी	बुधवार	30.09.2026	चतुर्थी श्राद्ध, बैंक अर्द्धवार्षिक लेखाबन्दी
पंचमी	गुरुवार	01.10.2026	पंचमी–श्राद्ध–षष्ठी श्राद्ध, रक्तदान दिवस, रोहिणीव्रत
षष्ठी	शुक्रवार	02.10.2026	सप्तमी का श्राद्ध, श्रीगांधीजी व शास्त्रीजी जयंती
सप्तमी	शनिवार	03.10.2026	अष्टमी का श्राद्ध, जीवित्पुत्रिकाव्रत, कालाष्टमीव्रत
नवमी	रविवार	04.10.2026	मातृनवमी, सौभाग्यवतीनां श्राद्ध, पशुकल्याण दिवस
दशमी	सोमवार	05.10.2026	दशमी श्राद्ध, वरिष्ठनागरिकदिवस
एकादशी	मंगलवार	06.10.2026	इन्दराएकादशीव्रतस्मार्त,एकादशीश्राद्ध, श्रीरामबरात मेला
द्वादशी	बुधवार	07.10.2026	सन्यासीनां द्वादशीश्राद्ध
त्रयोदशी	गुरुवार	08.10.2026	प्रदोषव्रत, त्रयोदशीश्राद्धं, वायुसेनादिवस, मासशिवरात्रि् व्रत
चतुर्दशी	शुक्रवार	09.10.2026	असाम्यकदुर्मरण श्राद्ध, देवी कात्यायनी जयन्ती, विश्वडाक दिवस, चतुर्दशीश्राद्ध
अमावस्या	शनिवार	10.10.2026	सर्वपितृअमावस्याश्राद्ध, भूलेबिसरो का श्राद्ध, पितृविसर्जन
11 अक्टूबर से 26 अक्टूबर 2026 तक (आश्विन शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	11.10.2026	नवरात्रारम्भ, कलशस्थापन,मातामहश्राद्ध, श्रीअग्रसेन ज0
द्वितीया	सोमवार	12.10.2026	चन्द्रदर्शन
तृतीया	मंगलवार	13.10.2026	सिन्दूरतृतीया
चतुर्थी	बुधवार	14.10.2026	पंश्चिमास्त शुक्र
पंचमी	गुरुवार	15.10.2026	उपांगललिता पंचमीव्रत
षष्ठी	शुक्रवार	16.10.2026	विश्वखाद्यदिवस, सरस्वती आवाहनम्
सप्तमी	शनिवार	17.10.2026	सरस्वती पूजनं, जैनमुनिपुष्कर जयन्ती
सप्तमी	रविवार	18.10.2026	सरस्वती बलिदानं, भद्रकाल्यावतार, नवपदओली प्रा0 जैन
अष्टमी	सोमवार	19.10.2026	सरस्वती विसर्जन, श्रीदुर्गाष्टमीपूजा, मेला ज्वालामुखी तारादेवी
नवमी	मंगलवार	20.10.2026	विजयादशमी, रावणदाह, नीलकंठ दर्शन, अपराजिता पूजा
दशमी	बुधवार	21.10.2026	पंचक प्रारंभ 6.54, भरतमिलाप, श्रीमाध्वाचार्य जयंती,
एकादशी	गुरुवार	22.10.2026	पापांकुशाएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	शुक्रवार	23.10.2026	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	शनिवार	24.10.2026	संयुक्तराष्ट्र दिवस
चतुदर्शी	रविवार	25.10.2026	सत्यव्रत पंचक समाप्त 19.21, शाकुंभरीदेवीदर्शन, शरद पूर्णिमा कोजागरीव्रत
पूर्णिमा	सोमवार	26.10.2026	उदयापूर्णिमा मेला, महर्षिवाल्मीकि जयन्ती, कार्तिकस्नान प्रा0

27 अक्टूबर से 09 नवम्बर 2026 तक (कार्तिक कृष्ण पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	27.10.2026	कृष्कभूमिपूजा, गुरुरामदास जयंती
तृतीया	बुधवार	28.10.2026	रोहिणीव्रत
चतुर्थी	गुरुवार	29.10.2026	करवाचौथव्रत चन्द्रोदय 20.13
पंचमी	शुक्रवार	30.10.2026	विश्वबचत दिवस
षष्ठी	शनिवार	31.10.2026	सरदार पटेल जयंती, एकता दिवस, इन्द्राजी पुण्य
सप्तमी	रविवार	01.11.2026	अहोई अष्टमीव्रत चन्द्रोदय 23.36, पूजा तारोदय कालाष्टमी
एकादशी	गुरुवार	05.11.2026	रमाएकादशीव्रतसर्वे, गोवत्सद्वादशी, गोसेवा, नीरांजनं
द्वादशी	शुक्रवार	06.11.2026	प्रदोषव्रत, यमदीपदानं, धनत्रयोदशी, श्रीधन्वन्तरी जयंती
त्रयोदशी	शनिवार	07.11.2026	मासशिवरात्रि, सर्वणमयीअन्नपूर्णा दर्शनकाशी
चतुर्दशी	रविवार	08.11.2026	महालक्ष्मीपूजन, दीपावली, प्रदोषेदीपोत्सव पितृकार्ये अमावस्या, नरक चतुर्दशी, स्वामीरामतीर्थजन्म–निर्वाण दिवस
अमावस्या	सोमवार	09.11.2026	कार्तिक अमावस्या, महावीरनिर्वाण जैन, दयानंदपुण्य पुष्कर मेला प्रारम्भ

10 नवम्बर से 24 नवम्बर 2026 तक (कार्तिक शुक्ल पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	10.11.2026	अन्नकूट गोवर्धनपूजा, बलिपूजा, गोक्रीड़ा, चन्द्रदर्शन
द्वितीया	बुधवार	11.11.2026	भाईदूज, यमद्वितीया, चित्रगुप्त विश्वकर्मा पूजा, मे0 बटेश्वर
तृतीया	गुरुवार	12.11.2026	राष्ट्रीय प्रसारण दिवस
पंचमी	शनिवार	14.11.2026	सौभाग्यज्ञान पंचमी, नहायखायछटिप्रारम्भ, बाल दिवस
षष्ठी	रविवार	15.11.2026	सूर्यषष्ठी, डालाछटिपूजा, जनजातीयगौरव दिवस
सप्तमी	सोमवार	16.11.2026	सुबहकाअर्घ्य, सहस्त्रार्जुन जयंती
अष्टमी	मंगलवार	17.11.2026	पंचक प्रारम्भ 15.25, गोपाष्टमीपर्व, लाजपतराय पुण्य
नवमी	बुधवार	18.11.2026	अक्षय–आंवला–कूष्माण्डनवमी, जुगलजोड़ीपरिक्रमा वृन्दावन
नवमी	गुरुवार	19.11.2026	इन्दिरागांधी जयंती
दशमी	शुक्रवार	20.11.2026	देवप्रबोधिनीएकादशीस्मार्त, आशादशमी, आरोग्य व्रत,
द्वादशी	शनिवार	21.11.2026	पंचक समाप्त 29.54, तुलसी विवाह, श्रीखाटूश्याम जयन्ती
त्रयोदशी	रविवार	22.11.2026	प्रदोषव्रत, जैनदिवाकरचौथ जयन्ती, पुष्करराजरेणुकातीर्थ
चतुदर्शी	सोमवार	23.11.2026	बैकुण्ठचतुर्दशी
पूर्णिमा	मंगलवार	24.11.2026	कार्तिकीपूर्णिमा स्नानपूर्ण, श्रीगुरुनानक जयंती, गढ़गंगा

25 नवम्बर से 08 दिसम्बर 2026 तक (मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	25.11.2026	देवदर्शन, समय परिवर्तन, भक्त मीराबाई जयंती
द्वितीया	गुरुवार	26.11.2026	संविधान दिवस
तृतीया	शुक्रवार	27.11.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 20.13
पंचमी	शनिवार	28.11.2026	श्रीमायानन्दचैतन्यजयंती
अष्टमी	मंगलवार	01.12.2026	श्रीमहाकाल भैरवाष्टमी
दशमी	गुरुवार	03.12.2026	श्रीमहावीरस्वामी दीक्षाकल्याणंक
एकादशी	शुक्रवार	04.12.2026	उत्पत्तिएकादशीव्रतसर्वे, नौसेना दिवस
त्रयोदशी	रविवार	06.12.2026	प्रदोषव्रत, डॉ0 अम्बेड़करपुण्यः
चतुर्दशी	सोमवार	07.12.2026	श्रीबालाजीजयंती, सशस्त्र सेना झंडा दिवस, मासशिवरात्रि
अमावस्या	मंगलवार	08.12.2026	अन्वा अमापुण्यः
09दिसम्बर से 23 दिसम्बर 2026 तक (मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	10.12.2026	मानवाधिकार दिवस, चन्द्र दर्शन
चतुर्थी	रविवार	13.12.2026	वैनायकीचतुर्थीव्रत
पंचमी	सोमवार	14.12.2026	पंचक प्रारंभ 22.31, श्रीपंचमी, बिहारी पंचमी, श्रीरामजानकी विवाहोत्सव, श्रीबांकेबिहारी प्राकटयोत्सव,
षष्ठी	मंगलवार	15.12.2026	स्कन्दषष्ठी, चम्पाषष्ठी, पटेल पुण्य
सप्तमी	बुधवार	16.12.2026	मित्रसप्तमी, नरसीमेहता जयंती, धनुखरमास
नवमी	शुक्रवार	18.12.2026	नन्दिनीनवमी, जैनदिवाकरचौथ पुण्यः
दशमी	शनिवार	19.12.2026	पंचक सं0 15.57 दशादित्यव्रत
एकादशी	रविवार	20.12.2026	मोक्षदाएकादशीव्रतसर्वे, मौनीग्यारस जैन, श्रीगीताजयंती
द्वादशी	सोमवार	21.12.2026	अखण्डाद्वादशी, प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	मंगलवार	22.12.2026	पिशाचमोचन श्राद्ध, रोहिणीव्रत
चतुर्दशी	बुधवार	23.12.2026	सत्यव्रत प्रर्णिमा, श्रीदत्तात्रेयजयंती, कपर्दीश्वर यात्रा दर्शनकाशी, श्रीविद्याजयंती, अन्नपूर्णा जयंती, श्रद्धानंद बलिदान दिवस

24 दिसम्बर से 07 जनवरी 2027 तक (पौष कृष्ण पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	गुरुवार	24.12.2026	राष्ट्रीय उपभोक्ता दिवस
द्वितीया	शुक्रवार	25.12.2026	क्रिसमस डे (बड़ा दिन), मदनमोहनमालवीय जयंती, श्री अटल जयंती
तृतीया	शनिवार	26.12.2026	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 20.15, वीरबालदिवस
अष्टमी	गुरुवार	31.12.2026	अष्टकाश्राद्ध
दशमी	शनिवार	02.01.2027	पौषीदशमी जैन, श्रीसंद्य, श्रीपार्श्वनाथचन्द्रभुज जयंती
एकादशी	रविवार	03.01.2027	सफलाएकादशीव्रतसर्वे,, कल्पवास प्रारम्भ प्रयागराज
त्रयोदशी	मंगलवार	05.01.2027	प्रदोषव्रत, बाबा नागपाल पुण्यः, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	बुधवार	06.01.2027	श्रीजयप्रभविजय पुण्यः त्रिस्तुतिजैन, पत्रकार दिवस
अमावस्या	गुरुवार	07.01.2027	पौषीअमावस्यापुण्यः, बकुलामावस
08 जनवरी से 22 जनवरी 2027 तक (पौष शुक्ल पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
द्वितीया	शनिवार	09.01.2027	चन्द्रदर्शन, खिचड़ीमहोत्सव प्रा0,प्रवासी भारतीय दिवस
तृतीया	रविवार	10.01.2027	पंचक प्रा0 28.32, श्रीयतीन्द्रसूरीश्वरपुण्यः विश्व हिन्दी दिवस
तृतीया	सोमवार	11.01.2027	श्रीशास्त्रीजी पुण्य, सिद्धेश्वर मेला बीजापुर
चतुर्थी	मंगलवार	12.01.2027	स्वामी विवेकानन्द जयंती, राष्ट्रीय युवा दिवस
पंचमी	बुधवार	13.01.2027	56 भोग, गरुड़गोविन्द (मथुरा), लोहड़ी पंजाब
षष्ठी	गुरुवार	14.01.2027	मेला मंदार बिहार, खरमास समाप्त, पोंगल पर्व
सप्तमी	शुक्रवार	15.01.2027	पंचक समाप्त 23.50, राजेन्द्रसूरीश्वरजन्म पुण्य, श्रीगुरुगोविन्दसिंह जयंती, श्रीनंदबाबा ज0, सेना दिवस
दशमी	सोमवार	18.01.2027	शाम्बदशमी (उड़ीसा), खरतरगच्छ जैन
एकादशी	मंगलवार	19.01.2027	त्रिस्पर्शायोगवती पुत्रदाएकादशीव्रतसर्वे, कल्पवास समाप्त
द्वादशी	मंगलवार	19.01.2027	द्वादशीक्षय, राममंदिर प्रतिष्ठा दिवस, रोहिणी व्रत
त्रयोदशी	बुधवार	20.01.2027	प्रदोषव्रत
पूर्णिमा	शुक्रवार	22.01.2027	पौषीपूर्णिमापुण्यः, माघस्नानारंभः, देवीशाकुम्भरी जयंती

23 जनवरी से 06 फरवरी 2027 तक (माघ कृष्ण पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**थ्दनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	23.01.2027	काशिस्थ दशाश्वमेधघाट स्नानारम्भः, नेताजीसुभाषचन्द्र जयंती, पराक्रम दिवस
द्वितीया	रविवार	24.01.2027	उत्तर प्रदेश दिवस
तृतीया	सोमवार	25.01.2027	संकण्ठी, श्रीगणेशचतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.14
पंचमी	मंगलवार	26.01.2027	78वाँ भारतीय गणतंत्र दिवस
सप्तमी	गुरुवार	28.01.2027	श्रीरामानन्दाचार्य जयंती, लाजपतराय जयंती
अष्टमी	शुक्रवार	29.01.2027	कालाष्टमीव्रत, अष्टका श्राद्ध
नवमी	शनिवार	30.01.2027	श्रीगांधीजीपुण्यः, सर्वोदय पखवारा शुरू
एकादशी	मंगलवार	02.02.2027	षट्तिलाएकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	बुधवार	03.02.2027	प्रदोषव्रत, श्रीशीतलनाथ जयंती जैन
त्रयोदशी	गुरुवार	04.02.2027	मेरुत्रयोदशी, कल्याणंक जैन, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	शुक्रवार	05.02.2027	रटन्तीकालिका पूजन
अमावस्या	शनिवार	06.02.2027	शनैश्वरी मौनीअमावस्या, स्नान मेला, प्रयागराज
07 फरवरी से 20 फरवरी 2027 तक (माघ शुक्ल पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	07.02.2027	पंचक प्रा0 10.33, गुप्तनवरात्रिविधान प्रा0
द्वितीया	सोमवार	08.02.2027	चन्द्रदर्शन, बाबारामदेव बीज, बाबालालदयाल जयंती
तृतीया	मंगलवार	09.02.2027	गौरी तृतीया
चतुर्थी	बुधवार	10.02.2027	तिल वरद्चतुर्थी, कुन्दपुष्पादिसे देवपूजन
पंचमी	गुरुवार	11.02.2027	पंचक समाप्त 29.41, वसन्तपंचमी, श्रीपंचमी, श्रीसरस्वती जयंती, सरछोटूराम जयंती, बाँकेबिहारी मंदिर में फागमहोत्सव प्रारम्भ
षष्ठी	शुक्रवार	12.02.2027	मन्दारषष्ठी, दारिद्रयहरण्षष्ठी, शीतला 6
सप्तमी	शनिवार	13.02.2027	अचला सप्तमी
नवमी	सोमवार	15.02.2027	रोहिणी व्रत
दशमी	मंगलवार	16.02.2027	दामोदरप्राकट्योत्सवः वृन्दावन,
एकादशी	बुधवार	17.02.2027	जयाएकादशीव्रतसर्वे, वेणेश्वर में प्रा0 डूंगरपुर
द्वादशी	गुरुवार	18.02.2027	भीष्मद्वादशी, प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	शुक्रवार	19.02.2027	कल्पादि मरूमहोत्सव जैसलमेर मेला विराटनगर
चतुर्दशी	शनिवार	20.02.2025	स्नानादि माघी पूर्णिमा, गुरुरविदास जयंती, श्रीरामचरण स्नेही मेला, ललिता जयंती

21 फरवरी से 08 मार्च 2027 तक (फाल्गुन कृष्ण पक्ष) वसन्त ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	21.02.2027	मातृभाषा दिवस
चतुर्थी	बुधवार	24.02.2027	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.00
पंचमी	गुरुवार	25.02.2027	भागवतभवनप्रतिष्ठादिवस, जन्मभूमि मथुरा मातायशोदा जयंती, चन्द्रशेखर पुण्य
षष्ठी	शुक्रवार	26.02.2027	महाकालमें शिवरात्रि प्रा0 उज्जैन
सप्तमी	शनिवार	27.02.2027	महाकाल में पूजा विशेष
अष्टमी	रविवार	28.02.2027	श्रीजानकीव्रत, कालाष्टमी, अष्टका श्राद्ध, राष्ट्रीय विज्ञान दिवस
नवमी	सोमवार	01.03.2027	समर्थगुरु रामदासनवमी
दशमी	मंगलवार	02.03.2027	महर्षिदयानन्द जयंती
एकादशी	गुरुवार	04.03.2027	विजयाएकादशीव्रतसर्वे, एकादशी सठियागई
द्वादशी	शुक्रवार	05.03.2027	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	शनिवार	06.03.2027	पंचक प्रारम्भ 17.30, महाशिवरात्रिव्रत, द्वादश ज्योतिर्लिंग पूजा, श्रीवैद्यनाथ जयंती, 4 प्रहर रात्रिपूजन
अमावस्या	सोमवार	08.03.2027	अन्वाः अमापुण्यः, शिवखप्परपूजा, विश्व महिला दिवस
09 मार्च से 22 मार्च 2027 तक (फाल्गुन शुक्ल पक्ष) वसंतऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	09.03.2027	चन्द्रदर्शन
द्वितीया	बुधवार	10.03.2027	फुलेरादूज, लोकप्रसिद्धिमुहूर्त, श्रीरामकृष्णपरमहंसज0
तृतीया	गुरुवार	11.03.2027	पंचक समाप्त 11.19, पं0 लेखराम वीर तृतीया
चतुर्थी	शुक्रवार	12.03.2027	अविघ्नकरव्रत
षष्ठी	रविवार	14.03.2027	देवी दंतेश्वरी मेला दंतेवाड़ा, रोहिणी व्रत
सप्तमी	सोमवार	15.03.2027	अष्ट्राह्निका प्रा0 जैन, मीन खरमास प्रारम्भ
अष्टमी	मंगलवार	16.03.2027	संतदादूदयाल जयन्ती, होलाष्टक प्रारम्भ
नवमी	बुधवार	17.03.2027	लट्ठमार होली नन्दगाँव, विश्व दिव्यांग दिवस
एकादशी	गुरुवार	18.03.2027	आमलकीएकादशीव्रतस्मार्त
त्रयोदशी	शनिवार	20.03.2027	शनि प्रदोषव्रत, होली रमणरेती वृन्दावन
चतुर्दशी	रविवार	21.03.2027	होलिका दहन, सत्यव्रत पूर्णिमा
पूर्णिमा	सोमवार	22.03.2027	पूर्णिमापुण्यः, छारेंडी, घुलैण्डी, चैतन्य महाप्रभु जयंती, अष्टका श्राद्ध

23 मार्च से 06 अप्रैल 2027 तक (चैत्र कृष्ण पक्ष) वसंतऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व–त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	23.03.2027	गणगौर पूजनारम्भ (राज0), शहीदी दिवस
द्वितीया	बुधवार	24.03.2027	संततुकाराम जयन्ती, रंगजीमंदिरोत्सव वृन्दावन
तृतीया	गुरुवार	25.03.2027	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.45
चतुर्थी	शुक्रवार	26.03.2027	गुड फ्राइडे
पंचमी	शनिवार	27.03.2027	श्रीरंग पंचमी
षष्ठी	रविवार	28.03.2027	एकनाथ षष्ठी, नौचन्दी मेला प्रा0 मेरठ, इस्टर संडे
सप्तमी	सोमवार	29.03.2027	शीतला पूजन (बासौड़ा)
अष्टमी	मंगलवार	30.03.2027	शीतलाष्टमी (माता पूजन), श्रीऋषभदेव जयंती, कालाष्टमी, अष्टका श्राद्ध, रंगजी रथोत्सव
दशमी	गुरुवार	01.04.2027	दशमाता पूजन, बैंक वार्षिक लेखाबन्दी
एकादशी	शुक्रवार	02.04.2027	पंचक प्रारम्भ 25.28, पापमोचनीएकादशीव्रतस्मार्त्त
त्रयोदशी	रविवार	04.04.2027	रंगत्रयोदशी, प्रदोषव्रत, वारूणीपर्व
चतुर्दशी	सोमवार	05.04.2027	मास शिवरात्रि
अमावस्या	मंगलवार	06.04.2027	अन्वा अमापुण्यः, चान्द्रवर्षसमाप्त, श्रीरस्तु

आरती एवं वन्दना

आरती श्री गणेशजी की

जय गणेश, जय गणेश जय गणेश देवा। माता जाकी पार्वती, पिता महादेवा।।
एकदन्त दयावन्त, चार भुजा धारी। मस्तक सिन्दूर सोहे, मूसे की सवारी।। जय गणेश ...।।
अन्धन को आँख देत, कोढ़िन को काया। बाँझन को पुत्र देत, निर्धन को माया।। जय गणेश ...।।
लड्डुन का भोग लगे, सन्त करें सेवा। हार चढ़ें, फूल चढ़ें और चढ़े मेवा।। जय गणेश ...।।
दीनन की लाज रखो शम्भू–सुत वारी। कामना को पूर्ण करो हम बलिहारी।। जय गणेश ...।।

आरती श्रीरामचन्द्रजी की

जगमग जगमग जोत जली है। राम आरती होन लगी है।।
भक्ति का दीपक प्रेम की बाती। आरति संत करें दिन राती।।
आनन्द की सरिता उभरी है। जगमग जगमग जोत जली है।।
कनक सिंहासन सीय समेता। बैठहिं राम होइ चित चेता।।
वाम भाग में जनक लली है। जगमग जगमग जोत जली है।।
आरति हनुमत के मन भावे। राम कथा नित शंकर गावे।।
सन्तों की ये भीड़ लगी है। जगमग जगमग जोत जली है।।

आरती श्रीरामायणजी की

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की।। आरती श्री ...
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीक बिग्यान बिशारद।।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी।। आरती श्री ...
गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की। आरती श्री ...
गावत संतत संभु भवानी। अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुंडि गरुड़ के ही की।। आरती श्री ...
कलिमल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की।। आरती श्री ...

आरती भगवान जगदीश्वर की

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे,
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे।। ॐ जय ...।।
जो ध्यावै फल पावै, दुख विनसै मन का।। स्वामी ...।।
सुख–सम्पति घर आवै, कष्ट मिटै तन का।। ॐ जय ...।।
मात–पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी।। स्वामी ...।।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी।। ॐ जय ...।।
तुम पूरन परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।। स्वामी ...।।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ॐ जय ...।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।। स्वामी ...।।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।। ॐ जय ...।।
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।। स्वामी ...।।
किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमती।। ॐ जय ...।।
दीनबन्धु दुख हरता, तुम ठाकुर मेरे।। स्वामी ...।।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ॐ जय ...।।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।। स्वामी ...।।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।। ॐ जय ...।।
तन, मन, धन, सब कुछ है तेरा।। स्वामी ...।।
तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा।। ॐ जय ...।।
श्यामसुन्दरजी की आरति जो कोई नर गावै।। स्वामी ...।।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावै।। ॐ जय ...।।

आरती सरस्वतीजी की

शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।
जय सरस्वती ज्ञानदायिनी,
कमल हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
ऋद्धि सिद्धि विवेकदायिनी,
कुमति शूल विनाशनी।
देवी मंद सुहास वर्षनी,
हृदय हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
मधुर काव्य कला,
प्रणव नाद विकासिनी।
भगवती संगीत वर दे,
भुवन मानस वासिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।

आरती शिवजी की

कर्पूर गौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

जय शिव ओंकारा प्रभु भज शिव ओंकारा, ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा। ॐ हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै, हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै। ॐ हर हर महादेव।।
दो भुज चारु चतुर्भुज दस भुज ते सोहै, तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहै। ॐ हर हर महादेव।।
अक्षमाला वनमाला मुण्डमाला धारी, चंदन मृगमद सोहै भोले शुभकारी। ॐ हर हर महादेव।।
श्वेताम्बर, पीताम्बर, बाघम्बर अंगे, सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे। ॐ हर हर महादेव।।
कर मध्ये सुकमण्डलु चक्र शूलधारी, सुखकारी दुखहारी जग पालन कारी। ॐ हर हर महादेव।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका, प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका। ॐ हर हर महादेव।।
त्रिगुणस्वामी की आरती जो कोई नर गावै, कहत शिवानन्द स्वामी वांछित फल पावै। ॐ हर हर महादेव।।

आरती श्रीहनुमानजी की

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।।
जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग–दोष जाके निकट न झाँकै।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। सन्तन के प्रभु सदा सहाई।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सिया सुधि लाये।।
लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।
लंका जारि असुर संहारे। सियाराम के काज संवारे।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।
पैठि पताल तोरि जमकारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।
बायें भुजा असुरदल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जै जै जै हनुमान उचारें।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरती करत अंजना माई।।
जो हनुमानजी की आरती गावै। बसि बैकुण्ठ परम पद पावै।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।। आरती ...

आरती सत्यनारायणजी की

ॐ जय लक्ष्मीरमणा, स्वामी जय लक्ष्मीरमणा।
सत्यनारायण स्वामी, जन–पातक–हरणा।। ॐ जय ...
रत्न जटित सिंहासन, अद्‌भुत छवि राजै।
नारद करत निराजन, घण्टा ध्वनि बाजै।। ॐ जय ...
प्रकट भये कलि कारण, द्विज को दरस दियो।
बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो।। ॐ जय. ...
दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी।
चन्द्रचूड़ एक राजा, तिनकी बिपति हरी।। ॐ जय ...
वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।
सो फल भोग्यो प्रभुजी, फिर अस्तुति कीन्हीं।। ॐ जय ...
भाव–भक्ति के कारण, छिन–छिन रूप धर्‌यो।
श्रद्धा धारण कीनीं, तिनको काज सर्‌यो।। ॐ जय ...
ग्वाल–बाल सँग राजा, बन में भक्ति करी।
मनवांछित फल दीन्हों, दीनदयालु हरी।। ॐ जय ...
चढ़त प्रसाद सवायो, कदली फल मेवा।
धूप दीप तुलसी से, राजी सत्यदेवा।। ॐ जय ...
सत्यनारायणजी की आरती, जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी वांछित फल पावै।। ॐ जय ...

आरती अम्बेजी की

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवजी।। ॐ जय अम्बे ...
मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्र वदन नीको।। ॐ जय अम्बे ...
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै।। ॐ जय अम्बे ...
केहरि वाहन राजत, खड्‌ग खपर धारी। सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुख हारी।। ॐ जय अम्बे ...
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर, सम राजत ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
शुम्भ–निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती। धूम्र विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती।। ॐ जय अम्बे ...
चण्ड–मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे। मधु–कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे।। ॐ जय अम्बे ...
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। आगम–निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।। ॐ जय अम्बे ...
चौसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरू। बाजत ताल मृदंगा, अरु बाजत डमरू।। ॐ जय अम्बे ...
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता।। ॐ जय अम्बे ...
भुजा चार अति शोभित, वर–मुद्रा धारी। मनवांछित फल पावत, सेवत नर–नारी।। ॐ जय अम्बे ...
कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती। मालकेतु में राजत, कोटि रतन ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै। कहत शिवानन्द स्वामी, सुख–सम्पति पावै।। ॐ जय अम्बे ...

श्री रामचन्द्रजी की स्तुति

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरण भवभय दारुणम्।
नव कंज लोचन, कंज मुख कर कंज पद कंजारुणम्।।
कंदर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरज सुन्दरम्।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि, नौमि जनक सुतावरम्।।
भजु दीनबंधु दिनेश दानव दैत्य वंश निकंदनम्।
रघुनन्द आनन्दकन्द कौशलचन्द दशरथ–नन्दनम्।।
सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदार अंग विभूषणम्।
आजानु भुज शर चाप धर संग्राम जित खरदूषणम्।।
इति वदति तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनम्।
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खलदल गंजनम्।।
मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।

आरती कुंजबिहारीजी की

आरती कुंज बिहारी की, गिरधर कृष्ण मुरारी की।
गले में बैजन्ती माला, बजावै मुरली मधुर बाला।
श्रवन में कुण्डल झलकाला।
नन्द के आनन्द, मोहन बृजचन्द, परमानन्द, राधिका रमण बिहारी की।। आरती कुंज ...

गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली, भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक,
चन्द्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।। आरती कुंज ...

कनकमय मोर मुकुट विलसै, देवता दर्शन को तरसै।
गगन से सुमन बहुत बरसें, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल छवि गोप कुमारी की।। आरती कुंज ...

जहाँ ते प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणि श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच,
हरै अघ कीच, चरण छवि श्री बनवारी की।। आरती कुंज ...

चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बाजती वृन्दावन वेणू।
चहुँ दिशि गोप ग्वाल धेनू, हंसत मृदुमन्द, चांदनी चन्द।
कटत भव फन्द, टेर सुन दीन दुखारी की।। आरती कुंज ...

आरती लक्ष्मीजी की

जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णू धाता।। जय लक्ष्मी ॰ ॰ ॰
उमा रमा ब्रह्माणी तुम ही जग–माता,
सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
दुर्गा रूप निरंजन सुख संपति दाता,
जो कोइ तुमको ध्यावत ऋधि सिधि धन पाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
तुम पाताल निवासिनि तुम ही शुभदाता,
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि भवनिधि की त्राता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
जिस घर तुम रहतीं तहँ सब सद्‌गुण आता,
सब संभव हो जाता, मन नहीं घबराता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
तुम बिन यज्ञ न होते वस्त्र न हो पाता,
खान–पान का वैभव सब तुम से आता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
शुभ गुण मन्दिर सुन्दर क्षीरोदधि जाता,
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहिं पाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰
श्रीलक्ष्मीजी की आरती जो कोई नर गाता,
उर आनन्द समाता पाप उतर जाता। जय लक्ष्मी ॰॰॰

आरती श्रीरामजी की

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ
आरती उतारूँ मैं तो तन मन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
कनक सिंहासन राजत जोरी–दसरथ नन्दन जनक किशोरी।
युगल छवी को सदा निहारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
वाम भाग शोभित जग जननी–चरण विराजत हैं सुत अंजनी।
इन चरणों में जीवन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
चरणों से निकली गंगा प्यारी– पावन करती है दुनियाँ सारी।।
इन चरणों को सदा पखारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
आरति हनुमत के मन भावै–रामकथा नित शिवजी गावै।
मैं सुन सुन निज जनम संवारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

आरती अवध बिहारी की

आरती अवध बिहारी की, लखन सिया जनक दुलारी की।
शीश पर क्रीट मुकुट सोहे। चंद्रिका की छवि मन मोहे।।
लखन सेवा बलिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
कपोलन पै अलकैं झलकें। अधर पै बिजली सी चमके।।
छवि कजरारे नयनन की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
अंग सब ज्यों निर्मल नीरा। भरत रिपुदलन महावीरा।।
चरण सेवा धनुधारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
जिए जुग श्यामलता जोरी। भजो मन सब माया तोरी।।
दरस हित युगल बिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

वंदना

जिस घर में हो आरती, चरण कमल चितलाय। वहाँ प्रभु वासा करें, स्वर्ग लोक से आय।।
कथा सदा होती रहे, सुनो वीर हनुमान। राम लखन सीता सहित, सदा करो कल्यान।।
बार बार वर माँगहुं, राम कृपा कर देहु। जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटे जनि नेहु।।
देवता सब आश्रम गये, शम्भु गये कैलाश। श्रोता–वक्ता जायेंगे, हरि सुमिरन की आस।।
मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर। अस विचार रघुवंश मनि, हरहु विषम भव भीर।।
हम तो कुछ जाने नहीं, तुम जानों रघुनाथ। सेवा पूजा वन्दना, सबहि तुम्हारे हाथ।।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, ग्रहण करो महाराज। कृपा दृष्टि अवलोकिए, शरण पड़े की लाज।।

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्या कुमारी च धीमहि तन्नो दुर्गे प्रचोदयात्।
ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णु प्रचोदयात्।
ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।
ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
ॐ वासुदेवाय विद्महे राधाबल्लभाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्।
ॐ दशरथाय विद्महे सीताबल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
ॐ रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमत प्रचोदयात्।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं। पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं सुरेश्वरः। यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे।

श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री

सूची 1 केवल पाठ हेतु

01. नारियल– (पानी वाला)
02. लाल कपड़ा 1 मीटर
03. सुपारी–5
04. धूपबत्ती
05. कलावा
06. रोली
07. कपूर (डली का)
08. इलायची 10 ग्राम
09. लौंग 10 ग्राम
10. देशी घी 250 ग्राम
11. मिश्री 100 ग्राम
12. सौंफ 50 ग्राम
13. काली मिर्च 10 ग्राम
14. गंगाजल
15. फल 5 तरह के
16. मिष्ठान
17. दूर्वा
18. तुलसी के पत्ते
19. रूई
20. पान साबुत 5
21. फूल हार 7
22. आम के पत्ते
23. कलश 1
24. थाली 4
25. लोटा 2
26. चम्मच 2

सूची 2 यदि पाठ के साथ यज्ञ भी हो

01. घी 500 ग्राम
02. हवन सामग्री 1 कि.ग्रा.
03. काले तिल 50 ग्राम
04. इन्द्र जौ 25 ग्राम
05. जौ 50 ग्राम
06. बेलगिरी 250 ग्राम
07. अगर 25 ग्राम
08. तगर 25 ग्राम
09. नागर मौथा 25 ग्राम
10. गोला साबुत 1
11. हवन के लिए लकड़ी ढाई कि.ग्रा. (आम/आक/ढाक की)
12. कच्ची खांड 250 ग्राम

अनिष्ट ग्रहों की शान्ति, घर परिवार में अमन चैन तथा जीवन का परम लक्ष्य भगवत्कृपा प्राप्ति हेतु रामायण/सुंदरकाण्ड पाठ के आयोजन हेतु हमें संपर्क कर सकते हैं –
सम्पर्क सूत्र– 0120–4305457 एवं 9811056467